राजा पन्नालाल गोवर्द्धनलाल ग्रंथमाला

नंददास

द्वितीय भाग

संपादक
उमाशंकर शुक्ल, एम० ए०
राजा पन्नालाल स्कॉलर

प्रकाशक
प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग

सिद्धांत पंचाध्यायी

जै जै जै श्री कृष्न, रूप, गुन, कर्म अपारा।
परम धाम, जग-धाम, परम अभिराम, उदारा॥
आगम, निगम, पुरान, स्मृती-गन जे इतिहासा।
अवर सकल बिद्या-बिनोद, जिहि प्रभु की उसासा॥
रूप, गंध, रस, सब्द, स्पर्स जे पंच बिषै बर। ५
महाभूत पुनि अंच, पवन, पानी, अंबर, धर॥
दस इंद्रिय अरु अहंकार, महतत्व, त्रिगुन, मन।
यह सब माया कर बिकार, कहैं परमहंस गन॥
सो माया जिन के अधीन नित रहत मृगी जस।
बिस्व-प्रभव, प्रतिपाल, प्रलै-कारक, आयस-बस॥ १०
जाग्रति, स्वप्न, प्रषुप्ति, धाम परब्रह्म प्रकासै।
इंद्रियगन मन-प्रान, इनहिं परमातम भासै॥
षट गुन अरु अवतार-धरन, नाराइन जोई।
सब कौ आश्रय,अवधि-भूत, नँद-नंदन सोई॥
सिसु, कुमार, पौगंड, धरम पुनि बलित, ललित लस। १५
धरमी, नित्य-किसोर, नवल चित-चोर एक रस॥
जे जग मैं जगदीस कहैं, अति रहैं गरब भरि।
सब कौ कियौ निरोध, अपन निज सहज खेल करि॥

महा मोहिनी-मय माया मोहे तिरसूली ।
२० कोटि कोटि ब्रह्मांड निरखि, बिधि हू गति भूली ।।
महा प्रलै कौ जल-बल लै, गिरि पै बरस्यौ हरि ।
न जनौं गरब गिरि तैं गिरि, कत गयौ धूरि मूरि ररि ।।
ब्रह्मादिक कौं जीति, महा मद मदन भरयौ जब ।
दरप-दलन नँद-ललन, रास-रस प्रगट करयौ तब ।।
२५ अवधि-भूत गुन-रूप-नाद-तरजन जहँ होई ।
सब रस कौ निरतास, रास-रस कहियै सोई ।।
ननु बिपरीत धरम यह, अति सुंदर दरसन करि ।
कौंन धरम-रखवारौ, अनुसरै जीउ-सदृस हरि ।।
काल, करम, माया अधीन, ते जीउ बखाने ।
३० बिधि-निषेध, अरु पाप-पुन्य, तिन मैं सब साने ।।
परम धरम ब्रह्मन्य, ग्यान - बिग्यान - प्रकासी ।
ते क्यौं कहियै जीउ-सदृस, श्रुति - सिखर - निवासी ।।
करम, काल, अनिमादि जोगमाया के स्वामी ।
ब्रह्मादिक कीटांत जीउ, सर्बांतरजामी ।।
३५ बहे जात संसार-धार, जिय - फंदे - फंदन ।
परम तरुन करुना करि, प्रगटे श्री नँद-नंदन ।।
सघन सच्चिदानंद, नंद-नंदन ईस्वर जस ।
तैसैंई तिन के भगत, जगत मैं भये भरे रस ।।
श्री बृंदाबन चिदघन, छन छन घन छबि पावै ।
४० नंद-सुवन कौ नित्य-सदन, श्रुति-स्मृति जिहिं गावै ।।

सुंदर सरद सुहाई रितु, जहँ सदा बिराजै।
नव अखंड-मंडल-ससि, सब ही रजनी भ्राजै॥
जमुन-तीर बलबीर चीर हरि, बर जिन दीनौ।
तिन-सँग बिबिधि बिलास रास रमिबे मन कीनौ॥
तिहि छिन सोई उड़राज उदित, रसराज सहाइक। ४५
कुमकुम-मंडित प्रिया-बदन, जनु नागर नाइक॥
कमल-नयन पिय कौ हिय, सुंदर प्रेम-समुद जस।
पूरन ससि तन निरखि, हरखि बाढ़ी तरंग रस॥
अरुन किरन मिलि अरुन भयौ, छबि कहि नहिं जाही।
जनु हरि-हिय अनुराग, निकसि बिकस्यौ बन माही॥ ५०
सब्द-ब्रह्म मैं बेनु बजाइ सबै जन मोहे।
सुर - नर - गन - गंधर्व, कछु न जानैं हम को हे॥
परम मधुर मादक सु नाद, जिहिं ब्रज-जुव मोहीं।
त्यौं हीं धुनि सुनि चलीं, छटा सी अतिसय सोहीं॥
मन पहिलेई आकरषे, सुंदर घन-मूरति-हरि। ५५
अब मधुराधर-मधु मिलाइ, बोली सुनाइ करि॥
सुनि उमगी अनुराग-भरी, सावन-सरिता जसं।
सुंदर नगधर, नागर-सागर मिलन बढ़ीं रसं॥
कोउ गमनी तजि सोहन, दोहन, भोजन, सेवा।
अंजन, मंजन, चंदन, दुजपति - देवन - खेवा॥ ६०
धरम, अरथ, अरु काम, कर्म ये निगम निदेसा।
सब परिहरि हरि भजत भई, करि बड़ उपदेसा॥

प्रीतम-सूचक सव्द सुनत जब, अति रति बाढ़त ।
होत सहज सब त्याग, नाग कंचुकि जिमि छाँड़त ॥
६५ जदपि कहूँ के कहूँ वधुन आभरन बनाये ।
हरि पिय पै अनुसरत, जहाँ के तहँ चलि आये ॥
कृप्न-तुष्टि करि कर्म करै जो आन प्रकारा ।
फल विभिचार न होइ, होइ सुख परम अपारा ॥
मात, पिता, पति, कुलपति, सुत अति रोकि रहे जब ।
७० नहिंन रुकीं, रस-धुकीं, जाइ सो मिलीं तहाँ तब ॥
मोहन नंद-सुवन पिय, हिय हरि लीनौ जाकौ ।
कोटि कोटि विघनेस, विघन करि सकैं न ताकौ ॥
जे अरवर मैं अति अधीर, रुकि गईं भवन जब ।
गुनमय तन तजि, चित्सरूप धरि, पियहि मिलीं तब ॥
७५ ग्यान बिना नहिं मुकति, यहै पंडित गन गायौ ।
गोपिन अपनौ प्रेम-पंथ, न्यारौई दिखरायौ ॥
ग्यान आत्मा-निष्ठ, गुनत यौं आतम-गामी ।
कृप्न अनावृत परम ब्रह्म, परमातम स्वामी ॥
नाहिंन कछु सिंगार-कथा इहि पंचाध्याई ।
८० सुंदर अति निरबृत्ति-परा तैं इती बड़ाई ॥
जिन गोपिन कौ प्रेम निरखि सुक भये अनुरागी ।
ब्रह्मानंद मगन, ते निकसे ह्वै बैरागी ॥
पुनि तिन की पद-पंकज-रज, अज अजहूँ बांछै ।
ऊधौ बुद्धि बिसुद्धन सौं पुनि सो रज इंछै ॥

संकर नीके जानत, सारद, नारद गानत । ८५
तातैं सबै जगतगुरु, गोपिन गुरु करि मानत ॥
ब्रज-रमनी, गज-गमनी, कानन मैं जब आई ।
सुंदर बृंदाबन घन, छन छन घन छबि पाई ॥
त्रिगुन पवन लै, आगे ह्वै, अलि धाये आये ।
अवर सहेली चेली, तिन हूँ अति सुख पाये ॥ ९०
मनिमय नूपुर किंकिनि, कंकन के झनकारा ।
तैसिय अलि-झंकारनि, चंचल कुंडल-हारा ॥
आनि हरि निकट ठाढ़ी, सोहति प्रेम नबेली ।
मानहुँ सुंदर सुरतरु, चहुँ दिसि आनँद-बेली ॥
नागर गुरु नँद-नंदन, बोले अति अनुरागे । ९५
काम-बिषै-पर बचन, कहे सब रस के पागे ॥
जे पंडित सिंगार-ग्रंथ-मत यामैं सानैं ।
ते कछु भेद न जानैं, हरि कौं बिषई मानैं ॥
अनाकृष्ट-मन कृष्न, दुष्ट-मद-हरन पियारे ।
जहँ जहँ उज्जल परम धरम, ताके रखवारे ॥ १००
धरम-अरथ-पर बचन, कहे ते काहे तैं इत ।
ब्रज-देबिन के सुद्ध प्रेम-रस प्रगट करन हित ॥
सुनि पिय के अस बचन, चकित भई ब्रज की बाला ।
गदगद कंठ रसाला, बोली यौं तिहि काला ॥
अहो अहो जसुमति प्यारे, सुंदर नंददुलारे । १०५
जिनि कहौ बचन अन्यारे, तुम तौ प्रानपियारे ॥

धरम करयौ दृढ़ ताकौ, जो धरमहि रत होई।
जा धरमहि आचरत, समल मन निरमल होई॥
मन निरमल भये सुबुधि, तहाँ विग्यान प्रकासै।
११० सत्य ग्यान आनंद, आतमा तव आभासै॥
तव तुम्हरी निज प्रेम-भगति-रति अति है आवै।
तौ कहुँ तुम्हरे चरन कमल कौं निकटहि पावै॥
तिन कहुँ हो तुम प्राननाथ, फिरि धरम सिखावौ।
समझि कहौ पिय बात, चतुर सिरमौर कहावौ॥
११५ अरु जे सास्त्र-निपुन जन, ते सब करहिं तुमहिं रति।
तुम अपने आतमा नित्य पिय नित्य धरम गति॥
दार, गार, सुत, पति इन करि कहौ कौंन आहि सुख।
बढ़ैं रोग सम दिन दिन, छिन छिन देहिं महा दुख॥
ब्रह्मादिक जा चितवन लगि नित सेव करी है।
१२० सो लछिमी सव छोड़ि, तिहारे पाइ परी है॥
तैसैंहि हम सब परिहरि, तिहारे चरननि आई।
नाहिं तजौ, पिय भजौ, तजौ यह सब निठुराई॥
सुनि गोपिन के प्रेम-वचन, हँसि परे भरे रस।
जदपि आतमा-राम, रमत भये नवल नेह वस॥
१२५ बिहरत विपिन विहार, कहत कछु नहिं कहि आवै।
बार बार तन पुलकित, सुक मुनि तिहिं तहँ गावै॥
अवधि-भूत नागर नगधर-कर-पारस पायौ।
अधिक अपनपौ जानि, तनक सौभग-मद छायौ॥

गरबादिक जे कहे काम के अंग आहिं ते ।
सुद्ध प्रेम के अंग नाहिं, जानहिं प्राकृत जे ।। १३०
कमल-नैंन करुनामय, सुंदर नंद-सुवन हरि ।
रम्यौ चहत रस रास, इनहिं अपनी समसरि करि ।।
तातैं तिन हीं माहि तनक दुरि रहे ललन यौं ।
दृष्टि-बंध करि दुरै, बहुरि प्रगटै नटवर ज्यौं ।।
अलक, पलक की ओट, कोट जुग-सम जिन जाहीं । १३५
तिन कहँ पल छिन ओट, कोट दुख गनना नाहीं ।।
सुधि न रही कछु तन मैं, बन मैं बूझति डोलैं ।
निगम-सार सिद्धांत-बचन, ते अलबल बोलैं ।।
कृष्न-बिरह नहिं बिरह, प्रेम-उच्छलन कहावै ।
निपट परम सुख-रूप, इतर सब दुख बिसरावै ।। १४०
ढुँढ़न लगी ब्रज-बाल, लाल मोहन पिय कौं तहँ ।
नूत, प्रयाल, कदंब, निंब अरु अंब, पनस जहँ ।।
आवहु री ये बड़ महान बट, पीपर बूझैं ।
मोहन पियहि बतैहैं, जौ कहुँ इन कौं सूझैं ।।
आगे चलि ब्रज-जुवती, रोवति आनि परी तहँ । १४५
नूत, प्रयाल, कदंब, निंब अरु अंब, पनस जहँ (?) ।।
सखि ये तीरथ-बासी, पर उपकारी सब दिन ।
बूझहु री नँद-नंदन-मग, इन सूझत है किन ।।
रूप-गुनन-भरी लता, जे सोहति अति बन माहीं ।
नँद-नंदन इन बूझौ, निरखे हैं कै नाहीं ।। १५०

इहि बिधि वन घन ढूँढ़ि, प्रेम-वस लगत सुहाई ।
करन लगी मन-हरन, लाल-लीला मन-भाई ॥
सिसु, कुमार, पौगंड-वलित, अभिनय दिखराये ।
कमल-नैंन प्रापति उपाइ, सब लोक सिखाये ॥
१५५ अरु जे आहिं उपासक, तिनहिं अभेद बतायौ ।
सिसु, कुमार, पौगंड-कान्ह एकै दिखरायौ ॥
अवतारी अवतार-धरन, अरु जितक बिभूती ।
इह सब आश्रय के अधार, जग जिहि की ऊती ॥
तातैं जग, गोपी, सुक मुनि हू पुनि पुनि गावैं ।
१६० सनक-सनंदन जग-बंदन, तेऊ सिर नावैं ॥
नँद-नंदन-लीला करि, ललना धन्य भई जब ।
सुंदर चरन-सरोज-खोज, निकटहि पायौ तब ॥
सुनि सब धाई आईं, जीवनमूरि सी पाई ।
पुनि पुनि लेहिं बलाई, आपनी करति बड़ाई ॥
१६५ सखि इहि कृष्न-चरन-रज, अज-संकर सिर धारैं ।
रमा रमनि पुनि धारैं, अपने दोस निवारैं ॥
पुनि पेखे ढिंग जगमगात, पग प्यारी के जब ।
कौंन आहि इहि बड़भागिनि, यौं कहन लगी तब ॥
इन नीके आराधे, हरि ईसुर बर जोई ।
१७० तातैं अधर-सुधा-रस, पीवत निधरक सोई ॥
सोऊ पुनि अभिमान भरी, यौं कहन लगी तिय ।
मो पै चल्यौ न जाइ, जहाँ तुम चलन चहत पिय ॥

जब जब जो उदगार होइ अति प्रेम-बिधुंसक।
सोइ सोइ करै निरोध, गोपकुल-केलि-उतंसक॥
नहिं कछु इंद्रियगामी, कामी कामिन के बस। १७५
सब घट अंतरजामी स्वामी परम एक रस॥
नित्य आत्मानंद, अखंड सरूप उदारा।
केवल प्रेम सुगम्य, अगम्य अवर परकारा॥
तातैं तिन हीं माहिं पुरचौ, परि दूरि न भायौ।
सो बाला अति बिलपि, अखंडित प्रेम दिखायौ॥ १८०
जैसैंई कृष्न अखंड-रूप, चिदरूप उदारा।
तैसैंई उज्जल रस अखंड तिन करि परिवारा॥
जगत-उधारन-कारन, गुरु ह्वै मग दिखरावै।
कामी कामिनि समभावै, ज्यौं जिनि इहि गावै॥
सो तब तिन हूँ देखी, ठाढ़ी सोहति ऐसी। १८५
नव अंबुद तैं अब हीं, बिछुरी बिजुरी जैसी॥
सोचै, चितवै, बन मैं, मन मैं, अचरज भारी।
किन कीनी चंद तैं चारु चंद्रिका न्यारी(?)॥
धाइ भुजन भरि, लै पुन तिहिं, जमुना-तट आईं।
कृष्न-दरस-लालसा, सु तरफै मीन की नाईं॥ १९०
अपनेई प्रेम-सुधा-निधि बढ़ि गईं अधिक कलोलैं।
बिह्वल ह्वै गईं बाल, लाल सौं अलबल बोलैं॥
तब प्रगटे नँद-नंदन, सुंदर सब-जग-बंदन।
गोपी-ताप-निकंदन, को हैं कोटिक चंदन॥

१९५ मधुर मधुर मुसकाते, बिलुलित उर-बनमाला ।
केवल मनमथ मन-मथ, चंचल नैंन बिसाला ॥
पियहि निरखि ब्रजबाल, उठीं सब एकहि काला ।
ज्यौं प्रानन के आये, उझर्कहिं इंद्रिय-जाला ॥
साँवरे पिय-कर-परस पाइ, सब सुखित भईं यौं ।
२०० परमहंस भागवत मिलत, संसारी जन ज्यौं ॥
जैसैं जागत स्वप्न सुषुप्ति, अवस्था मैं सब ।
तुरिय अवस्था पाइ जाइ सब भूलि गई तब ॥
मिलि जमुना-तट विहरत, सुंदर नँद के लाला ।
तैसिय ब्रज की बाला, भरीं अति प्रेम रसाला ॥
२०५ जदपि अखंडानंद, नंद-नंदन ईस्वर हरि ।
तदपि महा छबि पाईं, छबीली ब्रज-देबिन करि ॥
पुनि ब्रज-सुंदरि सँग मिलि, सोहत सुंदर वर यौं ।
सक्ति अनेक करि आवृत, सोहत परमातम ज्यौं ॥
पुनि जस पुरुष उपासक ग्यानादिक करि सोहै ।
२१० यौं रस-ओपी गोपी मिलि, मनमोहन मोहै ॥
कृष्न-दरस आनंद-बरस, दुख दूरि भयौ मन ।
पाइ मनोरथ अपनौ, जैसैं हरषैं श्रुतिगन ॥
जब लगि श्रुति करि कर्म-कांड करमनन प्रमानैं ।
तब लगि इंद्र-बरुन-रबि, ईस्वर इन हीं गानैं ॥
२१५ ग्यान-कांड मैं परमेस्वर, बिग्यान परम सुख ।
बिसरि गयौ सब काम्य, कर्म-अग्यान महा दुख ॥

तैसेंई गोपी प्रथम काम, अभिराम रसी रस।
पुनि पाछे निःसीम प्रेम, जिहिं कृष्न भये बस॥
जेन-केन परकार हौइ अति कृष्न-मगन मन।
अनाकर्न चैतन्य, कछु न चितवै साधन तन॥ २२०
महा द्वेष करि महा सुद्ध, सिसुपाल भयौ जब।
मुक्त होत वह दुष्टपनौ, कछु सँग न गयौ तब॥
अरज्या, मरवा, स्रुवा, जग्य-साधन अविसेखै।
सरग जाइ, सुख पाइ, बहुरि को तिन तन देखै॥
जोगी जिहि अष्टांग-साधना हू साधत ते। २२५
पाइ परम परमात्म, बहुरि का बहुरि करत ते॥
तैसेंई ब्रज की बाम, काम-रस उत्कट करि कै।
सुद्ध प्रेममय भईं, लईं गिरिधर उर धरि कै॥
आरंभित तब रुचिर रास, अद्भुत हुलास जहँ।
अमल अष्टदल-कमल, महा मंडल मंडित तहँ॥ २३०
मधि कमनीय करनिका, ता पर विवि किसोर बर।
पुनि द्वै द्वै गोपी करि, हरि-मंडित मंडल पर॥
एकै मूरति ललित, लाल आलात की नाईं।
सब के अंसनि धरी, साँवरी बाँह सुहाई॥
जदपि बच्छस्थल रमति, रमा रमनी बर कामिनि। २३५
तदपि न यह रस पायौ, पायौ जो ब्रज-भामिनि॥
जितक हुतीं ब्रज-बधू, कोटियन कोटि भरी रति।
तितेई तहाँ रागिनी-राग, संगीत भेद गति॥

काहू के काहू न गीत-संगीत छुयौ जहँ ।
२४० भिन्न भिन्न अपनाइ, अनागत प्रगट कियौ तहँ ।।
बनिता जहँ सतकोटि, कहत कछु नहिं कहि आवै ।
अपने गुन गति, नृत्य, नाद, कोउ पार न पावै ।।
जग मैं जो संगीत-नाट, जिहिं जगत रिझायौ ।
सो ब्रज-तियन कौ सहज गमन, यौं आगम आयौ ।।
२४५ जो ब्रज-देवी निर्तति मंडल रास महा छबि ।
तिहिं कोउ कैसें बरनै, ऐसौ कौन आहि कबि ।।
राग - रागिनी - सम, जिन कौ बोलिबौ सुहायौ ।
सु कौन पै कहि आवै, जो ब्रज-देबिन गायौ ।।
जैसें कृष्न अमित महिमा, कोउ पार न पावै ।
२५० ऐसें ही ब्रज-वनिता गुन गन गनत न आवै ।।
जब नाइक के भेद-भाउ, लावन्य, रूप, गुन ।
अभिनय करि दिखरावैं, गावैं अद्भुत गति उन ।।
तहाँ साँवरे कुँवर, रीझि कै रीझि रहत यौं ।
निज प्रतिबिंब-विलास, निरखि सिसु भूलि रहत ज्यौं ।।
२५५ जिन की गीत-धुनि, छटा, सकल जग छाइ रही है ।
जिमि रंचक लछिमी कटाच्छ, सब बिभव कही है ।।
ते तौ मदनमोहन पिय, रीझि भुजन भरि लीनी ।
चुंबन करि मुख-सदन, बदन तैं बीरी दीनी ।।
लटकि लटकि ब्रज-बाला, लाला उर जब फूली ।
२६० उलटि अनंग अनंग दह्यौ, तब सब सुधि भूली ।।

रीझि सरद की रजनी, न जनी केतिक बाढ़ी ।
बिलसत सजनी स्याम, जथा रुचि अति रति गाढ़ी ।।
थके उड़प अरु उड़गन, उन की कौंन चलावै ।
काल-चक्र पुनि चकित थकित, कछु मरम न पावै ।।
निरखत सारद, नारद, संकर, सनक-सनंदन । २६५
हरषत, बरषत फूलन, जै जै जै नँद-नंदन ।।
अद्‌भुत रस रह्यौ रास, कहत कछु कहि नहिं आवै ।
सेस सहस मुख गावै, अजहूँ अंत न पावै ।।
हो सज्जन-जन रसिक ! सरस मन कै यह सुनियै ।
सुनि सुनि पुनि आनंद हृदै ह्वै, नीके गुनियै ।। २७०
सकल सास्त्र-सिद्धांत, परम एकांत, महा रस ।
जाके रंचक सुनत-गुनत, श्री कृष्न होत बस ।।
सकल रास-मंडल-रस के जे भँवर भये हैं ।
नीरस बिषै-बिलास, छिया करि छाँड़ि दिये हैं ।।
'नंददास' सौं नंद-सुवन ! जौ करुना कीजै । २७५
तिन भक्तन की पद-पंकज-रज सौं रुचि दीजै ।।

दशम स्कंध

प्रथम अध्याय

नव लच्छन करि लच्छ जो, दसयैं आश्रय रूप ।
'नंद' बंदि लै प्रथम तिहि, श्री कृष्नाष्य अनूप ।।

परम बिचित्र मित्र इक रहै, कृष्न-चरित्र सुन्यौ सो चहै ।
तिन कही 'दशम स्कंध' जु आहि, भाषा करि कछु बरनौ ताहि ।
५ सबद संसकृत के हैं जैसैं, मो पै समुझि परत नहिं तैसैं ।
तातैं सरल सु भाषा कीजै, परम अमृत पीजै, सुख जीजै ।
तासौं 'नंद' कहत हैं तहाँ, अहो मित्र ! एती मति कहाँ ।
जामैं बड्डे कबिजन उरझे, ते वे अजहूँ नाहिंन सुरझे ।
तहँ हौं कवन निपट मतिमंद, बौना पै पकरावौ चंद ।
१० अरु जु महामति श्रीधर स्वामी, सब ग्रंथन के अंतरजामी ।
तिन कही यह जु भागवत ग्रंथ, जैसैं दूध उदधि कौ मंथ ।
मंदर गिरि से मज्जत जहाँ, रेनुकनूका हौं को तहाँ ।
तामैं यह श्री 'दशम स्कंध', आश्रय वस्तु कौं रसमय सिंधु ।
तिहि मधि हौं किहि बिधि अनुसरौं, क्यौं सिद्धांत-रतन उद्धरौं ।
१५ मित्र कहत है तौ यह ऐसैं, अहो 'नंद' ! तुम कहत हौ जैसैं ।
ऐ परि जथासक्ति कछु कीजै, अमृत की इक बुंदहि जीजै ।

जो गुरु गिरिधर देव की, सुंदर दया दरेर।
गुंग सकल पिंगल पढ़ै, पंगु चढ़ै गिरि मेर॥

प्रथम कहौ नव लच्छन कौंन, तिन कौं नीके समझत हौं न।
जब लगि इन के भेद न जानै, आश्रय बस्तु सु क्यौं पहिचानै। २०
'नंद' कहत तौ सुनि नव लच्छन, जैसें बरनत बड़े बिचच्छन।
'सर्ग', 'विसर्ग', 'स्थान' अरु 'पोषन', 'ऊति' 'मन्वंतर' 'नृपगन तोषन'।
इक 'निरोध' अरु 'मुक्ति' सु दच्छिन, आश्रय वस्तु के ये नव लच्छन।
महदादिक जे कारन वर्ग, तिन की सृष्टि जु कहियै 'सर्ग'।
कार्ज सृष्टि यह विस्व जु आहि, विदुष 'विसर्ग' कहत हैं ताहि। २५
सूर्जादिक मर्जाद वितान, ताहि सु 'थान' कहत कबि जान।
जद्यपि भक्त भर्‍यौ वहु दोषन, ताकी रच्छा कहियै 'पोषन'।
साधु-असाधु वासना जहाँ, 'ऊति' बिभूति समझि लै तहाँ।
समीचीन धर्म की प्रवृत्ति, सो कहियै 'मन्वंतर' बृत्ति।
मुचुकुंदादि नृपन की कथा, सो ईसान कथा है जथा। ३०
दुष्ट नृपन कौ हरन अबोध, ताकौं बुधजन कहत 'निरोध'।
अन्य रूप की त्यागन जुक्ति, निज स्वरूप की प्रापति 'मुक्ति'।
इन लच्छन करि लच्छित जोई, आश्रय बस्तु कहावै सोई।
सो आश्रय इहि दसम निकेत, प्रगट आहि भक्तन के हेत।
दसयें मधि जु निरोध बखान्यौ, दुष्ट नृप-दलन सब ही जान्यौ। ३५
अवर निरोध भेद हैं जिते, अति अद्भुत तू सुनि लै तिते।
भक्तहि इतर बिषै ते निरोध, उतहि मोक्ष सुख तैं अवरोध।
सुद्ध प्रेम मधि प्रापति करै, इक निरोध इहि बिधि बिस्तरै।

ज्यौं ब्रजवासिन मोक्ष दिखाइ, ब्रह्मानंद बहुरि लै जाइ।
४० मधुर मूर्ति बिन जब अकुलाने, तब फिरि बहुरचौ ब्रज ही आने।
अवर निरोध भेद मुनि मित्र, वरनत जा कहुँ परम बिचित्र।
जदपि कोटि ब्रह्मांड के कर्ता, अरु तिन के भर्ता-संहर्ता।
परम सनेह भक्ति होइ जाके, ईस्वरता कछु फुरै न ताके।
ज्यौं जसुमति मुख मैं जग पेख्यौ, सुत ईस्वर करि नाहिंन लेख्यौ।
४५ ललित लाल लीला लपटानी, सो वह भूत-क्रिया सी जानी।
अब मुनि कृष्न-विपैक निरोध, जदपि अनंत अखंडित बोध।
सो तब रंचक ताहि न फुरै, जब हठि मातस्तन अनुसरै।
अवर निरोध भेद जो आहि, रस-लीलन मैं लीज्यौ चाहि।
अब सुनि भक्ति परीच्छत बातैं, श्री भागवत प्रगट है जातैं।
५० सुंदर हरि मूरति जो आहि, उदर मध्य सो आयौ चाहि।
सब ठाँ कृष्न परीच्छत लह्यौ, तातैं नाउँ परीच्छित कह्यौ।
जे उत्तम श्रोता रस-सने, तिन मैं मुख्य परीच्छित गने।
बिसरे जाहि अहार-बिहार, केवल हरिगुन-श्रवन-अधार।
तैसेंई उत्तम बक्ता बने, श्री सुक परम प्रेम-रस सने।
५५ कृष्न ललित लीला अनुरागी, ब्रह्म तैं निकसि भये वैरागी।
सनकादिक अरु श्री सुक कहियाँ, अंतर बहु इन दोऊ महियाँ।
वे कामादिक के डर डरैं, रहत हैं बालबैस मैं ररैं।
ये नव जोबन बर बपु धरैं, कामादिक जाके डर डरैं।
तिन सौं प्रश्न परीछित करी, नख-सिख कृष्न-चरित रस भरी।
६० हो प्रभु! तुम करि रबि-ससि-बंस, नीके कहे रहे नहिं संस।

अरु जे उभय बंस के भूप, तिन के जे जे चरित अनूप।
ते सब पाछे आछे बरने, मनहरने, जग-मंगल करने।
अरु जदु धर्मसील कौ वंस, सो पुनि तुम करि भले प्रसंस।
धर्मसास्त्र-वल निर्मल हियौ, पितहि न अपनौ जोबन दियौ।
तिहि कुल मैं ईस्वर अवतरे, अंस कला बिभूति करि भरे। ६५
मच्छ-कच्छ अवतार बिभावन, भूतन के भावन, मनभावन।
सो प्रभु इहि जदुकुल मैं आइ, कीने जे जे कर्म सुभाइ।
ते बिस्तार सौं मो सौं कहौ, हो मुनि सत्तम! अलस न गहौ।
कृष्न-गुनानुवाद के विषै, सब अधिकारी अपनी इषै।
मुक्त तेउ गावत रस-भीने, जदपि सकल तृष्ना करि हीने। ७०
मुमुषन कौं भव औषधि यहै, जातैं संसृति रोग न रहै।
बिषई जन-मन अति अभिराम, जातैं सब ही रस कौ धाम।
बिना पसुघ्नहि पुरुष सु कौन, कहै कि हरि गुन हौं न सुनौं न।
पसुघन सो जो करम दिढ़ावै, कृष्न-गुनानुबाद नहिं भावै।
हमरे तौ हरि कुल के देव, तुम सब नीके जानत भेव। ७५
अर्जुन आदि पितामह मेरे, जब कुरुसेना-सागर घेरे।
अमरन करि जु न जीते जाहीं, भीष्मादिक अतिरथि जिहि माहीं।
तेई तहाँ तिमिंगिल भारे, अपनी जाति के भच्छनहारे।
'तिमि' इक जाति मीन की आहि, सत जोजन बिस्तार है जाहि।
ताहि गिलत जो जलचर लहियै, ताकौ नाउँ 'तिमिंगिल' कहियै। ८०
तिन करि महा दुरत्यय सोई, जो देखै सो अचरज होई।
तहँ श्री कृष्न सु नौका भये, कब धौं तिनहिं पार लै गये।

अरु केवल तेई नहिं तारे, मेरेऊ तन के रखवारे।
द्रोन-पुत्र को वान अन्यारौ, अग्नि तैं तातौ, रातौ भारौ।
८५ जब आयौ तब मैया मेरी, दौरी, सरन गई तिहि केरी।
मेरे हितकर वे हरि कैसे, कुत्सित उदर-दरी मैं पैसे।
कुरुवन की तौ संतति मात्र, पांडवन की भक्ति कौ पात्र।
सो यह मेरौ अंग सुहायौ, भस्म भयौ पुनि फेरि जिवायौ।
तिन के चरित अमृतमय जिते, हो सर्वग्य ! सुनावहु तिते।
९० तुम करि वे संकर्पन अर्भ, प्रथमहि कह्यौ देवकी गर्भ।
बहुरचौ ताहि रोहिनी जने, देहांतर बिन कैसैं बने।
अरु ईस्वर भगवान मुकुंद, परमानंद कंद सुच्छंद।
ते काहे ते पितु गेह तैं, ब्रज आये सु कवन नेह तैं।
ब्रज बसि कवन कवन पुनि कर्म, कीने पर्म धर्म के बर्म।
९५ पुनि मधुपुरी आइ नँदनंद, बरषे कवन कवन आनंद।
अरु साच्छात मात कौ भ्रात, सो वह कंस हत्यौ किहि बात।
कितिक बरस द्वारावति बसे, कितिक ललित ललना मैं लसे।
जदपि तज्यौ है मैं जल अन्न, तदपि न ह्वैहै मो तन खिन्न।
तुव मुख-कमल हरिचरित-सार, चलिहै परम अमृत की धार।
१०० पान करत अस रस अनयास, काके छुधा कौन के प्यास।
ता राजा कौ करि सनमान, बोले बैयासिक भगवान।
कही कि धन्य धन्य नृप सत्तम, नीके करि निस्चै मति उत्तम।
जातैं कृष्नकथा रसमई, तातैं उपजी अति रति नई।
प्रश्न जु कृष्नकथा कौ जहाँ, बक्ता, श्रोता, पृच्छक तहाँ।

पावन करै सबन कौं ऐसैं, गंगाजल-धारा जग जैसैं। १०५

निगम-कल्पतरु कौ सु फल, बीज न वकला जाहि।

कहन लगे रस रँगमगे, सुंदर श्री सुक ताहि॥

भूप रूप ह्वै असुर विकारी, कीनी भूमि भार करि भारी।

तब यह गाइ रूप धरि धरती, क्रंदन करती अँसुवन भरती।

बिधि सौं जाइ कही सब बात, सुनि कलमल्यौ कमल कौ तात। ११०

अमरन करि संकर सँग लये, तीर छीरसागर के गये।

देव देव पुरुषोत्तम जहाँ, स्तुति करि बिनती कीनी तहाँ।

गगन मैं भई देव की धुनी, सो ब्रह्मा समाधि मैं सुनी।

सुनि कै बोल्यो अंबुजतात, सुनहु अमरगन मो तैं बात।

आग्या भई बिलंब न करौ, जदुकुल बिषै जाइ अवतरौ। ११५

श्री बसुदेव धाम अभिराम, प्रगटहिंगे प्रभु पूरनकाम।

सेस सहसमुख सब सुख-दाता, ह्वैहै प्रभु कौ अग्रज भ्राता।

अरु जो जोगमाया गुनमई, ताहू कौं प्रभु आग्या दई।

इहि विधि बिधि बिबुधन सौं कही, पुनि आस्वासित कीनी मही।

मथुरा जादव की रजधानी, श्री गोविंदचंद की मानी। १२०

जितक आहि ब्रह्मांड अनेक, अंसन करि निवसत हरि एक।

जिहि ब्रह्मांड मधुपुरी लसै, पूरन ब्रह्म कृष्न तहँ बसै।

जब हरि लीला इच्छा करैं, जगत मैं प्रथम भक्त अवतरैं।

तिन कै प्रभु कौ परिकर जितौ, प्रगट होत लीला हित तितौ।

तब श्री कृष्न अवतरहिं आइ, सिद्ध करैं भगतन के भाइ। १२५

सूरसेन जादव इक नाम, परम भागवत सब गुन धाम।

नाके निर्मल निगम सरूप, प्रगटचौ सुत वसुदेव अनूप।
जाके जन्मत अमर नगर मैं, दुंदुभि बाजी बगर बगर मैं।
देवक जादव के इक कन्या, देवमई देवकी सु धन्या।
१३० सब सुभ लच्छन भरी, गुन भरी, आनि ब्रह्म-विद्या अवतरी।
स्याम बरन तन अस कछु सोहै, इंद्रनील मनि की दुति को है।
राजति रुचिर जनक के ऐना, चंद सौ बदन, डहडहे नैंना।
बोलत हसति, हरति इमि हियौ, जनु विधि पुतरी मैं जिय दियौ।
व्याहन जोग जानि छबिमई, सो देवक बसुदेवहि दई।
१३५ भयौ विवाह परम रँग भीनौं, देवक बहुत दाइजौ दीनौं।
षटसत रथ कंचन के नये, गज सत चारि मत्त छबि छये।
पंद्रह सहस सुभग किक्यान, कनक भरे, नग जरे पलान।
बर बरनी, तरुनी रँग भीनी, दासी बीनि दोइ सत दीनी।
भई बरात विदा ह्वै सजे, भेरी मंदल-कंदल बजे।
१४० उग्रसेन देवक कौ भ्रात, ताकौ पूत कंस बिख्यात।
भीनौ नव कुंकुम के रंग, कंचन रथ अनेक जिहि संग।
भगनी-रथ कौ सारथि भयौ, प्रीति बिबस सु दूरि लौं गयौ।
बानी भई गगन मैं गूढ़, रे रे कंस ! महा मतिमूढ़।
जाकौं तू भयौ जात है जंता, अठयौं गर्भ सु तेरौ हंता।
१४५ सुनतहि पापरूप वह कंस, धाइ गही देवकी नृसंस।
सुंदर बदन बिमन भयौ ऐसैं, राहु के छुवत छपाकर जैसैं।
काढ़ि खरग मारन कौं भयौ, आनकदुंदुभि तब तहँ गयौ।
महाराज जिनि करि अस काज, जा काज तैं हौइ जग लाज।

भगिनी, बाला, अरु यह समै, तू बड़भागि, न करि अस भ्रमै ।
जौ तू कहहि मरन-भय भारी, हौं आपनी करौं रखवारी ।　　१५०
तौ वह मरन न ढिंग ह्वै जाइ, बिधना लिख्यौ लिलार बनाइ ।
अबहिं मरौ कि बरष सत बीते, छुटे न कोऊ काल बली ते ।
तातैं पापाचरन न करियै, रंचक सुख बहुरयौ दुख भरियै ।
पुनि नहिं दूरि जबहिं यह मरै, तब हीं और देह कौं धरै ।
ज्यौं तृन-जोक तृनन अनुसरै, आगे गहि पाछे परिहरै ।　　१५५
तैसैं कर्मविवस ये जंत, देह धरत दुख भरत अनंत ।
इन बतियन सु कंस क्यौं मानै, आसुर ग्यान प्रतच्छ प्रमानै ।
तब बसुदेव दया दिखरावै, साम बचन कहि कहि समझावै ।
यह तेरी अनुजा बर बाला, पुतरी सी बिधि रची रसाला ।
न करि अमंगल मंगल काल, जातैं तू बड़ दीनदयाल ।　　१६०
तदपि न ताके रंचक ब्यापी, केवल पापी, महा सुरापी ।

　　निपट निकट, संगम अगम, जिमि दर्पन मैं छाँह ।
　　जदपि रहति आगे तदपि, मिलै न भरि भरि बाँह ॥

निपटहि ताकौं निग्रह जान्यौ, तब बसुदेव अवर मत ठान्यौ ।
नीचहि सुत अर्पिबौ दिढ़ाऊँ, मीच के मुख तैं याहि छुड़ाऊँ ।　　१६५
जब मेरे उपजहिंगे तात, धाता की अनेक हैं बात ।
ज्यौं बन-नगर अगिनि परजरै, ढिंग के रहैं दूरि के जरैं ।
तब बसुदेव बिहँसि कै कहै, हे राजन रंचक इत चहै ।
डर तौ तोहिं अठयैं गर्भ कौ, नहिं याकौ नहिं अवर अर्भ कौ ।
हौं तोहिं दैहौं सिगरे तात, छुये कहत यह तेरौ गात ।　　१७०

करि प्रतीति जिय बसुदेव की, छाँड़ि दई हँसि कै सु देवकी।
प्रथमहि कीर्त्तिमंत सुत भयौ, वसुदेव ताहि लये ही गयौ।
सत्यप्रतिग्य अनृत तैं डरचौ, लालनादि लालच परिहरचौ।
अरु साधुन के दुस्सह कौंन, जिन के नहिं ममता, मति औन।
१७५ अति कोमल बिलोकि कै बाल, कंस भयौ तिहि काल दयाल।
घर लै जाहु देव ! इहि अरभै, दीजौ मोहिं आठयौं गरभै।
चल्यौ सदन, पै बदन उदास, नीचन कौ कछु नहिं बिस्वास।
बसुदेव घर लौं जान न पायौ, नारद तबहिं कंस पै आयौ।
कंस के सांति होइ जौ अबै, देव-काज तौ बिगरचौ सबै।
१८० आइ कही तासौं सब बातें, अहो कंस ! कछु समझत घातें।
बसुदेवादिक जादव जिते, गोकुल मैं नंदादिक तिते।
ये तौ सबै देवता आहि, राजन ! रंचक जिनि पतियाहि।
कहि कै गयौ वचन इहि विधि कौ, पर-घर-घालक, बालक बिधि कौ।
तब हीं सो सिसु फेरि मँगायौ, बसुदेव ताहि लये ही आयौ।
१८५ डारचौ पटकि न उपजी मया, जे अस नृप, तिन के को दया।
देवकी बिषै बिष्नु अवतरिहैं, मेरे बध कौ उद्दिम करिहैं।
पहिले कालनेम हौं हुतौ, बिष्नु सदा कौं बैरी सुतौ।
अब कैं ऐसैं जतनन जतौं, बिष्नुहि गर्भ बीच ही हतौं।
तब बसुदेव देवकी आनि, पाइनि सुदिढ़ सूंखला बानि।
१९० राखे निकट, बिकट अस ठौर, जहँ कोउ जान न पावै और।
जेई जेई बालक उपजत जात, तेई तेई हतै न बूझै बात।
बिष्नु जन्म की संका करै, मति इन हीं मैं ह्वै संचरै।

बंधु-मित्र जादव हे जिते, बल करि बंधन कीने तिते।
उग्रसेन अपनौ महतारौ, सो बाँध्यौ, दीनौ दुख भारौ।
महा बली अरु महा नृसंस, राजा भयौ मधुपुरी कंस। १९५

'नंद' जथा मति कै तथा, बरन्यौ प्रथम अध्याइ।
जाके रंचक सुनत सब, कर्म-कषाय नसाइ॥

द्वितीय अध्याय

अब सुनि लै द्वितीय अध्याइ, जामैं ब्रह्मादिक सब आइ।
गर्भस्तुति करिहैं सिर नाइ, चरन-कमल बैभव दिखराइ।
जे हैं नीच बुरे ही बुरे, ते सब आनि कंस पै जुरे।
अघ, बक, बकी, प्रलंब, अरिष्ट, तृनावर्त्त, खर केसी नष्ट।
मागध, जरासिंध बल-अंध, तासौं जाहि ससुर संबंध। ५
जादवन कौं दैन दुख लागे, ते तजि देस-बिदेसन भागे।
कैइक रहे ताही अरगाने, अक्रूरादिक अनसनमाने।
देवकि के षट सिसु जब कंस, हते महा बल, महा नृसंस।
सप्तम गर्भ बिष्नु कौ धाम, भयौ अनंत जाहि है नाम।
देवकि तहाँ अति न परकासी, हर्ष-सोक दोऊ मिलि भासी। १०
कछु फूली, कछु नाहिंन फूली, जैसैं प्रात कमल की कली।
जदुकुल कौ दुख दिखि भगवान, ब्याकुल भये जानमनि जान।
बोलि जोगमाया मनहरनी, तासौं प्रभु सब बातैं बरनी।
हे भद्रे ! बड़भागिनि महा, भाग महिम तुव कहियै कहा।

१५ आहि जगत यह रचना तेरी, वह बिभूति इक न्यारी मेरी।
जातैं तू अब गोकुल जैहै, देखत निरवधि सुख कौं पैहै।
गोपी-गोपन करि अति मंडित, तामैं नित्यानंद अखंडित।
राजत गोपराइ तहँ नंद, मूरति धरे सु परमानंद।
ताके घर बसुदेव की घरनी, दुरी रहति रोहिनि बर-बरनी।
२० देवकी जठर गर्भ जो आहि, रोहिनी उदर ताहि लै जाहि।
गर्भ-मरन संका जिनि करै, मेरौ अंस न कबहूँ मरै।
तदनंतर तिहि जठर अनूप, ऐहैं हम परिपूरन रूप।
तू उहि नंद गोप के धाम, मुकति-गेहिनी जसुमति नाम।
तू तहँ नाममात्र होइ कै, करि सब काज सबन भोइ कै।
२५ ह्वैहैं भुवि तेरे बहु नाम, पूरन करिहैं सब के काम।
'भवा', 'भवानी', 'मृडा', मृडानी', 'काली', 'कात्याइनी', 'हिमानी'।
ऐसैं प्रभु की आग्या पाइ, माया तुरत महीतल आइ।
रोहिनि बिषै देवकी गर्भ, आन्यौ करखि तबहिं सो अर्भ।
नगर मैं, बगर बगर ह्वै गयौ, देवकि गर्भ बिसंसृत भयौ।
३० तब ईस्वर सब अंसन भरे, आनकदुंदुभि मन संचरे।
बसुदेव तिहि छन अतिसै सोहे, भानु समान परत नहिं जोहे।
मन हीं करि देवकि मैं धरे, न कछु धातु संबंधहि ररे।
ज्यौं गुरु स्निग्ध सिष्य के हेत, हृदगत बस्तु दया करि देत।
हरि उर धरि देवकि अति सोही, अपने रूप आप ही मोही।
३५ ऐ पर घर ही घर आभासी, बाहिर कहुँ न तनक परकासी।
जैसैं घट मैं दीपक-जोति, भीतर जगमग जगमग होति।

अरु ज्यौं बंचक मैं सरस्वती, पर उपकार करत नहिं रती।
ऐसैं जगमगाति ही जहाँ, आयौ कंस पापमति तहाँ।
कहत कि मेरौ हंता जोई, अब कैं निश्चै आयौ सोई।
जातैं पाछे हुती न ऐसी, राजति तेजरासि सी बैसी। ४०
को उद्दिम करियै इहि काल, सुसा, गुर्बिनी, बहुरचौ बाल।
याकौ बध न श्रेय कौं करै, आयु, कीर्ति, संपति सब हरै।
अरु ह्याँ सब कोउ धृग धृग करै, मरे महा रौरव मैं परै।
इहि परकार बिचारहि आइ, फिरि गयौ घर पै, कछु न बसाइ।
निसि दिन जनम-प्रतीच्छा करै, थर-थर डरै, नींद नहिं परै। ४५
बैठत-उठत, चलत, चकि रहै, मति इत ही तैं उठि मोहिं गहै।
अंवर झारि सेज पर सोवै, भोजन करत सीथ टकटोवै।
बैर-भाव जिय अति बढ़ि गयौ, सब जग जाहि बिष्नुमै भयौ।
तदनंतर संकर, अज, सारद, अवर अमर बर, मुनि बर नारद।
दरसन हित आये अरबरे, अति मुद भरे, अचंभे भरे। ५०
जाके उदर मध्य जग सबै, सो देवकी जठर मैं अबै।
केई रबि से केई ससि से गये, आगे दिन दीया से भये।
देवकि जठर झलमलत ऐसैं, रतन-मँजूषा नव नग जैसैं।
करि दंडवत महा मुद भरे, इकहि बेर सब पाइनि परे।
पुनि पुनि उठि चरनन लटपटे, क्रीटन के जु कोटि कटपटे। ५५
बनी जु मुकट रतन की जोति, जनु श्री हरि की आरति होति।
गदगद कंठ, प्रेम-रस भरे, अंजुलि जोरि स्तुति अनुसरे।

कहत कि अहो सत्य-संकल्प, सब बिधि सत्य, नित्य, बड़ कल्प
तुमहिं प्रपन्न भये हम सबै, रच्छा करहु हमारी अबै

पूर्व पक्ष

६० जौ कहहु कि तुम हीं सब लाइक, जगनाइक अरु सब फलदाइक
क्यौं बोलत लिलात से बैन, तहँ तुम सुनहु कमल-दल-नैंन
तुम परमेस्वर सब के नाथ, बिस्व समस्त तिहारे हाथ
छिनक मैं करौ, भरौ, संहरौ, ऊर्ननाभि लौं फिरि बिस्तरौ
तुम तैं हम सब उपजत ऐसैं, अगिनि तैं बिस्फुलिंग गन जैसैं
६५ ये अद्भुत अवतार जु लेत, बिस्वहि प्रतिपालन के हेत
जौ दिन दिन दिनमनि न उवाइ, तौ सब अंध-धुंध ह्वै जाइ
अरु अपने भक्तन के हेत, दुर्लभ मुकति सुलभ करि देत।
तव पदपंकज-नौका करि कै, पार परे भवसागर तरि कै।

पूर्व पक्ष

जौ तुम कहौ वह नाउ सुढार, मुक्त भये लै गये सु पार।
७० वार रहे तिन की गति कैसैं, तहाँ कहत ब्रह्मादिक ऐसैं।
पदपंकज के सन्निधि मात्र, तब हीं भये मुक्ति के पात्र।
तिन कौं भवसागर भयौ ऐसौ, गो-बछ-पद कौ पानी जैसौ।
सो पदपंकज सुंदर नाउ, इत ही राखि गये भरि भाउ।
जैसैं इतर तरहिं भव-सिंधु, परम सुहृद के सब के बंधु।
७५ जे बिमुक्त, मानी, मद-भरे, तुव पद-कमल निरादर करे।
ते ऊँचे चढ़ि कै खरहरे, धमकि धमकि नरकन मैं परे।

जिन करि चरन-कमल आदरे, ते कबहूँ न उखटि कै परे।
जग मैं जे बिघनन के राइ, तिन के सीसन धरि धरि पाइ।
बिचरत निरभै भगत तिहारे, तुम से प्रभु जिन के रखवारे।
ते वै तुम्हरे चरन-सरोज, या अवनी पर परिहै खोज। ८०
ठौर ठौर तिन कौं देखिहैं, जीवन-जनम सफल लेखिहैं।
तब देवकि आस्वासित करी, तुम सी को है भागन भरी।
जाकी कूख बिषै भगवान, जो साच्छात पुरान पुमान।
आयौ रच्छक जदुबंस कौ, धुंसक असुर बंस कंस कौ।
पुनि बंदन करि भरे अनंद, चले घरन बृंदारक-बृंद। ८५

गर्भस्तुति हरि अर्भ की, सुनै जु द्वितीय अध्याइ।
सो न परै फिरि गर्भ-मल, नर निर्मल ह्वै जाइ॥

तृतीय अध्याय

सुनि तृतीय अध्याइ अब, सुंदर परम अनूप।
प्रेम भरे जहँ प्रगटिहैं, हरि परिपूरन रूप॥

तात-मात सौं बात बनैहैं, पुनि ब्रजचंद नंद के जैहैं।
पहिले उपज्यौ सुंदर काल, सब गुन भरचौ, जु परम रसाल।
अति सोहन रोहिनी नछत्र, जाके सब ग्रह ह्वै गये मित्र। ५
ठाँ ठाँ मंगल पूरित मही, बहुत नदी दूध-घृत बही।
सब के मन प्रसन्न भये ऐसैं, निधन महा धन पाये जैसैं।
भादौं सलिल सुच्छ अस भये, जैसैं मुनि-मन निर्मल नये।

सरन मध्य सरसीरुह फूले, तिन पर लंपट अलिकुल झूले।
१० दिसा प्रसन्न सु को छबि गनौं, दिसि दिसि चंद उगाहिंगे मनौं।
कुसुमित बनराजी अति राजी, ऐसी नहिंन बसंत बिराजी।
बुझे अगिनि आपुहि बरि उठे, हँसि हँसि मिले, हुते जे रुठे।
मंद सुगंध पवन अस बहै, जिहि सुबास त्रिभुवन चकि रहै।
मंद मंद अंबुद गन गजे, धर्म के जनु कि दमामे बजे।
१५ तैंसिय बजत देव-दुंदुभी, दुर्जन मन कंटक जिमि चुभी।
हरषे मुनि बर अमर पुरंदर, बरषे सुमन सु सुंदर सुंदर।
निर्तति देवनटी छबि-जटी, लटकै जनु कि छटन की छटी।
सुंदर अर्द्ध रैनि जब गई, अति सिंगार-मई छबि-छई।
तब देवकि तैं प्रगटे ऐसैं, पूरब तैं पूरन ससि जैसैं।
२० पूर्ब जठर मधि नहिं कछु चंद, बादमात्र अस देवकि-नंद।
अद्भुत सिसु कछु परत न कह्यौ, आनकदुंदुभि चहि चकि रह्यौ।
माथे मनिमय मुकट सुदेस, सचिकन सुंदर घुंघरे केस।
कुंडल-मंडित गंड सलोल, मंद हँसनि श्री करत कलोल।
कंचन-माल, मुकत की माल, झिलमिलात छबि छती बिसाल।
२५ सुंदर कंठ सु कौस्तुभ लसै, निकर-बिभाकर दुति कौं हँसै।
गंध लुब्ध जे अद्भुत भृंग, ते आये बनमाली संग।
छबि बावरी साँवरी बाहु, मिटि गयौ हेरत हिय कौ दाहु।
कटि किंकिनि, चरननि बर नूपुर, हौं बलि बलि कीनौ तिन ऊपर।
बसुदेव देखि सु मन मन गुने, ऐसौ बालक होत न सुने।
३० पुनि कीनौ श्रुति-सार-बिचार, मेरे घर ईस्वर अवतार।

कह्यौ हुतौ सु भयौ यह अबै, पूर्न मनोरथ मेरे सबै ।
वढ़्यौं जु आनँद-सिंधु सुहायौ, ताही मैं बसुदेव अन्हायौ ।
दस सहस्त्र गैया रँग भीनी, मन हीं करि संकल्पित कीनी ।
सुद्ध बुद्धि, बत्सल रस भरे, अंजुलि जोरि स्तुति अनुसरे ।
कही कि हो प्रभु ! मैं तुम जाने, प्रकृति तैं परे जु पुरुष बखाने । ३५

पूर्व पक्ष

जौ कहहु कि याकौ कहा लह्यौ, पुरुष तौ प्रकृति परे हौं कह्यौ ।
तहँ तुम सुनहु कमल-दल-नैंन, जहाँ न पहुँचैं श्रुति के बैन ।
मुनि मन जिहिं समाधि मधि हेरे, सो साच्छात दृगन-पथ मेरे ।
प्रभु जु आनि मेरे अवतरे, परम तरुन करुना करि भरे ।
नृप-दल करि बढ़ि असुर बिकारी, कीनी भूमि भार करि भारी । ४०
तिनहिं निदरिहौ भू-भर हरिहौ, संतन की रखवारी करिहौ ।
ऐ परि सावधान इहि बीच, निपटहि बुरौ कंस यह नीच ।
तुम्हरे जनमहि सुनि कै अबै, ऐहै आयुध लीने सबै ।
तदनंतर देवकि अवहेरे, महापुरुष लच्छन सुत केरे ।
मंद मंद मधुरे मुसकाइ, कीनी स्तुति थोरियै बनाइ । ४५
ब्रह्म निरीह जोति अविकार, सत्तामात्र जगत-आधार ।
अरु अध्यातम-दीप जु कोई, बुध्यादिक परकासक सोई ।
सो साच्छात बस्तु तुम आहि, भै-संका ह्याँ कहियै काहि ।
अरु जब लोक चराचर जितौ, लीन होत माया मैं तितौ ।
तब तुम हीं तहँ रहत अकेले, छेमधाम निज रस मैं झेले । ५०

अरु यह मृत्युरूप जो व्याल, संग फिरत नित महा कराल।
जो कोउ सकल लोक फिरि ग्रावै, यातैं अभै न कित हूँ पावै।
कौंनहुँ भागि-जोग करि कोई, तुव पद-पंकज प्रापत होई।
तब भले मीच नीच फिरि जाइ, चरन-सरन गये कछु न बसाइ।
५५ प्रभु यह तुम्हरौ अद्भुत रूप, ध्यान जोग्य, निपट ही अनूप।
अरु प्रभु मो तैं जनम तिहारौ, जिनि जानै यह कंस हत्यारौ।
रूप अलौकिक उपसंहरौ, हे सुंदर बर ! नर बपु धरौ।

पूर्व पक्ष

जौ कहहु कि मो सौं सुत पाई, पैहौ जग मैं बड़ी बड़ाई।
तब तुम सुनहु कमल-दल-नैंन, या अनूप रूप सौं बनै न।
६० जाके जठर मध्य जग जितौ, जथा बिकास रहत है तितौ।
सो मम गर्भ-भूत जो सुनिहै, हँसिहै मोहिं, असंभव मनिहै।
तब बोले श्री हरि मुसकात, जौ तुम या कंस तैं डरात।
तौ मोहिं उहि गोकुल नंद के, लै राखौ आनंदकंद के।
इतनी कहि कै मोहनलाल, देखत भये तनक से बाल।
६५ देवकि दौरि कंठ लपटाये, प्रान तैं अधिक पियारे पाये।
बसुदेव कहैं बिलंब न लाइ, दै मोहिं सुत रिपु जैहै आइ।
लै लटि रही कंठ लपटाइ, अति सुंदर सुत दियौ न जाइ।
पुनि कंस तैं महा डर डरी, पिछले पूतन की सुधि करी।
लीनौ तनक पयोधर प्याइ, फूल सौं जिनि मग मैं कुम्हिलाइ।
७० पुनि पुनि बदन-चंद्रमा चूमि, दीनौ सुत पै अति दुख घूमि।

लयौ लपेटि सु पट बर बाल, वसुदेव चले तुरत तिहि काल।
आपुहि उघरे कुटिल किवार, भोर भये ज्यौं भजत अँध्यार।
पौरिनि परे पहरुवा ऐसैं, अति मादक मद पीये जैसैं।
घुरि आये घन करि अँधियारौ, जान्यौ परै न ज्यौं रबि बारौ।
फुही फूल से परत सुदेस, ते सहि सक्यौ न सेवक सेस। ७५
प्रेम-मगन सु गगन मैं आइ, लयौ फनन कौ छत्र बनाइ।
वसुदेव सुत-मुख के उजियारे, चल्यौ जाइ आनँद भरि भारे।
जम-अनुजा की ढिंग जौ जाइ, वाट न घाट, रही जल छाइ।
उठहि जु लहरि सुधि न कछु परै, चढ़ी गगन सौं बातैं करै।
दृष्टि परि गये मोहन जब हीं, मधि तैं इत-उत ह्वै गई तब हीं। ८०
दीनौ प्रभु कौं मारग ऐसैं, सीतापति कौं सागर जैसैं।
इत सोचति देवकि महतारी, ह्वैहै मेरौ ललन दुखारी।
भरि भादौं की रैनि अँध्यारी, लहलहाति बिजुरी बजमारी।
बहुरचौ बीच कलिंदी कारी, भरि रही नीर भयानक भारी।
चंद सौं बदन दुरचौ नहिं रहिहै, दैया कोऊ दूरि तैं लहिहै। ८५
डोलत बहुत कंस के दूत, दैव कुसर सौं जैहै पूत।
यौं बिललाइ देवकी माइ, कहति कि हो हरि तुमहिं सहाइ।
निरख्यौ जदपि पूत-परभाउ, तदपि प्रेम कौ यहै सुभाउ।
बसुदेव जब गोकुल मैं गये, देखे सब निद्रा-वस भये।
सुत जसुमति की ढिंग पौढ़ाइ, सुता परी तहँ तैं इक पाइ। ९०
लै आये फिरि ताही बाट, तैसैंई जुरि गये कुटिल कपाट।
बैठे बहुरि पहिरि पग बेरी, ज्यौं कोउ गाड़ि धरै धन ढेरी।

जो कोउ जोतिमय ब्रह्ममय, रसमय सब ही भाइ।
सो प्रगटित निज रूप करि, इहि तिसरे अध्याइ॥

चतुर्थ अध्याय

अब चतुर्थ अध्याइ सुनि, परम अर्थ कौ दैन।
संस परी जहँ कंस-जिय, चंड चंडिका बैन॥

बालक धुनि सुनि परी जु रौर, उठे पहरुवा ठौरहि ठौर।
धाये गये कंस के ऐन, अठयौं गर्भ महा भय दैन।
५ सुनतहि उठ्यौ तलपते कंस, कहत कि आयौ काल नृसंस।
कर करवार, सु बगरे बार, न कछु सँभार, महा बिकरार।
उखटत परत, सु बिह्वल भयौ, डरत डरत सूती-गृह गयौ।
बोलि उठी देवकि छबिमई, भैया न डरि भनैजी भई।
याहि न मारि देखि दिसि मेरी, हौं अनुजा मनुजाधिप तेरी।
१० डारे हैं तैं हति बहुतेरे, पावक की उपमा सुत मेरे।
इह इक मो कौं माँगी दीजै, बलि बलि, अति अनीत नहिं कीजै।
नीचन के को सुहृद सुभाउ, तामैं यह नीचन कौ राउ।
चपरि छती तैं लई छड़ाइ, पकरि पाइ ऊँचे उचकाइ।
सिल पर पटकन कौं भयौ जबै, कर तैं निकसि गई सो तबै।
१५ जाइ गगन मैं देबी भई, महा तेज छाजति छबिछई।
राजति राजिवदल से नैंना, बोली बिहँसि कंस सौं बैना।
रे रे मंद! न करि जिय गारौ, उपज्यौ है तुव मारनहारौ।

ताके बचन सुनत ही कंस, विस्मय भयौ, परचौ जिय संस।
कहत कि देवी बानी महा, झूठ परी सो कारन कहा।
देवकि बसुदेव दीने छोरि, विनती करत कंस कर जोरि। २०
अहो भगिनि! अहो भगिनीभर्ता! मो सम नहिंन पाप कौ कर्ता।
राच्छस ज्यौं अपने सुत खाइ, सो मैं कीनी नीच सुभाइ।
ज्यौं ब्रह्महा जीवत ही मरचौ, ऐसौ हौं हूँ बिधना करचौ।
नर तौ जनौ अनृत ही पगे, अमरौ अनृत बकन पुनि लगे।
जिहि बिस्वास सुसा के तात, सौनक ज्यौं मैं कीनी घात। २५
जिनि सोचहु उन के अनुराग, जातैं तुम समझत बड़ भाग।
निज प्रारब्ध कर्म करि बौरे, रहत न सदा जंत इक ठौरे।
तातैं सोक तजहु दुखमई, कर्म-बिबस जु भई सो भई।
छिमा करहु मेरौ अपराध, जातैं दीनबंधु तुम साध।
ऐसैं कहि लोचन जल भरचौ, दौरि सुसा के पाइनि परचौ। ३०
सांत भयौ देवकि कौ रोष, बसुदेव बहु पुनि कीनौ तोष।
आग्या पाइ जाइ घर कंस, कन्या-बचन सुनि परी संस।
रजनी गये भयौ परभात, मंत्रिन सौं बरनी सब बात।
सुनि नृप-बचन असुर भहराने, अमरन पर निपट ही रिसाने।
कहन लगे जौ ऐसैं आहि, महाराज तौ डरौ न ताहि। ३५
दस दस दिन के बालक जिते, हम सब मारि डारिहैं तिते।
को उद्दिम करिहैं सब देव, जानत हैं हम उन के भेव।
अभय ठौर तौ बल्गन करैं, भीर परे तैं थर थर डरैं।
सुरपति कवन अल्प बल जाहि, ब्रह्मा बपुरौ तपसी आहि।

संभु न कछू, तियन तैं बुरौ, रहत इलावृत वन मैं दुरौ।
त्रिष्नु कहूँ इकंत है परचौ, हे राजन तेरे डर डरचौ।
ऐ परि रिपु अलप न जानियै, मर्म दुखद बहुतै मानियै।
कितक होत उह कंटक जैसैं, चरन मध्य कसकत है कैसैं।
अरु ज्यौं अंग रोग अंकुरै, तब हीं जौ न जतन अनुसरै।
तौ वढ़ि जाइ न कछू बसाइ, तातैं कीजै तुरत उपाइ।
प्रथमहि उत्तम मति इह करौ, धरि धरि रूप धरनि संचरौ।
गाइन मारौ मखन बिगारौ, रिषिजन पकरि भछन करि डारौ।
विष्नु के वध कौ इहै उपाइ, हतियै बिप्र, बेद, अरु गाइ।
मंत्रिन मिलि जब यह मत ठान्यौ, दुर्मति कंस महा हित मान्यौ।
संतन कौ बिद्वेस जु आहि, मृत्युमात्र जिनि जानहु ताहि।
आयु, कीर्ति, संपति सब हरै, अवर बहुत अनरथ कौं करै।
आग्या पाइ चले सब सठ वै, ज्यौं कोउ बृकन अजन प्रति पठवै।

बुरौ हौन कौं हौइ जब, तब उपजत ये भाइ।
बेद-बिप्र निंदा करैं, कह्यौ चतुर्थ अध्याइ ॥

पंचम अध्याय

अब पंचम अध्याइ सुनि, जो है माथे भाग।
नंदमहोत्सव नवल घन, बरषैगौ अनुराग ॥

नंद-महर-घर जब सुत जायौ, सुनि कै सबन प्रान सौ पायौ।
नंद उदार परम मुद भरे, फूले नैंनन राजत खरे।

यौं सुत-उदै-पयोनिधि पेखि, बढ़ति है रंग-तरंग बिसेखि। ५
बोले ब्रज के द्विज बड़भागी, जिन के हुती यहै लौ लागी।
स्वच्छ सुगंध सलिल अन्हवाये, बिप्रन चंदन तिलक बनाये।
नंद के भूषन दिखि मन भूल्यौ, जनु आनंद महीरुह फूल्यौ।
विधिवत जातकरम करवाइ, लागे दान दैन ब्रजराइ।
द्वै लख धेनु सबछ बहु दूधी, प्रथम प्रसूता, सुंदर, सूधी। १०
कंचन सींग मढ़ी सोहनी, कंचन की बड्डी दोहनी।
बहुरौ तिल अरु रतन मिलाइ, कीने बड्डे सैल बनाइ।
ऊपर कंचन छादन छाइ, दीने ब्रज के द्विजन बुलाइ।
अवर बहुत दीनौ ब्रजराज, अपने कुल-मंडन के काज।
तिहि छिन नंद-सदन की सोभा, नहिं कहि परत लगत जिय लोभा। १५
इत जु बेद-धुनि की छबि बढ़ी, मंगल बेलि सी त्रिभुवन चढ़ी।
इत मागध सु बंस जस पढ़ैं, इत बंदीजन गुनगन रढ़ैं।
गावत इत जु रागिनी राग, चुये परत जिन के अनुराग।
आनँदघन जिमि दुंदुभि बजैं, जिन सुनि सकल अमंगल भजैं।
सुनि कै गोप महा मुद भरे, चले महरि-घर रंगनि ररे। २०
पहिरे अंबर सुंदर सुंदर, जे कब हूँ निरखे न पुरंदर।
मंगल भेंट करन मैं लिये, मैन से लरिकन आगे किये।
गोपी मुदित, भयौ मन भायौ, महरि जसोदा ढोटा जायौ।
प्रफुलित ही सो लागति भली, को है प्रात कमल की कली।
कुंकुम-रस रंजित मुख लौने, कनक-कमल अस नाहिंन हौने। २५
चली तुरत सजि सहज सिँगार, छतियन उछरत मोतियन हार।

श्रवननि मनि कुंडल झलमलैं, बेगि चलन कौं जनु कलमलैं।
चले जु चपल नैंन छबि बढ़े, चंदन मनहुँ मीन हे चढ़े।
सुसम कुसम सीसन तैं खसे, जनु आनंद भरे कच हँसे।
३० हाथनि थार सु लागत भले, कंजनि जनु कि चंद चढ़ि चले।
मंगल गीतन गावति गावति, चहुँ दिसि तैं आवति, छबि पावति।
नंद-अजिर मैं लगी सुहाईं, जनु ये सब कमला चलि आईं।
छिरकत सबन हरद अरु दही, तब की छबि कछु परत न कही।
सुंदर मंदिर भीतर गई, जसुमति अति आदर करि लई।
३५ लै लै अंचल ललित सुहाइ, चूमे सबहिन सिसु के पाइ।
पौढ़े ललन जसोमति आगे, झीनें पट मैं नीके लागे।
बदन उघारि उघारि निहारैं, देहिं असीस अपनपौ वारैं।
हो हरि! यह लरिका चिर जीजौ, बहुत काल हम कौं सुख दीजौ।
ब्रज की छबि कछु कहत बनैं न, जहँ आये श्री पंकज-नैंन।
४० घर औरै, अंगन कछु और, जगमग जगमग ठौरहि ठौर।
नग जु लगे, यौं बने सुहाये, गृहन के जनु कि नैंन ह्वै आये।
मुक्ता-वंदनमाला लसैं, जनु आनंद भरे घर हँसैं।
धाम धाम प्रति धुजन की सोभा, जनु निकसी ब्रज-छबि की गोभा।
जितिक हुती ब्रज गो, बछ, बाछी, तेल-हरद करि आछी काछी।
४५ माथे मनिमय पटी बनाई, कंचन दाम सबन पहिराई।
तब नंद जू गोपगन जिते, बैठारे मनि आँगन तिते।
नव अंबर सुंदर मनिमाला, पहिराये सब जन तिहि काला।
पुनि जितीक गोपी जन आई, ते रोहिनीन सबहि पहिराई।

कंचन पट, पदकन के छरा, सुंदर गजमोतिन के हरा।
औरौ जन जे कौतुक आये, नंद-महर ते सब पहिराये। ५०
मंगत जन परिपूरन भये, दारिद हू के दारिद गये।
तब तें ब्रज-छबि अस कछु लसी, रमा रीझि कै तहँई बसी।
मास दिवस के मोहनलाल, कछुक भये मुँहचहे रसाल।
सुंदर वदन बिलोके नंद, छिन छिन पावत परमानंद।
रंचक द्वार-सभा मैं जाहि, बहुरचौ नंद भवन उठि आहि। ५५
दिन दिन वढ़त अंग की कांति, निरमल बाल इंदु की भाँति।
ऐसैं माँझ महा दुख पायौ, कंस कौ कर देनौ दिन आयौ।
रच्छक राखि घोष मैं भले, मथुरा नगर नंद जू चले।
तन आगे, मन पाछे ऐसैं, दंड के संग पताका जैसैं।
तुरत जाइ नृप कौं कर दियो, ब्रजपति ब्रज चलिबे कौं भयौ। ६०
समाचार बसुदेव जु पाये, सखहि मिलन सुनतैं ही आये।
निरखि जु उठे नंद भरि नेह, ज्यौं प्रानन के आये देह।
जैसैं मीत-मिलन है कह्यौ, सो बसुदेव नंद के लह्यौ।
बैठे परम प्रेम-रस पागे, बसुदेव बात कहन अस लागे।
अहो भ्रात बड़ मंगल भयौ, बिधना तुमरे पूत जु दियौ। ६५
बड़े भये हे करत बिलास, कौंनै हुती पूत की आस।
अरु हम मिले भयौ मनभायौ, फिरि कै बहुरि जनम सौ पायौ।
सब ह्वै आवै अपने ढार, मीत-मिलन दुर्लभ संसार।
जौ कबहूँ काहू संजोग, आनि मिलहिं जे प्रीतम लोग।
तौ ये नाना कर्म बिचित्र, इकठे रहन न पावैं मित्र। ७०

जैसें नदी तरंगन पाइ, मिलत है आठ-काठ बहि आइ।
बहुरि जु कोउ लहरि उठि आवै, पकरि पकरि धौं कितहि बहावै।
पुनि पूछत सुत की कुसरात, गदगद कंठ, फुरत नहिं बात।
अहो भ्रात ! वह तात हमारौ, नीकौ है रोहिनी-पियारौ।
७५ तुम करि तोपित-पोपित गात, तुम हीं समझत ह्वैहौ तात।
जदपि अर्थ धर्म अरु काम, इन करि भरयौ पुरुष कौ धाम।
अहो नंद ! तदपि न सुख कोई, सुहृदन कौ बियोग जहँ होई।
नंद समोघत ताकौ चित्त, सब अदिष्टबस होत है मित्त।
जौ तो निपट बिकूल बिधात, केते हते कंस तुव तात।
८० कन्या एक जु पाछे भई, सु पुनि अदिष्ट लई, उड़ि गई।
है सब उहि अदिष्ट के धोरे, बिछुरे मिलवै, मिले बिछोरे।
नंद की वानी दैवी जानी, मिलिहै मोहिं सुत, यौं जिय आनी।
तब कही अहो बेगि तुम जाहु, पूतहि रंचक जिनि पतियाहु।
ये दिखि फरकत मेरे गात, ब्रज मैं आहि कछू उतपात।
८५ सुनतहि बचन नंद कलमले, कवन पवन ऐसी बिधि चले।
प्रेम-रपट बिच परी जु आइ, रंचक सूधे परत न पाइ।
इहि प्रकार पंचम अध्याइ, जो कोउ सुनै तनक मन लाइ।
दीपमान सो मुक्ति न गहै, और छुद्र सुख की को कहै।
जदपि नित्य किसोर हरि, बैंदत बेद इमि बैन।
९० सबै बैस सुख दैन ब्रज, प्रगटे पंकज-नैंन ॥

षष्ठ अध्याय

सुनि लै छठौ अध्याइ अब, अहो मित्र अति चित्र।
जहाँ सकल मल कौ हरन, बकी चरित्र पवित्र ॥

सोचत चले नंद मग माहीं, बसुदेव बचन मृषा तौ नाहीं।
हो हरि ईस्वर, सरन तुम्हारी, वा सिसु की कीजहु रखवारी।
इक तौ सहजहि हुती नृसंस, पुनि चेरी करि प्रेरी कंस। ५
ग्राम, नगर, पुर, पट्टन जिते, मास बीच के बालक तिते।
चली पूतना सिसुन सँघारति, केउ पटकति केउ खाइहि डारति।
इहि बिधि विचरति विचरति बकी, इक दिन ब्रज आई तक तकी।
श्री सुक यौं जब कही सुभाइ, राजा सुनत बिकल ह्वै जाइ।
ताकौ समाधान सुक करै, हे राजन ! इहि डर जिनि डरै। १०
नाममात्र जिहि प्रभु कौ जहाँ, ऐसन कौ प्रभाउ नहिं तहाँ।
सो साच्छात नंद कौ धाम, भै-संका कौ इहाँ न काम।
अद्भुत बनिता-बेष वनाइ, अँग अँग रूप अनूप चुचाइ।
ललित सु भूषन, ललित दुकूल, खसि खसि परत सीस तैं फूल।
कंठ मैं हीरा, आनन बीरा, पाइनि बाजत मंजु मँजीरा। १५
लटकि चलत तब को छबि गनौं, परिहै टूटि लटी कटि मनौं।
कमल फिरावत नयन डुरावति, मधुर-मधुर मुसकति, छबि पावति।
गोप रहे सब जोहे मोहे, जानहिं नहिंन कछू हम को हे।
गोपी चकित चाहि कै ताहि, कहन लगी कि रमा यह आहि।
अपने पिय कौं देखति डोलति, यातैं नहिं काहू सौं बोलति। २०

करिकन लहति लहति छबिछई, नंद के सुंदर मंदिर गई।
आछी बनक कनक कौ पलना, पौढ़े तहाँ तनक से ललना।
स्यामल अंग सु को छबि गनौं, मृदुल नीलमनि पुतरी मनौं।
बाल भाउ मैं दुरि रहे ऐसैं, तीछन अगिनि भसम मधि जैसैं।
२५ आवत तकी बकी जब ऐना, मूँदे नैंन कमल-दल-नैंना।
मेरे हेरत बेस कपट कौ, रहिहै नहीं पूतना अटकौ।
यातैं मूँदि रहे दृग नाथ, विस्व चराचर जाके हाथ।
मुसकति मुसकति तहँ चलि गई, लालहि लपकि लेत ही भई।
देखत कौ तौ छुटनौ बाल, ऐ परि आहि काल कौ काल।
३० सोवत परचौ भुजंगम जैसैं, रज्जु-बुद्धि कोउ गहत है तैसैं।
अस कछु रूप-प्रेम करि छई, जसुमति पुनि न निवारति भई।
जैसैं तीछन अति करवार, ऊपर रतन-जटित परिवार।
जसुमति कहति चाहि कै ताहि, हौं जननी, कि जननि यह आहि।
आई है जो जुगति बनाइ, तरल गरल दुहुँ थनन लगाइ।
३५ प्यार सौं ललन पियावन लगी, चूमति जाति कपट-रस-पगी।
इक कुच मुख, इक कर मैं लिये, पियत गोबिंदचंद मन दिये।
इकलौ बिष अपथ्य दुखदाइ, लीने ताके प्रान मिलाइ।
पियत भये सुंदर नँद-नंद, मुसकत जात मंद छबि-कंद।
अँग अँग बिथित भई जब भारी, कहति कि छाँड़ि छाँड़ि हौं वारी।
४० छाँड़त क्यौं, है भूखौ बालक, जगपालक, ऐसैंई घरघालक।
छुटै न सिसु अपनौ सौ पची, कनक सौं जनु कि नीलमनि खची।
तब धरि अपनौ रूप चिघारी, भयौ जु नाद भयानक भारी।

सुर्ग रसातल, भूतल जेतौ, सब कलमल्यौ, हलमल्यौ तेतौ।
दोउ कुच पकरि उचकि वह नारी, लै डारी गोकुल तैं न्यारी।
षट कोस के लता-द्रुम जिते, चूरन ह्वै गये तिहि-तर तिते। ४५
जे द्रुम-लता निपट प्रतिकूल, हुते न गोकुल के अनुकूल।
ते तिहि तन-तर चूरन करे, उबरे जे ब्रज-हित करि भरे।
प्रथमहि ताके नाद जु डरे, ब्रज-जन जहाँ तहाँ गिरि परे।
पाछे उठि उठि देखन धाये, देखि रूप अति त्रासहि पाये।
मुँह-बाये जु परी बिकरार, तपत ताम्र से बगरे बार। ५०
हल-दंड से बड़े बड़े दंत, गिरि-कंदर-सम नासा-दंत।
अंध कूप से नैंन गँभीर, बैठि जु गये प्रान की पीर।
उदर भयंकर लागत ऐसौ, बिनु जल महा सरोवर जैसौ।
जघन सघन जु भयानक भारे, महानदी के जनु कि किनारे।
ताके उर पर सुंदर बाल, खेलत अभय, सु नैंन बिसाल। ५५
जे पद रहत भगत-जन हिये, लालति ललित भाँति श्री लिये।
मुनि-मन जिनहिं पत्यात न रती, ते पद बिलुठत ताकी छती।
गोपी परम प्रेम-रस-बोरी, फिरति पूतना तन पर दौरी।
ललहि उठाइ छती लपटाइ, लै आई जहँ जसुमति माइ।
ब्रजरानी अनेक धन वारति, पुनि पुनि राई लौन उतारति। ६०
गोमूत्र लै ललहि अन्हवाइ, गोरज, गोमय अंग लगाइ।
हरि के द्वादस नामन करि कै, रच्छा करी ब्रज तियन डरि कै।
नीकौ भयौ, पयोधर प्यायौ, जननी-जठर जीउ तब आयौ।
बदन चूमि जसुमति यौं भाख्यौ, आज पूत परमेसुर राख्यौ।

६५ तब लौं नंदादिक ब्रज आये, ताहि निरखि अति बिस्मय पाये ।
लै लै तीच्छन धार कुठार, छेदे ताके अंग करार ।
करखि-कढ़ोरि दूरि लै गये, बहुत काठ दै दाहत भये ।
अचरिज नहिं जु कृष्न भगवान, ताकौ कियौ पयोधर पान ।
सिसु-घातिनी, परम पापिनी, संतन की डसनी साँपिनी ।
७० बहुरचौ हरि कौं मारन गई, सु तिय मुक्ति की रानी भई ।
जे जन श्रद्धा करि अनुसरैं, मधुर वस्तु लै आगे धरैं ।
तिन की कौंन कहि सकै कथा, गोकुल की गो-गोपी जथा ।
सूँघत सूँघत ब्रजजन जिते, नंद-महर-घर आये तिते ।
समाचार सुनि बिस्मय पाये, ललहि निरखि दृग जरत जुड़ाये ।
७५ नंद परम आनंदहि पाइ, लीनौ तनय कंठ लपटाइ ।
कही कि जहँ गयौ कोउ न आयौ, तहँ तैं मैं यह ढोटा पायौ ।
कीनी बहुरि बधाई नंद, दीने बहु धन, गोधन-बृंद ।
यह जु पूतना-चरित्र विचित्र, छठे अध्याइ सु परम पबित्र ।
जो इहि हित सौं सुनै-सुनावै, सो गोबिंद बिषै रति पावै ।
८० दानव-कुल भोजन बिबिधि, कियौ चहत भगवान ।
प्रान पूतना के मनहुँ, किये प्रथम सोपान ।।
'नंद' न डरि, हिय हेतु करि, उर धरि छठौ अध्याइ ।
पूत भई जहँ पूतना, प्रभुहि अपेइ पिवाइ ।।

सप्तम अध्याय

अब सप्तम अध्याइ सुनि, सुंदर श्रुति कौ सार।
जामैं लाल रसाल कौ, बालचरित-मधुधार ॥

सुनि सप्तम अध्याइ उदार, जामैं बालचरित-मधुधार।
जिहि रस-सिंधु मगन भयौ राजा, फिरि पूछै सुक अति सुख काजा।
हो प्रभु ! हरि कौ बालचरित्र, अति बिचित्र अरु परम पबित्र। ५
जदपि अवर हरि के अवतार, मंगलरूप सकल श्रुति-सार।
पै यह बालचरित-मधुधार, या सम कछु न अवर संसार।
पियत तृपति मानत नहिं कान, औरौ कहौ जानमनि जान।
फुरे जु बालचरित-रस-रंग, कहन लगे सुक पुलकित अंग।
इक दिन आपुहि करवट लई, जननी निरखि मुदित अति भई। १०
बोलि सबै गोकुल की बाला, उत्सव किये महा तिहि काला।
सकट के अध धरि कंचन-पलना, सुतहि सुवाइ नंद की ललना।
विदा करन लोगन कहुँ लगी, डोलत सुत-सनेह रँगमगी।
रतन मिलै तिल-चावल कीनी, भरि भरि गोद सबन कौं दीनी।
पूत उदै के हित ललचाइ, मति कोउ मन मैलौ करि जाइ। १५
लगी जु भूख ललन जब जगे, मधुर मधुर तब रोवन लगे।
पलना ढिंग बालक जब आइ, निरखे हरि बालक के भाइ।
कबहूँ किलकि किलकि कल केलत, चरन-अँगूठा मुख मैं मेलत।
जसुमति रुदन सुनति नहिं भई, अति आनंद मगन ह्वै गई।
बरहे चरत फिरत ज्यौं गाइ, सब मन रहत बच्छ मैं आइ। २०

तहँ अभिचार असुर इक सटक्यौ, दौरि कै सकट विकट मैं अटक्यौ ।
ललन कौं दलन जबहिं वह नयौ, तब तहँ अदभुत कौतुक भयौ ।
ननक जु वाम चरन यौं करयौ, उड़ि कै जाइ उड़नि मैं ररयौ ।
बड़ौ सकट जब उलटौ परयौ, दिखि सब लोग अचंभे भरयौ ।
२५ धाइ गई तहँ जसुमति मैया, कहत कि कहा भयौ यह दैया ।
तान्तर पूत कुसर सौं पायौ, जननी जठर जीउ तब पायौ ।
नंदादिक तहँ धाये आये, सकट बिलोकि सु बिस्मय पाये ।
तिन सौं कहन लगे सिसु बात, अहो महर ! यह तेरौ तात ।
ननक चरन ऐसैं करि करयौ, तौ यह सकट उलटि है परयौ ।
३० कहत कि कह जानहिं ये बारे, उलटत कूट कमल के मारे ? ।
सबन कही कि नंद बड़भागी, लरिकहि रंचक आँच न लागी ।
तब तैं नंद महर की ललना, पूतहि परयौ पत्याइ न पलना ।
इक दिन ललन लिये दुलरावति, लाल के बालचरित कछु गावति ।
तृनावर्त जान्यौ आवतौ, कियौं चहत ताकौ भावतौ ।
३५ मात सहित जौ मोहिं उड़ैहै, तौ मेरी मैया दुख पैहै ।
तातैं ललन भयौ अति भारी, चकित भई जसुमति महतारी ।
थँभ्यौ न सिसु, अपनौ सौ करयौ, तब धरनीधर धरनी धरयौ ।
आयौ बातचक्र रिस भरयौ, धुनि सुनि सब गोकुल थरहरयौ ।
उड़वत धूरि, धरे काँकरी, सबन के दृगनि परी साँकरी ।
४० लै गयौ लरिकहि गगन उड़ाइ, तरफत फिरत जसोमति माइ ।
मूँदे लोचन, ढूँढ़ति डोलति, रे कित गयौ पूत, यौं बोलति ।
जितहि धरयौ हौं तित नहिं पायौ, जसुमति जिय धौं कित बिरमायौ ।

परी धरनि धुकि यौं विललाइ, ज्यौं मृत बच्छ गाइ डिडियाइ ।
जसुमति-धुनि सुनि धाई गोपी, आई महा बिरह-रस-ओपी ।
गिरि गई जसुमति ढिंग-ढिंग ऐसी, कंचन-बेलि पवन-वस जैसी । ४५
त्रिभुवन कौ जु भार हो जितौ, श्री हरि उदर धरचौ हो तितौ ।
बदियै तृनावर्त बल जुड़्यौ, ऐसैं लरिकहि लै नभ उड़्यौ ।
थोरिक दूरि गयौ रँगमग्यौ, पुनि अति भार भरचौ डगमग्यौ ।
कहत कि वह सिसु हाथ न आयौ, यह कोउ गिरिबर जाइ उठायौ ।
लरिकहि डारन कौं अरबरे, लरिका डरपि घुरि गयौ गरे । ५०
गर के गहत निचष्टित भयौ, दृगन की बाट निकसि जिउ गयौ ।
तव वह महा असुर खरहरचौ, व्रज के वीच सिला पर परचौ ।
किरच किरच टुटि-फुटि गयौ ऐसैं, हर सर हत्यौ तिपुर रिपु जैसैं ।
ताके उर पर मोहनलाल, खेलत अभै, सु नैंन बिसाल ।
गोपिन धाइ जाइ सिसु लयौ, आनि जसोदा गोद मैं दयौ । ५५
सुनि कै सब जन धाये आये, निरखि रूप अति विस्मय पाये ।
चूमत वदन नंद बड़भागी, पौंछत रेनु तनय-तन लागी ।
कहत कि कवन पुन्य हम कियौ, हरि अरचे कि दान बहु दियौ ।
काल के मुख मैं वालक गयौ, तहँ तैं बहुरि विधाता दयौ ।
पापी अपने पापहि मरै, साधु की रच्छा ईस्वर करै । ६०

दीपक प्रगटचौ नंद-घर, निर्मल जोति अभंग ।
उड़ि उड़ि परन लगे जहाँ, दानव दुष्ट पतंग ।।

तृनावर्त आवन मैं बाल, भयौ जु अति भारी तिहि काल ।
जननी के जिय संका रहै, हरि वह भार जनायौ चहै ।

६५ इक दिन ललन लियें गोद मैं, जसुमति मगन महा मोद मैं।
बैठी मधुर पयोधर प्यावति, मुँह अंगुरि दै दै मुसकावति।
अरुन अधर दँतियन की जोती, जपाकुसुम मधि जनु बिवि मोती।
ललनहि तनक जँभाई आई, तव जसुमति अति बिस्मय पाई।
धर, अंबर, सूरज, ससि, तारे, सर, सरिता, सागर, गिरि भारे।
७० विस्व चराचर है यह जितौ, सुत-मुख मध्य बिलोक्यौ तितौ।
नैंन मूँदि रही अति भय भरी, बहुरि विचार परी, सुधि करी।
कहन लगी इह ईस्वर कोई, जाकी चितवनि मैं जग होई।
वहुरि उदर मधि राखत जोई, मेरे घर इह बालक सोई।
ऐसैं करि जब 'जसुमति जाने, तव हरि हँसि कै गर लपटाने।
७५ पुत्र सनेहमई रसमई, माया जननि उपर फिरि गई।
ईस्वरता कछु नहिं दुरी, सब कोउ जानत ताहि।
सो प्रभु सुत करि पाइबौ, यह अति दुस्तर आहि॥

अष्टम अध्याय

अब अष्टम अध्याइ सुनि मित्र, नामकरन मन-हरन पबित्र।
सुत-मुख-मध्य बिस्व जब चह्यौ, सो जसुमति ब्रजपति सौं कह्यौ।
ब्रजपति हू के मन भै गयौ, नामकरन जु नाहिंनैं भयौ।
तब हीं गर्ग पुरोहित आयौ, नाम करन बसुदेव पठायौ।
५ ताहि निरखि अति हरखे नंद, बरखे तन-मन परमानंद।
प्रथम अमी-बचनन करि अरचे, बहुरचौ चंदन-बंदन चरचे।

कही कि तुम परिपूरन नाथ ! रिधि-सिधि-निधि सब तुम्हरे हाथ।
कवन वस्तु करि पूजा कीजै, ज्यौं दिनमनि कौं दीपक दीजै।
महापुरुष जो चलत ठौर तैं, नहिं कछु चाहत काहु और तैं।
कृपन जु गृह-ममता करि बँधे, चलि न सकत दृढ़ फंदन फँधे। १०
केवल तिन कौ करन कल्यान, दिखियत नहिंन प्रयोजन आन।
ज्योतिसास्त्र जु अतींद्रिय ग्यान, ताके तुम हीं बीज निदान।
पूर्ब-जन्म जु सुभासुभ करै, जा करि जंतु जगत संचरै।
आगे होनहार पुनि जोई, प्रभु तुम सम्यक जानत सोई।
नामकरन लरिकन कौ कीजै, कवन सु बिधि मोहिं आयसु दीजै। १५
गर्ग कहत अहो सुनि ब्रजराज ! यातैं अवर न उत्तम काज।
ऐ परि हौं गुर जदु-बंस कौ, मोहिं बड़ौ डर वा कंस कौ।
सुनि पावै नीचन कौ राइ, तौ तौ हौइ बड़ौ अन्याइ।
नंद कहत तौ ऐसैं करौ, गृह-मधि गुपत ठौर अनुसरौ।
तनक स्वस्ति-बाचन करि लीजै, लरिकन कछू नाँउ धरि दीजै। २०
गर्गहि अरग गये लै नंद, अगिनिहोत्र करि मंदहि मंद।
प्रथम रोहिनी-सुत के नाम, धरन लग्यौ द्विज सब गुन-धाम।
याकौ एक नाम संकर्षन, जन-हर्षन, सब के मन-कर्षन।
बहुरचौ राम परम अभिराम, अति बल तैं कहिहैं बलराम।
अब सुनि अपने सुत के नाम, अद्भुत अद्भुत गुन के धाम। २५
इक श्री कृष्न नाम अस ह्वैहै, ससि-सम सुधा सबन पर च्वैहै।
कबहूँ पूर्ब-जन्म सुत तेरौ, पूत भयौ हे बसुदेव केरौ।
तातैं बासुदेव इक नाम, पूरन करिहै सब के काम।

याके अवर जु नाम अनंत, गनन गनत कोउ लहै न अंत ।

३० कहत है द्विजवर भरि आनंद, वहुत कहा कहियै हो नंद ।

नाराइन मधि गुन हैं जिते, तेरे सुत मधि झलकत तिते ।

छवि, संपति, कीरति रसमई, नाराइन हू तैं अधिकई ।

सुनि कै नंद परम आनंदे, वार वार द्विजवर-पद बंदे ।

जसुमति ताहि बहुत कछु दयौ, गरग अरग लै मथुरा गयौ ।।

३५ अव सुनि सुंदर बाल-बिनोद, देत जु नंद-जसोदहि मोद ।

जानुपानि डोलनि जगमगे, मनिमय आँगन रेंगन लगे ।

सोहे सचिकन कच घुँघरारे, को हे मधुकर मधु-मतवारे ।

अंजन-जुत नैंना मनरंजन, बलि कीने छबि-हीने खंजन ।

लटकन लटकत ललित सु भाल, बनि रहे रुचिर चखौंडा गाल ।

४० तनक तनक सी नाक-नथूली, फवि रही नील सु पीत झगूली ।

जटित बघूली छतियन लसै, द्वै द्वै चंद-कलन कौं हँसै ।

कटि-तट किंकिनि पैंजनि पाइनि, चलत घुटुरुवनि तिन के चाइनि ।

निज प्रतिबिंब निरखि चकि रहै, पकरयौ चहै अधिक छबि लहै ।

लपटि जु रही दही मुख-कंजनि, परति न कही महरि मन-रंजनि ।

४५ बिवि केहरि-नख हरि-उर सोहत, ढिँग ढिँग दधि-कन मो मन मोहत ।

नखत-मंडली-मधि दुति जसी, जुरि निकसे द्वै द्वैज के ससी ।

किलकि किलकि घुटुरुनि की धावनि, डरपि कै जननि निकट फिरि आवनि

मैयन की वह गर-लपटावनि, चूमनि मधुर पयोधर प्यावनि ।

ठाढ़े हौन लगे रँगमगे, धरत जु धरनि चरन डगमगे ।

५० अँगुरि गहाइ सु मंदहि मंद, ललनहि चलन सिखावत नंद ।

झुनुक मुनुक वह पगन की डोलनि, मधुर तैं मधुर तोतरी बोलनि ।
आपुहि ललन चलन अनुरागे, दौरि पौरि लगि आवन लागे ।
अपने रंगन खेलत मोहन, जसुमति डोलति गोहन गोहन ।
अगन तैं, खगन तैं, नगन तैं डरै, जसुमति भाखति राखति फिरै ।
दिखि दिखि बालचरित अभिराम, विसरे सबन धाम के काम ।　　५५
लै ब्रज-बालक अपनी बयस के, दधि माखन की चोरी चसके ।
मोहन मंत्र सौ घर घर डोरत, दधि-माखन चोरत, चित चोरत ।
जब घर आवहि मोहनलाल, अंतर सहि न सकत ब्रज-बाल ।
उरहन मिस मिलि नंद-निकेत, आवति मुख-छबि देखन हेत ।
अहो महरि ! यह तुम्हरौ तात, कहा कहैं हम याकी बात ।　　६०
असमय देइ बछरुवन छोरि, ठाढ़ौ हँसै खरिक की खोरि ।
चोरि चोरि दधि-माखन खाइ, जौ हम देहिं तौ देइ बगाइ ।
धाम कौ काम करचौ ही चहियै, कब लगि धाम धसे ही रहियै ।
जब कोउ रंचक इत उत जाइ, अरग अरग गृह-अंतर आइ ।
नूपुर, किंकिनि लेइ छिपाइ, सखन खवावै आपुन खाइ ।　　६५
अस बड़ चोर कहि न कछु आवै, चपरि कै चखन तैं मसिहि चुरावै ।
यह सुनि आनँद भरि नँद-रानी, तिन सौं कहति मुसकि मधु बानी ।
बलि बलि तौ तुम ऐसैं करौ, दिन दस भाजन ऊँचे धरौ ।
जब लगि याकी बुद्धि अयानी, तब लगि तुम ही हौहु सयानी ।
हो जसु ! जौ कोउ ऊँचे धरै, तहँ तुम सुनहु जु जतनन करै ।　　७०
ता-तर आनि उलूखल नावै, ऊखल पर इक सखहि चढ़ावै ।
ता पर आपुन चढ़ि कै खाइ, चोर लौं इत उत चितवत जाइ ।

बहुरचौ बुद्धिवंत अति आहि, तैसौई छिद्र बनावै ताहि।
मुख तैं दधिकन गिरि गिरि परैं, चंद तैं जनु मुक्ताफल झरैं।
७५ घर की जब घर द्वारे आवै, उतरि कै ताके सनमुख धावै।
मुख भरि खीर नयन भरि ताके, चपरि जाइ ये चरित हैं याके।
ऊधम अवर सु कहियै काहि, तुम्हरे निकट साधु जनु आहि।
भै भरे चखन चूमि नँद-रानी, तिन सौं बहुरि कहत मधु बानी।
वारी तौ तुम ऐसैं करौ, लै दधि-दूध अँध्यारे धरौ।
८० तहाँ कहति गोपी छबि ओपी, इहि रस जिनहि क्रिया सब लोपी।
अहो महरि ! ऐसैं हूँ करचौ, लै दधि-दूध अँध्यारे धरचौ।
कोटि दिया सम अंग सुहाये, पुनि मनि-भूषन तुमहिं बनाये।
जहँ यह जाइ तुम्हारौ बारौ, कवन भवन जिहिं रहै अँध्यारौ।
बोली अवर एक ब्रज-बाला, हरि तन मुसकि सु नयन बिसाला।
८५ अहो ब्रजेस्वरि ! सुनि इक बात, मेरे घर यह तुम्हरौ तात।
ढुकत ढुकत इकलौई गयौ, तहँ इक अद्भुत कौतुक भयौ।
मनि-खंभ के निकट मथि दह्यौ, माखन सहित धरचौ हो मह्यौ।
लौनौ लेन गयौ तहँ जाइ, मनि-खंभ मैं निरखि निज झाँइ।
अवर लरिक की संका पाई, तासौं ठाढ़ौ कितौ लिलाई।
९० कहत कि यह माखन सब लीजै, अहो मित्र हठ नाहिन कीजै।
नित ही मेरे गोहन रहौ, ऐ पर मैया सौं जिनि कहौ।
यह सुनि बिहसि परी नँद-रानी, चूमति बदन बोलि मृदु बानी।
धूरि धूसरित निरखि सु गात, पौंछति मात कहति यौं बात।
बलि बलि कत कौ पर घर जाहु, घर बहुतेरौ माखन खाहु।

अद्भुत सिसु कछु समझि न परै, सब विधि सब ही के मन हरै। ९५
कबहुँक दिखियै माखन चोर, कबहूँ झलकै नवल किसोर।
ऐसैं सब ब्रज कहुँ मधु प्यावत, मधि मधि ईस्वरता दिखरावत।
मधुर बस्तु ज्यौं खात है कोई, बीच अमल रस रुचिकर होई।
सिसुन कौं कहि राख्यौ जसु माइ, दिखियहु बलि यह चपल कन्हाइ।
माटी खाइ सलिल मैं जाइ, बलि बलि मो सौं कहियहु आइ। १००
इक दिन तनक कहूँ हरि वारे, मुख मेली माखन मो हारे।
धाइ गये सिसु जहँ जसु माई, तेरे कान्हर माटी खाई।
सुनि सहि सकी न इतनी बात, हित-ईषनी जसोमति मात।
धाइ जाइ गहि कै विवि पानि, डाटन लागी आँगन आनि।
रे रे चपल-गात, अनियाई, क्यौं तैं दुरि कै माटी खाई। १०५
ये सिसु सबै कहत यह बात, अरु यह तेरौ अग्रज भ्रात।
भै भरी अँखियन कहत कन्हैया, मैं माटी नहिं खाई मैया।
ये सब मिथ्याबादी आहि, इन के कहें न तनक पत्याहि।
जसुमति कहति कि अग्रज तेरौ, यह तौ झूँठ न बोलत मेरौ।
तब हरि कहत कि जौ न पत्याहि, मैया तौ मेरौ मुख चाहि। ११०
जननी कहति तौ बदन दिखाइ, डरपे कुँवर दियौ मुख बाइ।
बदन मध्य जौ जसुमति चहै, सगरौ बिस्व चराचर अहै।
प्रथम चह्यौ भूगोलक तहाँ, दीप, समुद्र, सरित, गिरि जहाँ।
जोति-चक्र, जल, तेज, समीर, अगिनि, अरक, ससि, तारक भीर।
इंद्री अरु इंद्रिन के देव, सतगुन, रजगुन, तमगुन भेव। ११५
काल, कर्म, सुभाउ अरु जंत, बुद्धि, चित्त, मन मूरतिवंत।

पुनि अपन पै सहित ब्रज देखि, जसुमति चकित भई सु बिसेखि।
तहँ पुनि सुतहि लिये कर साँटी, डाटति ज्यौं न भखन करै माटी।
तब जसुमति अति संभ्रम भरी, इत उत चहि बिचार अनुसरी।
१२० कहन लगी कि सुपन नहिं होई, जागति हौं कछु नाहिंन सोई।
अरु नहिं हरि ईस्वर की माया, परती तौ सबहिन पर छाया।
जनु यह सिसु दर्पन सम करयौ, जग-प्रतिबिंब जासु मधि परयौ।
पुनि प्रतिबिंब बिंब मैं कैसैं, देखति हौं या सिसु मैं तैसैं।
बहुरि कहति दिखियत यह जितौ, जाकी माया करि सब सुतौ।
१२५ ऐसैं जब निश्चय करि जाने, तब हरि हँसि कै उर लपटाने।
अपनी प्रेममई दिढ़ मया, जननी पर डारी करि दया।
सुनि कै नृपति महा मुद भरयौ, पूछत सुकहि प्रेम रँग ढरयौ।
कवन कर्म कीनौ अस नंद, पायौ परम उदय कौ कंद।
महा भाग जसुमति कौ कियौ, ताकौ मधुर पयोधर पियौ।
१३० अरु ये अद्‌भुत बालचरित्र, हियौ हरत जग करत पबित्र।
गावत कवि बर रंगन भरे, बिबुध सुधारस नीरस करे।
ते सुख तिन के कानन परे, जिन के हित हरि इत अवतरे।
श्री सुक कही कि हे नृप सत्तम! सब तैं प्रेम भगति रति उत्तम।
निरवधि बत्सल रस जो आहि, निगमहु अगम कहत हैं जाहि।
१३५ सो बत्सल रस ब्रज है नंद के, घर घर प्रति आनंद कंद के।
नंदज परमानंद है कोई, ताकी मूरति ब्रज मैं सोई।
ऐसैं समाधान सुक कियौ, रस करि भरि राख्यौ नृप हियौ।
कही कि बालचरित कछु और, बरनन करौ रसिक-सिरमौर।

डरे जु जननी डाट तैं, साँट निरखि पुनि हाथ।
मुख मैं बिस्व दिखाइ कै, वचे नाथ इहि साथ ॥ १४०
'नंद' न डरि भव-ब्याल तैं, बालचरित-मधु पाइ।
श्रवन-पुटन करि पान करि, इहि अष्टमौ अध्याइ ॥

नवम अध्याय

अब सुनि मित्र नवम अध्याइ, जामैं अद्भुत अद्भुत भाइ।
जोगीजन मन ढूँढ़त जाकौं, बाँधैगी हठि जसुमति ताकौं।
इक दिन भोरहि उठि नँदरानी, आपुहि मंजु मथानी आनी।
थोरौई दूध पूत के हित ही, राखति जसु जमाइ नित नित ही।
और जु नंदमहर घर दह्यौ, कितक आहि कछु परत न कह्यौ। ५
प्रेरी तहाँ अनेक जु दासी, मंथन करैं सबै कमला सी।
ठाँ ठाँ मधुर मथानी बजैं, जनु नव आनँद-अंबुद गजैं।
मथत जु आप जहाँ नँदरानी, सोभा नहिं कछु परत बखानी।
सुंदर गौर बरन तन सोहै, औटे कंचन कौ रँग को है।
मृदुल उजल गंगाजल पहिरैं, उठति जु तन तैं छबि की लहरैं। १०
पृथु कटि कल किंकिनि की बाजनि, बिलुलित बर कबरी की राजनि।
नेत की करखनि,वदन की हरखनि, तैसिय सिर तैं सुमन सु बरखनि।
आनन पर श्रमकन्न अस बनी, कनक-कमल जनु ओस की कनी।
किधौं चंद मधि प्रगटे मोती, आये जानि आपनौ गोती।
लाल के बालचरित कछु गावति, भाग-भरी सब राग रिझावति। १५

सोवत सुत तन पुनि पुनि देखति, मुसकति जाति जनमफल लेखति ।
लगी जु भूख कुँवर वर जगे, मीड़त नैंन अलस-रस पगे ।
अरग अरग जननी ढिँग जाइ, नेत गह्यौ अति हेत बढ़ाइ ।
जसुमति कहति बोलि मधु वानी, वलि वलि मोहन छाँड़ि मथानी ।
२० तनक तजहु तुरत मथि लैऊँ, अपने ललन कौं लौनौ दैऊँ ।
नेत न तजत, ललन हठ ठानी, लै बैठी तहँ जसुमति रानी ।
मधुर पयोधर प्यावन लगी, कहि न परति जु प्रेम-रस पगी ।
चापि कै चूमति चारु कपोलनि, बोलत ललित तोतरी बोलनि ।
पूत कौ प्यारौ पियनौ पयौ, अधिक आँच तैं उफनत भयौ ।
२५ यातैं सुत कौं धरि कै धरनी, धाइ गई तहँ नँद की घरनी ।
कोइक कबि कहैं तृष्ना बौरी, हरि परिहरि जु दूध कौं दौरी ।
ते कछु प्रेम-मरम नहिं जाने, जिहि बिधि श्री सुकदेव बखाने ।
या करि ब्रह्मानंद जु हरुवौ, भजनानंद दिखायौ गरुवौ ।
पय को पयमीतहि जु मिलाई, पूत पै बहुरि गई जसु माई ।
३० अतृपत सुत अति छुभित जु भयौ, भाजन भाँजि भवन दुरि गयौ ।
सुत कौ करम निरखि नँदरानी, मुसकी जनम सफलता मानी ।
बहुरि कहति अस लड़कि न कीजै, लरिकहि तनक कछू सिख दीजै ।
अरग अरग गई गृह मैं ऐसैं, नूपुर धुनि सुनि भजै न जैसैं ।
साँट लिये जौ जसुमति जाइ, चढ़चौ उलूखल माखन खाइ ।
३५ जननिहि निरखि भीत की नाईं, उतरि भग्यौ तिहुँ लोक कौ साँईं ।
जसुमति मोहन गोहन लगी, तिहि छिन अद्भुत छबि जगमगी ।
जसु पै तैसैं जाइ न जाइ, श्रोनी-भर अरु कोमल पाइ ।

खसत जु सिर तैं सुमन सुदेस, जनु चरनन पर रीझे केस।
आगे फूल की बरषा करैं, तिन पर ब्रजरानी पग धरैं।
जोगीजन-मन जहाँ न जाहीं, इत सब बेद परे बिललाहीं। ४०
ताहि जसोमति पकरति भई, रहपट एक बदन पर दई।
पानि पकरि जब आँगन आने, जिन तैं डर डरपै सु डराने।
डर तैं नैंन सजल ह्वै आये, जनु अरबिंद अलिंद हलाये।
परत दृगन तैं जलकन जोती, डारत ससि जनु मंजुल मोती।
मींजत चख, मसि प्रसरित ऐसैं, निर्मल बिधु कलंकन जैसैं। ४५
भै भरे सुतहि निरखि नँदनारी, दीनी लकुट हाथ तैं डारी।
कहत कि रंचक बाँधौ याहि, जैसैं सिख लागै लरिकाहि।
मृदुल पाट की नोई लई, लाल के पेट लपेटति भई।
ऊखल सौं जब बनैं न गाँठि, तासौं अवर लई तब साँठि।
सो पुनि परिपूरन नहिं भई, तब इक वड़ी जेवरी लई। ५०
उहै न तनक उदर फिरि आई, तव जसुमति अति बिस्मय पाई।
तिहि छिन गोप-वधू घिरि आई, हँसति परस्पर लगति सुहाई।
भै भरे लाल के लोइन लसैं, दिखि दिखि गोप-बधू सब हसैं।
हँसि हँसि कहति, सु लगति सुहाई, ये न हौंहि बलि बस्तु पराई।
धाम की दाँम-दाँवरी जिती, ब्रजतिय लै लै आवति तिती। ५५
जसुमति ग्रंथि दैन जब चहै, द्वै अंगुल तब ऊनी रहै।
आदि अंत कछु पैयै जाकौ, बंधन अवसि पूछियै ताकौ।
आदि अंत जो कोऊ न पावै, तनक जिवरिया कित फिरि आवै।
निपट श्रमित जननी कहुँ जानी, निरवधि बत्सल रस पहिचानी।

६० जद्यपि अस ईस्वर जगदीस, जाके वस बिधि, बिष्नु, गिरीस।
नाहि जसोमति बाँधति भई, रसना प्रेममई, दिढ़, नई।
भक्तबस्यता निगम जु गाई, सो श्री कृष्न प्रगट दिखराई।
प्रभु तें जो प्रसाद जसु पायौ, सो काहू सपने न दिखायौ।
बिधि सौं पूत जगत उजियारौ, आत्मा सिव सब ही तें प्यारौ।
६५ निकटहि रहति जदपि श्री ललना, कब बाँधे, कब झूलये पलना।
हो नृप! ये जु जसोदा-नंदन, नित्य अनूप रूप जगबंदन।
भक्तिवंत कहँ सुखद हैं जैसें, तन अभिमानी कौं नहिं तैसें।
बहुत जुगति जौ जीवत लहियै, सो मुनि तन अभिमानी कहियै।
ग्यानी पुनि यह सुखहि न जानैं, नीरस निराकार परवानैं।
७० गत-अभिमान न यह सुख लहै, देहादिक कहुँ माया कहै।
पायौ जु कछु नंद की घरनी, कापै परति सु महिमा बरनी।
बंधन सहि न सकति तहँ गोपी, कहति जसोमति सौं रस-ओपी।
अहो महरि! अब बंधन छोरौ, सुंदर सुत पर भयौ न थोरौ।
डर तें मुख पियरी परि गई, ललित कपोलन पर छबि छई।
७५ ज्यौं दरपन परसत मुख-पौन, परिहरि महरि, परी हठ कौंन।
जसुमति हठी, कहति तिन आगे, नैंक रहन देहु ज्यौं सिख लागे।
ऐसें कहि जसु गृह मैं गई, इहाँ अवर इक अद्भुत भई।
दिष्टि परे अर्जुन द्रुम दुवै, श्रापे हुते मुनि नारद जु वै।
रैंगत रैंगत तहँ चलि गये, लरिका मोहन गोहन भये।
८० ऊखल तनक तिरीछौ करि कै, डारि दिये तरु तिन मैं बरि कै।

भक्ति विना श्री भागवत, कहहिं सुनहिं जे 'नंद'।
दरबी ज्यौं बिंजनन मैं, स्वाद न जानै मंद ॥
'नंद' नवम अध्याइ यह, बरन्यौ कापै जाइ।
चातक चंचु-पुटी लटी, सब घन कितहि समाइ ॥

दशम अध्याय

अब सुनि दशम कौ दशम अध्याइ, सुत कुबेर के गहि कै पाइ।
स्तुति करि हरि पै आग्या पैहैं, भक्ति-पात्र ह्वै निज घर जैहैं।
सुक मुनि सौं पुनि राजा कहै, नारद परम भागवत रहै।
तिन करि कवन कर्म अस करचौ, जा करि जिनहि क्रोध संचरचौ।
बोले बिहँसि ब्यास के तात, हो नृप सत्तम ! सुनि यह बात।　　५
सुत कुबेर के अति अभिराम, नलकूबर, मनिग्रीव सु नाम।
गंगा मधि ललनागन लिये, बिहरत हुते बारुनी पिये।
तहँ ह्वै नारद निकसे आइ, बीना कर आपने सुभाइ।
तिहिं दिखि तिय सब लज्जित भईं, चटपट अपने पट गहि गईं।
ये दोउ नगन मगन अस भये, मद बाढ़े, ठाढ़े रहि गये।　　१०
कहन लगे मुनि तिन तन चाहि, जग मैं अवर बहुत मद आहि।
ऐ परि यह श्री-मद है जैसौ, बड़ अनरथ कर अवर न ऐसौ।
मति-भ्रंसक, सब धर्म-बिधुंसक, निर्दय महा बिरथ पसु-हिंसक।
नस्वर देह सबै कोउ जानैं, ता कहुँ अजर अमर करि मानैं।
रच्यौ. पाँचभौतिक कौ देह, अंत समै कृमि बिष्टा खेह।　　१५

जा कहुँ कहत कि यह तन मेरौ, तामैं बहुरि वहुत अरभेरौ।
मा कहै मेरौ, पितु कहै मेरौ, मोल लयौ सु कहै मो चेरौ।
अन्न कौ दाता कहै कि मेरौ, स्वान कहै न अवर किहि केरौ।
ऐसैं साधारन इह देह, तासौं करि कै परम सनेह।
२० भूत हौइ आचरत न डरै, धमकि धमकि नरकन मैं परै।
श्री-मद करि जु अंध ह्वै जाइ, दारिद-अंजन परम उपाइ।
तन दुर्बल, मन निर्बल रहै, अपनी उपमा करि सब चहै।
कंटक चरन चुभ्यौ होइ जाके, और कौ दुख हिय कसकै ताके।
जाके कंटक चुभ्यौ न होइ, का जानै पर पीरहि सोइ।
२५ पुनि मुनि बोले करुना भरे, क्यौं तुम रहि गये द्रुम से खरे।
तब अति डरे दौरि पग परे, परम दयाल दया अनुसरे।
मथुरा-मंडल गोकुल जहाँ, अर्जुन तरु तुम उपजहु तहाँ।
नंद के नंदन वालक ह्वैहैं, बँधे उलूखल तुम कौं छ्वैहैं।
मो प्रसाद तैं तुम घर ऐहौ, दुर्लभ बस्तु सुलभ ही पैहौ।
३० ते दोऊ अर्जुन द्रुम भये, बढ़त बढ़त अंबर लौं गये।
नारद-बचन सुमिरि हरि आइ, छिनक मैं गिरि से दिये गिराइ।
परत जु चंड सब्द भयौ ऐसौ, घर पर बज्रपात होइ जैसौ।
निकसे उभय पुरुष दोउ बीर, पहिरे अद्भुत भूषन चीर।
जैसैं दारु मध्य तैं आगि, निर्मल जोति उठति है जागि।
३५ नंद-सुवन के पाइनि परे, अंजुलि जोरि स्तुति अनुसरे।
कहन लगे हरि तिन तन चाहि, तुम तौ कोउ देवता आहि।
इमि इहि गोकुल-गोप-दुलारे, क्यौं हो पकरत पाइ हमारे।

तव बोले अलका भौन के, हो प्रभु ! तुम बालक कौंन के।
परम पुरुष सब ही के कारन, प्रतिपारन, तारन, संघारन।
ब्यक्त-अब्यक्त जु बिस्व अनूप, बेद बदत प्रभु तुम्हरौ रूप। ४०
तुम सव भूतन कौ बिस्तार, देह, प्रान, इंद्री, अहँकार।
काल तुम्हारी लीला श्रीधर, तुम ब्यापी, तुम अब्यय ईस्वर।
तुम हीं प्रकृति, पुरुष, महतत्व, धर, अंबर, आडंबर, सत्व।
तुम हीं जीवन, तुम हीं जीय, सब ठाँ तुम, कोउ अवर न वीय।

पूर्व पक्ष

घट-पट-ग्यान बिसेखै सब हीं, हमरौ ग्यान हौइ किन अब हीं। ४५
दुर्लभ ब्रह्म सुलभ ही बनै, तहाँ कहत कुबेर के तनै।
इंद्रिन करि तुम जात न गहे, प्रगट आहि पै परत न चहे।
जैंसें दिष्टि कुंभ कहुँ देखै, कुंभ तौ नाहिंन दिष्टि कौं पेखै।
कुंभ के दिष्टि हौइ जब कब हीं, सो तुम दिष्टिहि देखै तब हीं।
तातैं तुम कहुँ बंदन करैं, जानि न परहु परे तैं परैं। ५०
इहि विधि स्तुति करि हरि देव की, प्रार्थित पद-पंकज-सेव की।
हे करुनानिधि करुना कीजै, अपनी भाउ-भगति-रति दीजै।
वानी तुमरे गुन गन गनै, श्रवन परम पावन जस सुनै।
ये करि अवर कर्म जिनि करैं, प्रभु की परिचर्या अनुसरैं।
मन-अलि चरन-कमल-रस रसौं, चित्र-कमल-जग भूलि न बसौं। ५५
हो जगदीस ! जसोदा-नंदन, सीस रहौ नित तुव-पद-बंदन।
तुमरी मूरति भक्त तुम्हारे, नित ही निरखहु नैंन हमारे।

तव बोले हरि करुनाधाम, पूरन हौंहि तुम्हारे काम।
नारद प्रीतम भक्त हमारौ, तुम पर कियौ, अनुग्रह भारौ।
६० मो भक्तन कौं यहै सुभाउ, जैसैं उदित होत दिनराउ।
सहजहि निविड़ तिमिर कौं हरै, अवर बहुत मंगल विस्तरै।
पुनि बोले हरि सब गुन-सीव, हे नलकूवर ! हे मनिग्रीव !।
अब तुम गवन भवन कौं करौ, मो माया डर तैं जिनि डरौ।
आग्या भई रह्यौ नहिं जाइ, पुनि पुनि पकरे सुंदर पाइ।
६५ वार बार परिकर्मा देहि, मोहन बदन बिलोकै लेहि।
अधिकारी पै रह्यौ न जाइ, चले ईस कहुँ सीस नवाइ।
उत्तर दिसि नभ ह्वै उड़ि चले, भक्ति-रस भरे सु लागत भले।
अग्नि के जनु निधूम ह्वै ऊक, किधौं बिभाकर विवि के टूक।
आपु तनक बंधन बँधे, तासौं कछु न बसाइ।
७० दिढ़ बंधन संसार तैं, गुह्यक दिये छुड़ाइ॥
'नंद' जथामति कथित यह, दशम-दशम अध्याइ।
सुनै जु श्रुति-रंध्रन कोऊ, बंधन सब मिटि जाइ॥

एकादश अध्याय

अब सुनि ग्यारह अध्याइ की कथा, सुंदर सुक मुनि बरनी जथा।
गोकुल तजि बृंदावन जैहैं, बत्सासुर अरु बकहि बधैहैं।
सुनि द्रुम सवद सबै ब्रज डरचौ, कहत कि आनि बज्र जनु परचौ।
नंदादिक सब धाये आये, द्रुमन देखि अति बिस्मय पाये।

पनन कौ कारन लगे विचारन, प्रबल पवन नहिं, नहिं वड़ वारन । ५
कारन कवन जु ये तरु परे, दिखि सब लोग अचंभे भरे ।
तिन सौं कहन लगे सिसु वात, अहो महरि यह तुम्हरौ तात ।
आपुन इन के अंतर पर्यौ, ऊखल तनक तिरीछौ कर्यौ ।
दये उखारि दोऊ द्रुम भारे, ये हम सिगरे देखनहारे ।
निकसे उभय पुरुष दुति भरे, या ढोटा के पाइनि परे । १०
ऐसैं जब उन लरिकन कह्यौ, किनहूँ गह्यौ, किनहुँ नहिं गह्यौ ।
तिन विच हरि बैठे छवि-ऐना, डरपे मृग-सिसु के से नैंना ।
अति वत्सल रस भरि ब्रजराइ, द्रुमन मध्य तैं लिये उठाइ ।
वंधन छोरि छती लपटाइ, पौंछत सुंदर अंग सुहाइ ।
जसुमति परि ब्रजराज रिसाइ, ऐसैं सिसु कोउ बाँधति माइ । १५
पुनि विहरन लागे ब्रज महियाँ, दैन लगे सुख अपनन कहियाँ ।
कहुँ ब्रज नवल वधू नँदलालहि, पकरि नचावहिं नैंन विसालहि ।
जे जे विकट मान उपजावहिं, ते ते सहज नाचि दिखरावहिं ।
रीझि रीझि ब्रज की वर बाला, वारहिं भूषन कंचन-माला ।
चुंबन करहिं बलैया लेहिं, बहुरि नचावहिं माखन देहिं । २०
कबहुँक बहुरि टहल अनुसरै, ब्रज की बहू कहैं सो करै ।
कोउ कहैं अहो अहो मोहनलाल ! मुहिं गुहि दै यह फूल की माल ।
कोउ कहैं लाल लाउ दोहनी, कोउ कहैं मोहिं गहाउ सोहनी ।
कोउ कहैं बलि वे पाँवरि लावौ, बलि बलि मोहिं पिढ़ी पकरावौ ।
अब लावौ मुख चुंवन करैं, इहि बिधि ब्रज तिय सुख बिस्तरैं । २५
सिव कौ सर्बस, श्रुति कौ हियौ, सो ब्रजतियन खिलौना कियौ ।

कब हूँ बिहरन्त जमुना तीर, धूरी धूसर सुभग सरीर।
तिन कौं लेन गई जसु मात, ठाढ़ी कहति मनोहर बात।
अरे पूत पूतना-निपातन, तो सौं कहि न सकत इक बातन।
३० निसि दिन रहत धूरि मैं सनौ, पूर्ब जन्म कौ सूकर मनौ।
भोर के आये दोऊ भैया, कीनौ नहिंन कलेऊ दैया।
भूखौ आहि, बलि गई मैया, घर चलिहै मेरौ भलौ कन्हैया।
अरु दिखि बलि ये सँग के बारे, मैयन कैसी भाँति सिँगारे।
तुमहुँ अन्हाइ तनक कछु खाइ, बलि बलि बहुरि खेलियहु आइ।
३५ बैठे महर थार पर जाइ, मो सौं कह्यौ कन्हैयहि लाइ।
तुम बिन तात तनक नहिं खात, बलि बलि चलि मेरे साँवर गात।
न चलहिं खेल मगन अति भये, बाँह पकरि तब जसुमति लये।
मग मैं कहति जाति जसु माइ, सो राजा जु प्रथम घर जाइ।
महर के संग तनक कछु खाइ, चले पलाइ, गहे जसु माइ।
४० उबटन उबटि अंग अन्हवाइ, पठये मनि भूषनन बनाइ।

हरि गुन रतनन माँझ खचि, मनि - मानिक जु सुछंद।
बिषय-काँच करि कचन बिच, पोइ बिगारि न 'नंद'॥

इहि परकार महाबन महियाँ, दै सुख नंद-जसोमति कहियाँ।
अब चाहत बृंदाबन गयौ, मंजु कुंज बिहरन मन भयौ।
४५ अंतरजामी अपनौ धर्म, ता करि प्रेरे सब के मर्म।
इक दिन गोप-सभा करि बैसे, अमर नगर मैं अमरन ऐसे।
नंद-सुवन के रस रँगमगे, ब्रज के हितहि बिचारन लगे।
इत उत्पात जगे हैं जैसैं, देखे-सुने न कित हूँ ऐसैं।

इन लरिकन की रच्छा करौ, ह्याँ तें बेगि अनत अनुसरौ ।
तहँ उपनंद नाम इक कोई, ग्यान-वृद्ध, बय-बृद्ध है सोई । ५०
कहन लग्यौ कि कुसर है परी, इत तैं चलहु अबहिं इहि घरी ।
आई प्रथम बकी घर-घालक, काल के मुख तैं उबरयौ बालक ।
अरु वह सकट बिकट भर भरयौ, या सिसु के ऊपर नहिं परयौ ।
पुनि वह बात-चक्र ह्वै आई, लै गयौ लरिकहि गगन उड़ाई ।
बहुरयौ आनि सिला पर नाख्यौ, तब यह सिसु परमेसुर राख्यौ । ५५
जे द्रुम नभ सौं बातैं करे, ते तरु अकस्मात भुवि परे ।
जौ जगदीस सहाइ न होई, तिन तर आयौ बचै न कोई ।
चाहत हौ जौ ब्रज कौ भलौ, तौ तुम ह्याँ ते अब हीं चलौ ।
सुंदर बृंदावन इक नाम, सब गुन-धाम, परम अभिराम ।
जामैं गिरि गोवर्द्धन आहि, सब रितु संतत सेवत जाहि । ६०
गोपी-गोप गाइ-बछ लाइक, सुखदाइक, सुभकरन, सुभाइक ।
एकै बुद्धि सबै जन सुठे, सुनतहि 'साधु साधु' कहि उठे ।
अपने सकट तुरत ही जोरे, बड्डे मंदल कंदल घोरे ।
गोधन बृंद धरि लये आगे, धरे सरासन नीके लागे ।
कंचन सकटहि चढ़ि चढ़ि गोपी, चली जु नंदसुवन-रस-ओपी । ६५
कंठनि पदिक जगमगत जोती, लटकै ललित सु बेसर-मोती ।
केसरि आड़ ललाटन लसी, चंद मैं चंद-कला-दुति जसी ।
चंचल दृग अंजन छबि बढ़े, ससिन मैं जनु नव खंजन चढ़े ।
लाल के बालचरित जु पुनीत, लये हैं बनाइ बनाइ सु गीत ।
ठाँ ठाँ गोपी गान जु करैं, सीतल कंठ सब कौ हिय हरैं । ७०

गज-सकट बैठी जसु मोहै, उपमा कौं त्रिय त्रिभुवन को है ।
सुरपति-रवनी रमा की चेरी, सो वह चेरी जसुमति केरी ।
गोद में सुत, अति सोहत ऐसी, चंद जननि चंदहि लिये जैसी ।
सुन-गुन गोपी गावति जहाँ, दै रही कान जसोमति तहाँ ।
७५ इहि विधि श्री बृंदावन आइ, निरखि अधिक आनंदहि पाइ ।
सकट कौ थान बनायौ ऐसौ, सुंदर अर्द्धचंद होइ जैसौ ।
बन बृंदाबन गोधन गिरिवर, जमुना-पुलिन मनोहर तरवर ।
रस के पुंज, कुंज नव गहवर, अमृत समान भरे जल सरवर ।
जदपि अलौकिक सुख के धाम, श्री बलराम, कुँवर घनस्याम ।
८० रीझे तदपि देखि छवि बन की, उत्तम प्रीति लागि गई मन की ।
औरै सुक, सारिक, पिक, मोर, औरै अंबुज, औरै भौंर ।
रतन-सिखर-गिरि गोधन-सोभा, निकसी मनहुँ नई छबि गोभा ।
तिन विच सुंदर रासस्थली, मनि-कंचन-मय लागत भली ।
गिरि तैं झरत जु निर्झर सोहै, निर्जर नगर अमृत-रस को है ।
८५ औरै त्रिगुन पवन जहँ वहैं, मुँह उचाइ हर सूँघत रहैं ।
कहन लगे बृंदावन जैसौ, वह हमरौ बैकुंठ न ऐसौ ।
बाल-बैस सब रस जगमगे, बालक संग रंग रँगमगे ।
बल समेत सिसु सब अभिराम, कंचन-भूषन, कंचन-दाम ।
तिन मधि मधिनाइक जु नंद कौ, बरषत अमी कोटि चंद कौ ।
९० ब्रज-समीप लगे बच्छ चरावन, सीखत बेनु बजावन, गावन ।
अति गति चलत सु अति छवि पावनि, नूपुर-रव, किंकिनी बजावनि ।
बदि बदि होड़नि, डेलनि मेलनि, कहूँ परस्पर बोलनि, खेलनि ।

कहुँ कृत्तिम गो-बृषभ बनावत, तैसैंहि नादत, तिनहिं लरावत।
इक दिन कान्ह कुँवर मनभावन, जमुन कच्छ गये बच्छ चरावन।
तहँ इक असुर बच्छ ह्वै आइ, कछ के बछरन मैं मिलि जाइ। ९५
नष्ट दुष्ट-बुद्धि धरि आयौ, सो श्री कृष्न तबहिं लखि पायौ।
चिदानंद-मय अपने बच्छ, यह प्राकृत अरु अधम असुच्छ।
नैंन-सैन करि बलहि जनाइ, अरग अरग ताकी ढिँग जाइ।
पुच्छ सहित लै पिछले पाइ, दियौ फिराइ फिराइ बगाइ।
महाकाइ ऊपर ही मर्‍यौ, बहुत कपित्थन लै धर पर्‍यौ। १००
'भले भले' कहि बालक हरषे, सुर हरषे, नव फूलन बरषे।

(इति वत्सासुर लीला)

पुनि इक दिन बल अरु बलबीर, सखन सहित गये सरवर तीर।
पहिले पानी बछरन दियौ, ता पाछे आपुन पय पियौ।
ता ढिँग असुर एक बड़ बाम, बकी अनुज बक ताकौ नाम।
निपट नृसंस कंस कौ हियौ, जिहि डर अमरन मानत जियौ। १०५
सो तिन तैं तहँ पहिले आइ, बैठ्यौ बक कौ भेष बनाइ।
कहन लगे बक होत न ऐसौ, गिरि तैं गिर्‍यौ शृंग होइ जैसौ।
ऐसैं ठाढ़े करत विचार, इत उत चितवत नंदकुमार।
महा अकाइ असुर धर धाइ, गह्यौ तनक सौ मोहन आइ।
जब बक ग्रस्यौ कुँवर नँदलाल, बल समेत सब ब्रज के बाल। ११०
भये बिचेतन ते तन ऐसैं, प्रान बिना इंद्रीगन जैसैं।
बक कौ तालु-मूल जब जर्‍यौ, तब इहि बीच विचारहि पर्‍यौ।
मैं अपने कर काज बिगार्‍यौ, गहि कै प्रथम तहीं नहिं मार्‍यौ।

अबकैं मारि डारि भखि जाऊँ, ता पाछे ये सिगरे खाऊँ।
११५ डारयौ उगलि सुबल वह बालक, जगपालक ऐसैंई घरघालक।
डारि कै बहुरि ग्रसन कौं नयौ, तब तहाँ अद्भुत कौतुक भयौ।
रवकि कै रंचक बदन पसारयौ, पकरि कै चंचु फारि ही डारयौ।
फटत पटेरहि लागति बार, अस कछु कीनौ नंदकुमार।
जय जय धुनि अंबर मैं भई, बरषत फूल सूल मिटि गई।
१२० घिरि गये सखा प्रान से पाये, हँसि हलधर हू कंठ लगाये।
बछरन लै छबि सौं घर आये, समाचार सब सखन सुनाये।
सुनि कै गोपी गोप समेत, धाइ आइ गये नंद-निकेत।
ज्यौं कोउ मरि परलोकहि जाइ, अपनन बहुरि मिलत है आइ।
तैसें कान्ह कुँवर तन चहैं, प्रेम भरे यौं बातैं कहैं।
१२५ तृषित दृगन मुख निरखत ऐसैं, अमृतहि पाइ पियत कोउ जैसैं।
कहत कि दिखहु मृत्यु अति दारुन, आवत सिसु कहुँ मारन कारन।
तेई फिरि मरि जात हैं ऐसैं, पावक परि पतंगगन जैसैं।
पूर्ब जन्म पुन्य कियौ कोई, राखत है इहि लरिकहि सोई।
तिन सौं नंद कहन तब लगे, गर्ग-बचन हिय मैं जगमगे।
१३० गर्ग अर्ग दै मो सौं कह्यौ, मैं तव सुत कौ लच्छन लह्यौ।
नाराइन मधि गुन हैं जिते, तेरे सुत मधि झलकत तिते।
सुनि कै सब आनंदन भरे, नंद महरि के पाइनि परे।
गोकुल गोपी गोप जितेक, कृष्णचरित-रस मगन तितेक।
कहत परस्पर करि नित नये, भव-बेदन जानत नहिं भये।

इहि परकार कुमार बयस के, करत बिहार, उदार सु रस के।
कोउ होइ मेष, कोऊ होइ पालक, आपुन चोर हौहि हरि बालक।
एकादश अध्याइ यह, अगदराज की धार।
पान करौ नर चित्त दै, मिटै रोग संसार॥

द्वादश अध्याय

अब सुनि लै द्वादसौ अध्याइ, महा सर्प-वपु धरि अघ आइ।
गिलिहै बछ-बालक वह नीच, हतिहैं हरि तिहिं बढ़ि गल बीच।
इक दिन बन भोजन मन आनि, सोये सुंदर सारँगपानि।
बेनु वजाइ जगाये ग्वाल, सुनत उठे सव ताही काल।
जैसें कमल अमोदहि पाइ, ठाँ ठाँ उठत मधुप अकुलाइ। ५
बन भोजन जु कान्ह मन आनी, बेनु बजावन ही मैं जानी।
सुंदर बिजन सुंदर छीके, कनक लकुटियन लटकत नीके।
अपने वछरन लै लै आये, कान्ह के बछरन आनि मिलाये।
नंद-सुवन सौं मिलि कै चले, लागत सबै मैन से भले।
तिन मधि मोहन अति सुखदाइक, नग जराइ मधि ज्यौं मधि नाइक। १०
छीकन तैं बिजनन चुरावत, ते तौ इत कछु और बनावंत।
हँसि हँसि कहत कि देखि कन्हैया, कहा दियौ इहि याकी मैया।
खेलत खेलत खेल सुहाये, सुंदर श्री बृंदाबन आये।
और खेल खेलत छवि पावत, महुवरि बेनु बजावत-गावत।
बगन खिजावत, खगन खिजावत, केई खग की छाया गहि धावत। १५

केई मधुमत्त मधुप सँग गावत, केई मिलि कल कोकिल कुहुकावत।
केई मदमत्त मयूर जु नचैं, तैसैंहि नचैं, तनक नहिं बचैं।
केई बनचर के सनमुख जाइ, आवत तैसैंहि ताहि खिजाइ।
केई फल-फूल-माल गुहि लावत, मोहनलाल के उरसि बनावत।
२० लाल के गुंज-माल अति सोहै, लाल-माल तिन आगे को है।
बृंदाबन-कुसुमन की कली, गजमोतिन तैं लागति भली।
केऊ अपनी प्रतिध्वनि सौं अरै, गारि देहि बहुरचौ हँसि परै।
देखत बृंदाबन घन सोभा, जब हरि दूरि जात रस लोभा।
तब ये ग्वाल-बाल मिलि आछे, अंतर सहि न सकत परि पाछे।
२५ धावत कहत अमी जनु बरसै, तेई राजा जु प्रथम ही परसै।
अब सुक तिन कौ भाग सराहत, कमल-नयन महिमा अवगाहत।
जो कछु ब्रह्म ब्रह्म सुख आहि, बिदुषन कौं परकासत ताहि।
भक्तन हू के हिय अति सरसैं, तिन के नाथ नये सुख बरसैं।
मायाश्रित संबंधी जिते, नर-दारक करि समझत तिते।
३० देत सबन सुख अपनी ठौर, इन सम पुन्य-पुंज नहिं और।
जाके पद-रज-हित तप करि कै, बहुत काल जोगी दुख भरि कै।
प्रेरित चपल चित्त कहुँ भूरि, सो वह धूरि तदपि हू दूरि।
सो साच्छात दृगन-पथ चहियै, कवन भाग्य ब्रजजन कौं कहियै।
तदनंतर अघनामा दुष्ट, आयौ सुख दिखि सक्यौ न नष्ट।
३५ बक अरु बकी दुहुन तैं छोटौ, ऐ परि यह उन तैं गुन मोटौ।
जाके डर सुर थर थर डरैं, जदपि अमृत पान हू करैं।
तदपि कहैं जब लौं अघ जीवै, तब लगि ब्यर्थ अमी को पीवै।

किवा बालकेलि-सुख चहै, अमर-नगर मैं मिलि सब कहै।
कहा भयौ जो अमृतहि पियौ, हरि-रस बिन कछु गनत न जियौ।
निपट नृसंस कंस पुनि प्रेरयौ, गोपबंस-अवतंसहि नेरयौ। ४०
हरि तन चितै कहत काकोदर, याके उदर दोउ मेरे सोदर।
तातैं भगिनि-भिया की ठौर, पठऊँ इहि अरु ये सब और।
जौ मैं इते तिलोदक करे, ब्रज माँझ के सहज ही मरे।
प्रान गये जौ बहुत दाम के, देह रहे तौ कौंन काम के।
इहि बिधि अघ बिचार पर परि कै, महा बड़ौ अजगर-बपु धरि कै। ४५
इक जोजन विंस्तार विस्तरयौ, आनि नीच मग बीचहि परयौ।
अघ कौ अधर धरा पर धरै, उरध अधर जलधर मैं करै।
बालक चके चाहि कै ताहि, कहन लगे कि कहा यह आहि।
कोउ कहै कछु बृंदावन सोभा, ता पर भैया अजगर ओभा।
है तौ यह परवत की दरी, अजगर-आनन-आभा धरी। ५०
शृंग जु मनौं बने अहि-दंत, निबिड़ बदन सु तिमिर कौ अंत।
मधि कौ मग जनु रसना आहि, लपकति भिया कहत हौं ताहि।
कोउ कहै गगन मैं घन उनयौ, रबिकर परसि अरुन ह्वै गयौ।
तरहर ताकी छाया परी, तिन यह धरनि अरुन है करी।
कर्कस पवन गुहा तैं ऐसौ, आवत अजगर-मुख तैं जैसौ। ५५
दव जु लगी कछु लगति न रोचन, तातैं राते जनु अहि-लोचन।
कोउ कहै रे तुम कहत हौ कहा, यह तौ केवल अजगर महा।
हमहिं सबन ग्रसिबे के काज, मग मैं आनि परयौ सजि साज।
कोउ कहै जौ है अजगर महा, तौ यह हमरौ करिहै कहा।

६० यौं कहि नंद-सुवन-मुख चाहि, देखैं याहि कहाँ धौं आहि।
सुंदर बदन निरखि मुद भरे, दै दै करतारी तहँ बरे।
अलबेले ईस्वर नँद-नंदन, बालक नृप से सब जग-बंदन।
जब सब अजगर-मुख संचरे, तब हरि ह्याँ बिचार पर परे।
यह तौ सत्य ही अजगर महा, बरजे नहिंन कियौ हम कहा।
६५ प्रभु पछितात, अनमने भये, अपने कर अजगर-मुख दये।
अब ह्याँ कवन जतन अनुसरौं, इहि मारौं, अपनन उद्धरौं।
आइ गई ईस्वरता ऐसैं, बालक राज के रच्छक जैसें।
ब्रजपति-सुवन तनक मुसकाइ, पैठे ताके आनन जाइ।
अंबर माँझ अमरगन जिते, देखत हे घन-ओटन तिते।
७० हाहाकार परे, अति डरे, कहत कि अब हम सिगरे मरे।
अजगर तुंड तनक जव नयौ, तिहि छिन अद्भुत कौतुक भयौ।
नैसुक सिसु मुख-द्वारे खरौ, रुकि गयौ ताकौ सिगरौ गरौ।
भयौ तिरोध प्रान घट घुट्यौ, ब्रह्मरंध्र तब ताकौ फुट्यौ।
निकसि ज्योति अंबर मैं गई, दामिनि सी फिरि ठाढ़ी भई।
७५ जब लगि नंद-सुवन गोबिंद, बछरा अरु ब्रज-बालक-बृंद।
अमृत-दृष्टि करि सींचि जिवाइ, लै आये बाहिर इहि भाइ।
तब लौं रही गगन मैं जोति, सब दिसि जगमग जगमग होति।
उलका ज्यौं तहँ तैं उलटानी, आनँद भरि हरि माँझ समानी।
तदनंतर सुर-मुनि सब हरषे, जै जै करि पुहुपन सब बरषे।
८० रटन लगे गंधर्ब जितेक, नटन लगी अपछरा अनेक।
कोलाहल सुनि निज लोक मैं, आयौ ब्रह्मा ब्रज ओक मैं।

दिखि महिमा जसुमति-तात की, सुधि-बुधि गई कमल-जात की।
सो वह अजगर परम पवित्र, सूक्यौ बृंदाबन मधि मित्र।
अति गह्वर तहँ व्रज के बाल, डुका-डुकी खेले बहु काल।
यह कौमार बयस कौ कर्म, पायौ नहिं किन हूँ कछु मर्म। ८५
छठौ बरस जब सब निरबह्यौ, तब उन सबन आनि ब्रज कह्यौ।
आजु जु एक नंद के लाल, मार्‌यौ ब्याल सु केवल काल।
हम सब ताके मुख मधि गये, आये बहुरि जन्म धरि नये।
ताके तन तैं उठी जु जोति, नखत तैं टूटि ज्यौं ज्वाला होति।
जाइ गगन में थिर ह्वै रही, हम देखी अरु सबहिन चही। ९०
कान्हहि निरखि वहुरि उलटानी, आनि कै इन हीं माँझ समानी।
ऐसैं जव उन लरिकन कह्यौ, सुनि सब लोग अचंभे रह्यौ।
अहो मित्र सुनि चित्र न कीजै, हरि की महिमा मैं मन दीजै।
इंन की जो कोउ प्रतिमा करै, एक बार बल करि हिय धरै।
प्रल्हादादिक की गति जोई, सु पुरुष सहजहि पावै सोई। ९५
सो साच्छात अघासुर हिये, आये अपने भक्तन लिये।
सूत कहत है हो भृगुनंदन, सुनि हरि सुचरित दुरित-निकंदन।
पुनि पुनि मुनि के गहि कै पाइ, पूछत यहै परीच्छित राइ।
हो सर्बग्य ब्यास के तात!, यह कौमार बयस की बात।
पौगंडमय चरित सब कहे, अब लौं ये सिसु कहँ हैं रहे। १००
यह कछु हरि की माया आहि, हो प्रभु ! नीके बरनहु ताहि।
हम सम धन्य न इहि संसार, जातैं कृष्नकथामृत-धार।
निगम सार ताकौ पुनि सार, पियत हैं हम तिहिं बारंबार।

बहुरि तुम्हारे मुख सु कमल तैं, मधुर तैं मधुर, अमल अमल तैं।
१०५ सून कहत जब यौं नृप कह्यौ, श्री सुक नैंन मूँदि तब रह्यौ।
फुरि आये जु चरित सब हिये, ज्यौं कोउ अति मादक-मद पिये।
बढ़ि जु गयौ उर अति आनंद, घूमत ज्यौं मदमत्त गयंद।
बड़ी बेर जागे अनुरागे, राजा प्रति सुख बरषन लागे।
'नंद' हिये धरि नेह भरि, यह द्वादसौ अध्याइ।
११० अघ से मल निर्मल जहाँ, कृष्न-पद-परस पाइ॥
यह द्वादस अध्याइ जो, सुनैं तनक चित लाइ।
अघ न रहै अघ ज्यौं सुनत, 'नंद' अनघ ह्वै जाइ॥

त्रयोदश अध्याय

अब सुनि लै तेरहौ अध्याइ, हरिहै बिधि बछ-बालक आइ।
श्री हरि तैसैंई अवर बनाइ, खेलिहैं एक बरष इहि भाइ।
भले प्रश्न कीनी नृप सत्तम, हे बड़भाग! भागवत उत्तम।
जातैं कृष्न-कथा रसमई, सुनत हौ छिन ही छिन करि नई।
५ जिन के उपज्यौ हरि-रस-भाउ, हे नृप! तिन कौ यहै सुभाउ।
रति सौं कृष्न-कथा अनुसरै, छिन छिन प्रति नूतन सी करै।
ज्यौं लंपट पर बनिता बात, सुनत सुनत कबहूँ न अघात।
अब सुनि सावधान ह्वै कथा, बरनन करौं आहि यह जथा।
जदपि गोप्य रहै मो हिये, कहौं तदपि तव हित के लिये।
१० सिष्य सनेहवंत जो रहै, तिन सौं गुरु गुपतौ पुनि कहै।

अघ-मुख तैं जिवाइ बछ-बाल, लै गये जमुन-पुलिन नँदलाल।
भोजन कियौ चहत तिहि काल, करत स्तुति पुलिन की गोपाल।
कहत कि भिया भलौ यह ठौर, ऐसौ नहिंन पाइहौ और।
सीतल मृदुल बालुका स्वच्छ, इत ये हरे हरे तृन कच्छ।
इत ये सुंदर सरसिज फूले, तरवर फूल फूलि जल झूले। १५
खगन की धुनि-प्रतिधुनि हिय हरै, मंद सुगंध पवन अनुसरै।
सब दिसि तैं ये परिमल लपटैं, आवति सहज सुखन की दपटैं।
भूख लगी है भोजन करैं, इत ये बच्छ कच्छ मैं चरैं।
मंडल करि बैठे ब्रजबाल, मध्य बने तहँ मोहनलाल।
सोहत सब तैं सन्मुख ऐसैं, कमल के बीच करनिका जैसैं। २०
चहुँ दिसि बाल मंडली बैसी, नखत विसाखा होति है जैसी।
तिन मधि स्याम सुभग सोहत यौं, राका-निसि राकेस लसै ज्यौं।
पुनि सुनि मित्र अवर उपाइ इक, अज हूँ ध्यान धरत ब्रह्मादिक।
जनु चहुँ दिसि मुक्ता-मनि रची, मधि गुपाल मरकत मनि खची।
रबिजा कर मुद्रिका दिखाई, यह ताकौं जगमगत जराई। २५
ऐसैं सुक राजा प्रति कही, नृप सुनि कै कमनीय सु गही।
भोजन करत कुँवर साँवरे, छबि दिखि अमर भये बावरे।
भाजन बिबिधि गुवालन बने, फल दल सिल बलकल अति घने।
अपने ब्यंजन तिन मैं धरे, चखत चखावत अति मुद भरे।
तिन के मध्य बने नँद-नंद, उड़-मंडल जस पूरन चंद। ३०
पट अरु जठर बीच तौ बेनु, काख बेत, कच लपटे रेनु।
दधि-ओदन कौ कवल सु किये, छबि सौं बाम हस्त हरि लिये।

अँगुरिन मथि मथि धरि संधान, जिनहिं निरखि बिधि भूल्यो ग्यान ।
लै लै व्यंजन चखनि चखावनि, हसनि, हसावनि, पुनि डहकावनि ।
३५ केवल बालकेलि अस करैं, ईस्वर तनक न जाने परैं ।
बछरा जब बन घन अनुसरे, दिखि सब ग्वाल-बाल भय भरे ।
तिन सौं कहत कमल-दल-लोचन, अद्भुत सिसु भय के भय मोचन ।
अहो मित्र, तुम भोजन करौ, अपने मन तनकौ जिनि डरौ ।
बछरन हम लै ऐहैं अबै, बैठे रहौ लहौ सुख सबै ।
४० ऐसैं कहि बन गहबर कुंज, तम करि भरी दरी तहँ पुंज ।
ढूँढ़त बच्छ बिस्व के नाथ, भोजन कवल लिये ही हाथ ।
ऐसैं माँझ कुबुधि बिधि आयौ, अघ तैं अधिक असह अनभायौ ।
कैसैं ये ईस्वर इमि कहै, तिन की महिमा चितयौ चहै ।
कच्छ तैं बच्छ लिये सब आइ, जब लगि हरि वै देखन जाइ ।
४५ तब लगि इत तैं लै गयौ बाल, अकिलेई रहि गये मोहनलाल ।
दुहुवन बन घन ढूँढ़न लगे, डोलत प्रेम-पगे, रँगमगे ।
पुनि हँसि परे कछू रिस भरे, इते काम इन बिधना करे ।
जौ अब हम इत चुप कै रहैं, तौ इन की जननी कहा कहैं ।
अरु जौ उन हीं कौं अब आनैं, तौ बिधि मो महिमा कहा जानैं ।
५० हँसन लगे हरि सुंदर स्याम, कही कि ये सब बिधि के काम ।
हमरी महिमा देखन आयौ, हौहु सबै अब याकौ भायौ ।
जितक हुते बछ-बाछी-बाल, आपु ही भये कुँवर नँदलाल ।
वैसैंई कंबर, अंबर, हार, वैसैंई सहज अहार बिहार ।
वैसैंई नाम, दाम गुन नीके, वैसैंई शृंग, बेनु, दल छीके ।

वैसियै हसनि, चहनि पुनि वोलनि, वैसियै लटकनि, मटकनि, डोलनि । ५५
नूपुर, कंकन, किंकिनि माल, सबै भये ईस्वर नँदलाल ।
बेद जु विदित विस्व यह जिते, सबै बिष्नुमय भासत तिते ।
जो यह वानी निगमन गाई, सो प्रभु मूर्तिवंत दिखराई ।
गंगाजल ज्यौं हिमकन पाइ, ठाँ ठाँ सहज जाइ ठहराइ ।
आपुहि आप घेरि बछ-बाल, लै आये ब्रज मोहनलाल । ६०
बेनु की धुनि सुनि गोपी धाई, अपने कंठनि लै लपटाई ।
धूरि झारि पुनि पुनि मुख चूमनि, नहिं कहि परै प्रेम की घूमनि ।
उबटन उबटि सलिल अन्हवाये, मनभाये भोजन करवाये ।
उपज्यौ प्रेम तिन विषै ऐसौ, पाछे नंदसुवन सौं जैसौ ।
अब सुनि लै गाइन कौ पेम, बिसरत जिहिं दिखि मुनि मन नेम । ६५
खरिक निकट जब बछरा बोलै, सुनतहि गोधनबृंद कलोलै ।
हूँकि हूँकि आतुर गति आवनि, इत तैं इन बछरन की धावनि ।
चुवनि, चुवावनि, चाटनि, चूँबनि, बार बार हित की वह हूँसनि ।
आपुहि बछरा, आपुहि बाल, विहरत ब्रज बन मोहनलाल ।
एकाकी जस खेलत कोई, खेलत ताहि कछु न सुख होई । ७०
ऐसैं बरस दिवस निरवह्यौ, संकर्षन हू नाहिंन लह्यौ ।
इक दिन गिरि गोधन पर गाइ, चरति ही चढ़ी आपने चाइ ।
ब्रज-समीप बछरन अवहेरि, चली जु ग्वाल सके नहिं फेरि ।
स्वच्छ पुच्छ ऊँची करि लई, मानहुँ ढुरत चँवर छबिछई ।
अति गति पग डारनि, हुंकारनि, सींचति धरनि दूध की धारनि । ७५
बखरे बछरन पै चलि आई, मिली आइ, कछु नहिं कहि जाई ।

पाछे गोप जु धाये आये, छोभ भरे अति श्रम करि पाये ।
सुतन निरखि तव सव सुधि गई, उपजी प्रीति नई, रसमई ।
ता दिन वल के भयौ सँदेह, सिसुन बिषै दिखि व्रज कौ नेह ।
८० कहत कि पाछे हुतौ न ऐसौ, निरवधि नेह अबहिं है जैसौ ।
अरु मेरे हू उपजत तैसौ, कान्ह कमल-लोचन सौं जैसौ ।
ये व्रजवालक वे तौ नाहीं, पाछे हुते जु या व्रज माहीं ।
अव तौ नाम, दाम, दल अंबर, बेनु, बिषान, बेत, बल कंबर ।
कंकन, किंकिनि, भूषन जिते, मोहिं श्री कृष्न अभासत तिते ।
८५ जब हँसि हलधर हरि तन चह्यौ, हरि तब सब हलधर सौं कह्यौ ।
संकर्षन हू नहिं सुधि परै, विधि बावरौ जु पचि पचि मरै ।
बर्ष दिवस बीते विधि आयौ, निरखि बिनोद सु बिस्मय पायौ ।
वैसेंई बच्छ स्वच्छ व्रजवाल, जमुन-कच्छ खेलत नँदलाल ।
तिनहिं निरखि उत धायौ गयौ, वैसेंई दिखि अति बिस्मय भयौ ।
९० तैसेंई उत के तैसेंई इत के, कहत कि सत्य आहि धौं कित के ।
पुनि जौ फिरि आवै इहि ठौर, ह्वै रही कछू और की और ।
बालक-बच्छ इहाँ हैं जिते, बेनु, बिषान, बेत्र दल तिते ।
मुक्तावलि, गुंजावलि जु ही, नूपुर, किंकिनि, कंकन सुही ।
अंबर, कंबर, संबर जिते, निरखे चारु चतुर्भुज तिते ।
९५ घन-तन, पीतबसन, बनमाल, अरुन कमल-दल-नैंन बिसाल ।
कुंडल-मंडित गंड सुदेस, मनिमय मुकट सु घूँघर केस ।
कंबु-कंठ कौस्तुभ मनि धरे, आयुध संख-चक्र कर करे ।
छबि उलसी तुलसी की माल, बनि रही पदपर्जंत बिसाल ।

बदन बदन मुसकनि छबि लसी, चंदन मध्य चंद्रिका जसी।
भिन्न भिन्न ब्रह्मांड बिराजै, तिन मधि इक इक मूरति भ्राजै। १००
ब्रह्महि आदि चराचर जिते, मूरति धरे उपासत तिते।
अनिमा, महिमादिक सिधि जिती, महदादिक बिभूति हैं तिती।
काल-करम-गुन अवर न अंत, सेवत हैं तहँ मूरतिवंत।
सुधि गई बिधिहि अचेतन भयौ, हंस कौ अंस पकरि रहि गयौ।
तिहि छिन ताहि फबी छबि ऐसी, चतुर्मुखी कोउ पुतरी जैसी। १०५
सरस्वति पति बिचार इमि करै, कहा आहि यह सुधि नहिं परै।
तब श्री हरि निज हिये बिचारि, अज पर अजा जवनिका डारि।
कही कि ये अभिमानी लोग, मो महिमा नहिं चाहन जोग।
तब श्री हरि वह माया जिती, अंतरध्यान करी तहँ तिती।
बड़ी बेर बिधि सुधि भई ऐसैं, मरि कै बहुरि उठत कोउ जैसैं। ११०
दृग उघारि जौ बिधना चहै, तौ वह श्री बृंदाबन अहै।
जामैं सर सुंदर, तरु सुंदर, जे कबहूँ निरखे न पुरंदर।
अरु हरि-मृग जहँ इक सँग चरैं, क्षतपियास नैंक न संचरै।
मुद भरि श्री हरि कौं नित चहै, काके काम-क्रोध-भय रहै।
तहँ निरखे ब्रजराजकुमार, अद्वै ब्रह्म अनंत अपार। ११५
बहुरि अगाध बोध श्रुति बोलै, सो बछ-बालक ढूँढ़त डोलै।
पर्यौ धरनि चरनन पर जाइ, सब मुकटन करि परसत पाइ।
ज्यौं ज्यौं वह महिमा उर फुरै, उठि उठि पद-पंकज सो घुरै।
श्री हरि कछु न कहत रिस भोये, हमरे खेल आनि इन खोये।
उठ्यौ सु हरि-महिमा करि बोर्यौ, बृंदाबन की रज मैं खोर्यौ। १२०

हरैं हरैं उठि हरि तन चहै, टपकि टपकि नैंनन जल बहै।
थर थर कंपत सकल सरीर, कमल लिये ठाढ़े बलबीर।
नमित बदन दृग भरि रहे पानी, गदगद कंठ फुरै नहिं बानी।
सापराध विधि निपटहि डरचौ, अंजुलि जोरि स्तुति अनुसरचौ।

१२५ बच्छ-हरन, बिधि-बुधि-हरन, सुनै जु इहि अध्याइ।
'नंद' सकल मंगल करै, जग दंगल मिटि जाइ॥

चतुर्दश अध्याय

अब सुनि लै चउदहौ अध्याइ, ब्रह्मस्तुति जहँ अद्भुत भाइ।
अति अगाध महिमा अवगाहि, पुनि पुनि रूप अनूपम चाहि।
अवर न कछू फुरै अरबरै, बिधि नँदनंदन-बंदन करै।
अहो ईड्य! नव घन तन स्याम, तड़ि दिव पीत बसन अभिराम।
५ मोर-पच्छ-छबि छाजत भाल, नैंन बिसाल, सु उर बनमाल।
रस-पुंजा गुंजा अवतंस, कवल, बिषान, बेत्र बर बंस।
मृदु पद बृंदा बिपिन बिहार, नमो नमो ब्रजराज कुमार।
हो प्रभु यह तुम्हरौ अवतार, सुलभहि प्रगट सकल श्रुतिसार।
मो पर परम अनुग्रह करचौ, किधौं भक्तन की इच्छा धरचौ।
१० याकी महिमा नहिं कहि परै, मो से जौ अनेक पचि मरै।
जो साच्छात बस्तु इक आहि, अवतारी अवलंबत ताहि।
सो तुम जाने परत कौंन पै, ससि है जात न गह्यौ बौन पै।

पूर्व पक्ष

जौ कहहु कि हम अस दुर्गेय, पायौ परे न जाकौ भेय।
तौ पै इतर दुस्तर संसार, कैसैं तरिहै, परिहै पार।
तहाँ कहत विधि माथ नवाइ, सुनहु नाथ निज प्राप्ति उपाइ। १५
ग्यान विषै प्रयास परिहरै, तुम्हरी कथा बिषै मन धरै।
जैसैं सुंदर संत तुम्हारे, कथा-अमृत के बरषनहारे।
तिन पै सुनै, श्रवन रस भरै, मन-वच-कर्म बंदन पुनि करै।
बैठे ठौर कथा-रस पीवै, जे इहि भाँति जगत मैं जीवै।
अहो अजित! तिन करि तुम जीते, ग्यानी डोलत भटकत रीते। २०
अब विधि कहत ग्यान है जोई, भक्ति विना सोउ सिद्ध न होई।
तुम्हरी भगति अमीरस-सरवर, मोच्छादिक जाके व्रस निर्भर।
तिहि तजि जे केवल बोध कौं, करत कलेस चित्त सोध कौं।
तिन कहुँ छिन ही छिन श्रम बढ़ै, और कछू न तनक कर चढ़ै।
जैसैं कनविहीन लै धान, धमकि धमकि कूटत अग्यान। २५
फल तहँ बिरथ यहै दुख भरै, खोटक हाथनि फोटक परै।
अब विधि सदाचार-बिधि लिये, करत प्रमान भक्ति दृढ़ हिये।
हो प्रभु ! पाछे वहुतक भोगी, तजि तजि भोग भये भल जोगी।
दिढ़ अष्टांग जोग अनुसरै, ग्यान हेतु बहुतै तप करै।
अति श्रम जानि तहाँ तैं फिरै, तुम कहुँ कर्म समर्पन करै। ३०
तिन करि सुद्ध भयौ मन मर्म, तब कीने प्रभु तुम्हरे कर्म।
कथा श्रवन करि पाई भक्ति, जाके संग फिरत सव मुक्ति।
ता करि आत्मतत्व कौं पाइ, बैठे सहज परम गति पाइ(जाइ?)।

अत्र विधि कहत कि निर्गुन ग्यान, तिहि समान दुर्घट नहिं आन।
३५ लछिमी जदपि नित्य उर रहै, सो पुनि तनक कबहुँ नहिं लहै।
जाके रूप न रेख, न क्रिया, तिहि लालच अवलंबै हिया।
तदपि केई तजि तजि सब कृत्ति, निर्मल करत चित्त की बृत्ति।
सहजहि सून्य समाधि लगाइ, लेत हैं तामैं तुम कौं पाइ।
पै यह सगुन सरूप तुम्हारौ, ह्याँ मन खोयौ जात हमारौ।
४० ये अद्भुत अवतार जु लेत, बिस्वहि प्रतिपालन के हेत।
नाम, रूप, गुन, कर्म अनंत, गनत गनत कोउ लहै न अंत।
धरनी के परमान जितेक, हिमकन, अरु उड़ गगन तितेक।
कालहि पाइ निपुन जन कोइ, तिनहिं गनै, अस समरथ होइ।
ऐ परि सगुन रूप गुन जिते, काहू पै कहि परत न तिते।
४५ तातैं तव भगतिहि अनुसरै, तुम्हरी कृपा मनायौ करै।
कब मो पर नँदनंदन ढरिहैं, मधुर कटाच्छ चितै रस भरिहैं।
निज प्रारब्ध कर्म-फल खाइ, अनासक्त, नैंक न ललचाइ।
अरु अति तप-कलेस नहिं करै, श्रवन-कीर्तन-रस संचरै।
इहि बिधि जियै सुभागहि पावै, मरयौ कहा कोउ झगरन आवै।
५० अपराधी विधि थरथर डरै, निज अपराध निवेदन करै।
देखहु नाथ दुर्जनता मेरी, महिमा चह्यौ चह्यौं प्रभु केरी।
अगिनि तैं बिस्फुलिंग ज्यौं जगै, अगिनिहि बिभव दिखावन लगै।
पटबिजना ज्यौं पंख डुलाइ, लयौ चहत रवि-मंडल छाइ।
और सुनहु प्रभु उपमा आछी, गरुड़हि आँखि दिखावै माछी।
५५ अब कहत कि मेरौ अपराधु, छमा करहु, हौं निपट असाधु।

रज गुन तैं उपज्यौ अग्यानी, तुम तैं भिन्न ईस अभिमानी।
मायामद उनमद ह्वै गयौ, सूझै न कछू, अंध तम छयौ।
यातैं अनुकंपाही करौ, भृत्य जानि कछु जीय न धरौ।
चारचौ फुटी जु जन जानियौ, ताकौं नाथ न बुरौ मानियौ।

पूर्व पक्ष

जौ कहहु कि क्यौं इतौ लिलाहि, तुम हूँ तौ इक ईसुर आहि। ६०
तहाँ कहत विधि जोरे हाथ, बातै समुझि कहौ ब्रजनाथ।
कित हौं कित महिमा नाथ की, कहत हौ चींटी हथी साथ की।
प्रकृति, महद, हंकार, अकास, वायु, बारि, बसुमती, हुतास।
सप्तावरन जु यह इक भौन, तुम हीं कहौ तहाँ हौं कौन।
सप्त वितस्ति काइ कौं करचौ, रहत वहुत कहाँ धौं परचौ। ६५
ऐंसौ कोटि कोटि ब्रह्मंड, तुमरी एक रोम के खंड।
उपजत भ्रमत फिरत नहिं चैन, जैसैं जालरंध्र त्रिसरैन।
निपटहि तुच्छ, न काहू लाइक, कृपा करौ, न लरौ ब्रजनाइक।
हो प्रभु जैसैं जननी-गर्भ, रहत है निपट अबुध वह अर्भ।
कूखि विषै कर-चरनन तानै, तौ कहा मात बुरौ है मानै। ७०
तैसैं हौं तव कूखि के माहीं, करत कलोल कछू सुधि नाहीं।
अब कहत कि हौं तुम्हरौ चेरौ, तुम तैं प्रगट जनम यह मेरौ।
जव सब लोग चराचर जितौ, प्रलय-उदधि मधि मज्जत तितौ।
तव हौं तुम्हरी नाभि-कमल तैं, निकस्यौ नहिं इहि उदर अमल तैं।
'कमलज कमलज' मेरौ नाम, मृषा आहि जानै सब ग्राम। ७५

पूर्व पक्ष

जौ कहहु कि वे तौ हम नाहीं, सो वह नाराइन जल माहीं।
हमरौ ब्रज-बृंदाबन धाम, तहीं जाहु ह्याँ नहिं कछु काम।
क्यौं आयौ हमरे ब्रज इहाँ, कहत है बिधि तब बातहि तहाँ।
तुम नहिं नहिं नाराइन स्वामी, अखिल लोक के अंतर्जामी।
८० नार कहावत जीव जितेक, बहुरि नार ये नीर तितेक।
तिन मैं नहिंन अयन रावरौ, हो प्रभु मोहिं करत बावरौ।
नीरहि मैं नाराइन जोई, हो प्रभु तुम्हरी मूरति सोई।

पूर्व पक्ष

जौ कहहु कि हम यौं करि पाये, अपरिछिन्न नित निगमन गाये।
तुम परिछिन्न कहत हौ धात, तहाँ कहत बिधि इहि बिधि बात।
८५ जब हौं कमल-नाल ह्वै गयौ, मन के बेग बरष सत भयौ।
जौ तुम जल करि आवृत होते, रहते दुरे कितक लौं मो ते।
पुनि जब तुमहिं दया करि कह्यौ, तप तप सो मैं दृढ़ करि गह्यौ।
तब रंचक तुम हिय मैं आइ, बहुरचौ गये चटपटी लाइ।
ये तुम्हरी माया की गुरझैं, सब जन अरझे, नाहिंन सुरझैं।
९० अरु अब हीं याही अवतार, हो ईस्वर ब्रजराजकुमार।
जननी कौं माया दिखराई, चकित भई अति बिस्मय पाई।
बिस्व चराचर है यह जितौ, बाहिर प्रगट देखियै तितौ।
सो तुम जठर मध्य दिखरायौ, तहँ इक कौतुक और बतायौ।
तामैं तुम देखे इहि भाइ, साँट लिये डाँटति जसु माइ।

बिंब मध्य प्रतिबिंब तौ होइ, जाकौं कहैं-चहैं सब कोइ। ९५
प्रतिबिंब मैं बिंब दिखरावै, माया बिन यह क्यौं बनि आवै।
जातैं थर थर कंपत हियौ, अजहूँ सुधि न कहा है कियौ।
प्रथमहि मैं तुम देखे एक, बहुरचौ बालक-बच्छ जितेक।
बेनु, बिषान, बेत्र दल जिते, ह्वै रहे चारु चतुर्भुज तिते।
पुनि इक इक ब्रह्मांड के नाइक, सेवत मो समेत सब लाइक। १००
पुनि अति एक एक छबि बाढ़े, देखे मैं मनमोहन ठाढ़े।
तव महिमा कौतुक जौ आहि, को समरथ जानै जो ताहि।
हो प्रभु तव-पद-कमल सुदेस, ताके रस प्रसाद कौ लेस।
कबहूँ काहू पै ढुरि आवै, तव भल महिमा तत्वहि पावै।
ऐसैं अस्तुति बहु बिधि कीनी, निर्गुन-सगुन रूप रँग भीनी। १०५
पुनि प्रार्थत सब सुरन कौ रानौ, भक्ति-बिभौ जु देखि ललचानौ।
अहो नाथ ! मो कहुँ यौं करौ, जौ तरुना करुना रस ढरौ।
इहि जनम मैं, और जनम मैं, नर जनम मैं, तृजग जनम मैं।
तुमरे भक्तन मैं कछु ह्वै कै, सोऊ चरन-सरोजन छ्वै कै।
अब बिधि भक्तानंद जु पग्यौ, ब्रज कौ भाग सराहन लग्यौ। ११०
हो प्रभु धन्य धन्य ये गोपी, धनि ये धेनु परम रस ओपी।
बालक ह्वै, बछ ह्वै प्रभु जिन के, पीवत भये पयोधर तिन के।
बहुरचौ तनक स्तन-पय पाइ, बार बार तुम रहत अघाइ।
कब के जग्य-भाग हो खात, तहँ तुम तनकौ नहिंन अघात।
इह ब्रजजन की भाग बड़ाई, हो प्रभु, मो पै नहिं कहि जाई। ११५
जा प्रभु के आनँद कौ लेस, बर्तत अज, सिव, सेस, महेस।

सो तुम निरवधि परमानंद, जिन के मित्र परम सुख-कंद।
पुनि परिपूरि रहे जहँ-तहाँ, जाहु तौ तव जब हौहु न उहाँ।
जगत बियापी ब्रह्म जु आहि, प्रभु की प्रभा कहत कवि ताहि।
१२० त तैं वहुरि अनत कहुँ जात न, यातैं नंदसुवन जु सनातन।
इन की भाग महिम तौ रहौ, हमरे भूरि भाग तन चहौ।
जद्यपि इन की इंद्री जिती, हम करि नाहिंन कीनी तिती।
तदपि तनक अभिमान के साथ, हम सब कृत्य कृत्य भये नाथ।
नेत्रादिक इंद्रियगन जिते, हमरे पानपात्र प्रभु तिते।
१२५ तुम्हरे सुंदर सुंदर अंग, छिन छिन उठति जु अमृत तरंग।
तिन करि पुनि पुनि पियत जथारथ, सूर्जादिक सव भये कृतारथ।
वहुरचौ इक इक इंद्रिय केरे, धन्य भये हम से बहुतेरे।
जिन की सब इंद्रिय रस पगी, सब ही बिधि ते तुम हीं लगी।
तिन के भाग की महिमा जौन, हो प्रभु ताहि कहि सकै कौंन।
१३० तातैं यह माँगत प्रभु पहियाँ, कै ब्रज कै बृंदाबन महियाँ।
औषधि, वीरुध, तृन, द्रुम, बेली, जहँ इन ब्रजबासिन की केली।
तहँ कौ मोंहि कछू अस करौ, इन की पद-रज मो पै परौ।

पूर्व पक्ष

जौ कहौ सत्य लोक क्यौं तज्यौ, मर्त्य लोक काहे तैं भज्यौ।
तहाँ कहत बिधि इहि बिधि बैन, हे श्री कृष्न कमल-दल-नैंन।
१३५ जा प्रभु की पद-पंकज-धूरि, ढूँढ़त निगम सु अजहूँ दूरि।
सो तुम जिन के जीवननाथ, जैसैं दीन मीन के पाथ।

इन के भक्ति लहलहत ऐसी, देखी सुनी न कितहूँ तैसी ।
मोंहि तौ मोच परचौ है महा, हो प्रभु इन कौं दैहौ कहा ।
बड़ी बड़ाई मुकति तुम्हारे, जाकौं चारचौ वेद पुकारे ।
इन के बेप मात्र पूतना, महा पापिनी, जगत धूतना । १४०
वहुरचौ प्रभु कौं मारन कारन, आई थन लगाइ गर दारुन ।
सो वह वकी सकल कुल लै कै, वैठी जाइ तनक विष दै कै ।
जिन के गेह देह धन धाम, लागे सकल रावरे काम ।
दैहौ कहा महा अरभेरौ, मोह्यौ जात इहाँ मन मेरौ ।
हौं जानौं नित रिनी रहौगे, टक टक इन के बदन चहौगे । १४५

पूर्व पक्ष

जौ कहहु कि ये तौ सब रागी, सुत, बित, मित्र, विषै-रस पागी ।
मोंहि कोउ बीतराग भल पावै, तहँ विधि भक्ति-बिभौ दिखरावै ।
हे सुंदर बर नंदकिसोर, रागादिक तवई लगि चोर ।
तवई लगि वंधन आगार, देह, गेह अरु नेह बिथार ।
तवई लगि दिढ़ जंजर जेरी, मोह-लोह की पाइनि बेरी । १५०
तब लौं मननि बासना छये, जब लगि तुम्हरे नाहिंन भये ।
जो कोउ कहै प्रभु-बैभव जितौ, हम सम्यक जानत हैं तितौ ।
जानहु ते जानहु जो जग चर, मो तैं तौ मन, बचन अगोचर ।
अब मो कौं अपनौ करि जानौ, मो कृत कछु अपराध न मानौ ।
हमरौ ग्यान बीर्ज बल जितौ, प्रभु तुम सम्यक जानहु तितौ । १५५
इतनी माँगत अहो अनंत, बंदन करौं कल्प परजंत ।

बार बार परिकर्मा दै कै, सुंदर वदन बिलोकन कै कै।
चल्यौ नाथ कौं माथ नवाइ, अधिकारी पै रह्यौ न जाइ।
जव विरंचि गमने निज धाम, तव घनस्याम परम अभिराम।
१६० कच्छ तैं वच्छ लिये ही आये, तिही पुलिन सिसु बैठे पाये।
बीत्यौ जदपि वरप इक काल, विछुरे सुंदर मोहनलाल।
तदिप अर्द्ध छिन मानत भये, अद्भुत प्रभु की माया छये।
कवन कवन माया नहिं भूले, जगत-हिंडोरे बड्डे भूले।
ये कछु माया करि नहिं मोहे, प्रभु की इच्छा करि अति सोहे।
१६५ मोहे से तव कहत हैं बाल, बेगि ही आये मोहनलाल।
एकौ कवल न पावन पायौ, भैया तो बिन जाइ न खायौ।
तैं हूँ तौ हम विन नहिं खायौ, हाथ कवल वैसैं ही आयौ।
आवहु बैठहु भोजन करैं, इत ये बच्छ कच्छ मैं चरैं।
जब ऐसैं बोले ब्रजवाल, बिहँसन लागे नंद के लाल।
१७० मंडल करि बैठे पुनि आछे, जैसैं बान बन्यौ हो पाछे।
अति रुचि सौं मिलि भोजन करयौ, इहि बिधि वा बिधि कौ मद हरयौ।
सीथ जु परैं दही-रस भरे, सदन जाइ बिधि लालच खरे।
काक न भयौ फिरयौ इतरातौ, चुनि चुनि सुंदर सीथन खातौ।

(इति वच्छहरण लीला)

चले घरन अजगर दरस ते, हिय सरसते, सुखन बरसते।
१७५ गातनि धात के चित्र बनाये, सीसनि मोर के चंद सुहाये।
बेनु सृंगदल ललित बजावत, नव नव गीत पुनीतन गावत।
पंकज फेरत, बछरन घेरत, लै लै तिन के नाम निबेरत।

गोपी दृगन के उत्सव रूप, ब्रज आये नँद-नंद अनूप।
बीत्यौ एक बरष जिहि काल, ब्रज मैं कहत भये ब्रजबाल।
आज एक नंद जू के लाल, मार्‍यौ ब्याल महा बिकराल। १८०
यह जो चरित मोहनलाल कौ, बन भोजन, मर्दन ब्याल कौ।
अरु बिधि स्तुति जो सुनै-सुनावै, सो नर सब पुरुषारथ पावै।
　चित दै सुनै जो चतुर कोउ, चतुरदसौं अध्याइ।
　गुनत चतुरदस भुवन तैं, परै परम गति जाइ॥

पंचदश अध्याय

अब सुनि लै पंद्रहौ अध्याइ, चलिहैं कान्ह चरावन गाइ।
बन की स्तुति कछु श्रीमुख करिहैं, धेनुक हति ब्रज सुख बिस्तरिहैं।
मंडित बय पौगंड सुदेस, छिन छिन ससि लौं बढ़त सु बेस।
खेलत ललित खेल ब्रज महियाँ, चलत चहन लागे परछहियाँ।
गोपालन संमत जब जाने, द्विज बर बोलि नंद जू आने। ५
भल मुहूर्त्त लै दान दिवाइ, पठये कान्ह चरावन गाइ।
जसु लगी मंगल गीत गवावन, नंद चले बन लौं अवरावन।
सखा साथ, बल भैया साथ, राजत रुचिर मंगली माथ।
बीच अछत्र सु कवन छबि गनौं, मोती जमे चंद मधि मनौं।
आगे करि दये गोधन-बृंद, बदन चूमि ब्रज बगदे नंद। १०
गाइन की छबि नहिं कहि परै, रूप अनूप सब के हिय हरै।
कंचन भूषन सब के गरै, घनन घनन घंटागन करै।

उज्जल बरन सु को है हंस, कामधेनु सब जिन कौ अंस।
दरपन सम तन अति दुति देत, जिन मधि हरि झाँईं झुकि लेत।
१५ बृंदावन छबि कहत बनैं न, भूलि रहैं जहँ हरि के नैंन।
*जामैं संतत बसत बसंत, प्रफुलित नाना कुसुम अनंत।
कंटक द्रुम एकौ नहिं जहाँ, चिदाभास भासत सब तहाँ।
चलत जु नहिं लीलारस-रले, मति हरि आवैं इत ही चले।
सुंदर तरु सुरतरु तहँ को है, जे मनमोहन के मन मोहै।
२० अरुन अरुन नव पल्लव पात, जनु हरि के अनुराग चुचात।
रटत बिहंगम रंगन भरे, बात कहत जनु द्रुम रस ढरे।
कोकिल कूजति इमि छबि पावति, जनु मधु-बधू सुमंगल गावति।
कुसुम धूरि धूँधरी सु कुंज, गुंजत मंजु घोष अलि-पुंज।
सुंदर सर निर्मल जल ऐसैं, संत जनन के मानस जैसैं।
२५ तिन मधि अमल कमल अस लसे, जनु आनंद भरे सर हँसे।
जल पर परी पराग जु सोहै, अबीर भरे नव दर्पन को है।
जहँ लगि बृंदाबन की भूमि, औरहि बिधि रही जमुना झूमि।
परमाधार सु रस जो आहि, बहति रहति निसि-बासर ताहि।
जित दिखियै तित सुख की रैनी, कनक करारे रतनन सैनी।
३० मंजुल बृंदाबन की गुंजा, कृष्न नाम मुख सुख की पुंजा।
तिनहिं बिलोकि लटू ह्वै गये, तुरतहि तोरि हार गुहि लये।
निरखे द्रुम जु फूल-फल नये, मधुकर निकर महा छबि छये।
नये जु फल-फूलन के भार, लगि लगि रही धरनि द्रुम-डार।
बार बार हरि तिन तन चहैं, बल भैया सौं बातैं कहैं।

देखहु हो ये द्रुम या वन के, सब सुख करने, हरने मन के। ३५
सिखा निकरि परसत तुव पाइ, जानत हौ कछु इन कौ भाइ।
कहत कि हो ईस्वर जगनाइक, हौ तौ तुम सबहिन सुखदाइक।
ऐ परि हम पर बहुतै ढरे, जातैं या वन के द्रुम करे।
अरु देखहु या बन के भृंग, बोलत डोलत तुम्हरे संग।
जनु ये मुनिगन अलि ह्वै आये, जदपि गुपत तदपि लखि पाये। ४०
धनि यह धर जा पर पग धरौ, धनि ये कुंज जहाँ संचरौ।
धनि ये सर-सरिता जहँ खोरत, धनि ये कुसुम जिनहिं कर तोरत।
इहि बिधि विहरत बृंदावन मैं, छिन छिन अति रति उपजत मन मैं।
कहुँ कहुँ हंसन मिलि सु कलोलत, वैसैं ही डोलत, वैसैं ही बोलत।
कहूँ मत्त निरतत दिखि मोर, तैसैं ही निरतत नंदकिसोर। ४५
कहूँ मदांध मधुप जहँ गावत, तिन सँग मिलि गावत छबि पावत।
कबहूँ दूरि जाइ जब गाइ, ललित कदंबन पर चढ़ि जाइ।
आनँदघन सम सुंदर टेरनि, इत उत वह हेरनि, पट-फेरनि।
हे गंगे, हे हे गोदावरि, हे जमुने, हे भावरि, चावरि।
हे मंजरि, हे कुंजरि, सीयरि, हे हे धौरी, धूमरि, पीयरि। ५०
कबहूँ मल्लजुद्ध मिलि खेलत, मद गज ज्यौं ठेलत, पग पेलत।
श्रमित होत आवत तरु तरे, किसलय सयन, सु पेसल करे।
पौढ़त सखा सघन सिर नाइ, कोई बड़भाग पलोटत पाइ।
कोई कोमल पद लै कर मींजत, कोई लै कुसम बीजना बीजत।
कोई अति मधुर मधुर सुर गावत, साँवरे कुँवरहि नींद अनावत। ५५
कबहूँ बल भैया के पाइ, आपुन हरि दाबत भरि भाइ।

बिहरत इहि परकार बिहार, ज्यौं गाइन सँग ग्वार गँवार।
जा कहुँ मुनि मन करत बिचार, निगम अगम पावत नहिं पार।
लछिमी ललना ललित सु पाइ, लालति ज्यौं निधनी धन पाइ।
६० बड़ी बेर आवत सिव मन मैं, सो प्रभु यौं बिहरत या बन मैं।

(इति वनविहार लीला)

खेलत खेलत खेल सुहाये, गोधन लै गिरि गोधन आये।
सखा एक श्रीदामा नाम, बोल्यौ जाइ सकल गुनधाम।
अहो अतुल बल श्री बलराम, अहो दुष्ट-निदरन घनस्याम।
इत तैं निकट ताल बन महा, मिष्ट मिष्ट फल कहियै कहा।
६५ यह दिखि उन कौ परिमल आवत, चपरचौ हमरे चितहि चुरावत।
भारी भूख लगी है चलौ, भैया बहुत मानिहैं भलौ।
ऐ परि तहँ इक धेनुक नाम, बड़ौ बाम ताकौ बिश्राम।
जाके डर नर जात न कोई, तछिन भछन करि डारै सोई।
सुनतहि चले सु लागत भले, ऐसैं दुष्ट कितैं दलमले।
७० आगे भये बिहँसि बलराम, पाछे करि लये मोहन स्याम।
धसे बिसाल ताल बन जाइ, मत्त गयंद ज्यौं कानन आइ।
दिये जु ताल सनाल हलाइ, भूखे ग्वाल लिये सब खाइ।
सुनि कै आयौ धेनुक धाइ, धर डगमगत धरत यौं पाइ।
गर्दभ सब्द करत इहि भाइ, सुर डरपे कि लिये हम आइ।
७५ अति बल सौं बल की ढिंग गयौ, पछिले चरन चलावत भयौ।
ते पग तबहिं पकरि हैं लये, पकरत प्रान निकसि ही गये।
फेरि फेरि ऐसैं गहि डारचौ, ऊँचे हुतौ सु ता करि झारचौ।

औरौ खर आये रिस भीने, तेऊ सबै डेल से कीने।
परे जु ताल बिसाल सु ऐसैं, प्रबल पवन के मारे जैसैं।
परे बिसाल ताल इमि मही, बिच बिच गर्दभ परत न कही। ८०
ज्यौं रवि अस्त होत आडंबर, कारे पियरे बादर अंबर।
छिनक मैं मारि डारि सब चले, कहत हैं ग्वाल भले जू भले।
ब्रज कहुँ आवत अति छबि पावत, बालक-बृंद सु कीरति गावत।
ऊपर सुर सुमन सु बरषावत, मुदित भये दुंदुभी बजावत।
मंद मंद गति गाइन पाछे, चलत ललन छबि पावत आछे। ८५
गोरज छुरित कुटिल कच बने, जनु मधुकर पराग रस सने।
मंजुल मोरमुकट की लटकनि, कंचन कुंडल गंडनि झलकनि।
उर बनमाल, सु नैंन बिसाल, बाजत मोहन बेनु रसाल।
सुनि कै गोपबधू सब निकसी, मुद्रित कमल-कली जनु बिकसी।
हरि-मुख-कमल भर्यौ रस-रंग, गोपी-लोचन लंपट भृंग। ९०
पुनि पुनि करि कै पान अघाने, दृगन के बासर बिरह सिराने।
तब कछु नैंनन पूजा कीनी, लज्जा सहित हँसनि रँग-भीनी।
ता पाछे बर कुटिल कटाछे, चली जु प्रेम रँगीली आछे।
यह तिन की पूजा अभिराम, लै आये घर मोहन स्याम।
जसुमति द्वार आरतौ कियौ, पौंछि कै बदन सदन मैं लियौ। ९५
उबटन उबटि फुलेल लगाइ, स्वच्छ सुगंध सलिल अन्हवाइ।
सुभग सुस्वाद सु बिंजन आनि, जननी ज्यौंये अपने पानि।
रितु रितु के भोजन अनुकूल, रितु रितु के बर फूल दुकूल।
भोजन करि तब खरिकनि जाइ, फिरि घर गवने गाइ दुहाइ।

१०० दुग्ध-फैन सम सेज बनाइ, पौढ़े तहाँ कुँवर वर जाइ।
'नंद' नींद नँद-नंद की, कही जु इहि अध्याइ।
गुनातीत कौ सोइबौ, सब भगतन कौ भाइ ॥

(इति धेनुकमर्दन लीला)

पुनि इक दिन बिन ही बलराम, सखन सहित बन गवने स्याम।
पसु अरु पसुप तृषित अति भये, चले चले कालीदह गये।
१०५ बनमाली आवत हे पाछे, बन छबि देखत देखत आछे।
तब लगि ग्वाल-वाल अरु गाइ, महा गरल जल पीयौ जाइ।
जौ पाछे आवहिं नँदलाल, मरे परे सब गोधन-ग्वाल।
अमृत-दृष्टि करि सींचि जिवाये, उठे सबै अति बिस्मय पाये।
कहन लगे कि मरे हम सबै, इहि नँदलाल जिवाये अबै।
११० तब बनमाली सब गुनसाली, काढ़ि दियौ तिहि दह तैं काली।

षोडश अध्याय

अब सुनि लै षोडसौ अध्याइ, कीनी प्रश्न परीच्छित राइ।
हो प्रभु वह दह महा अगाध, तरल गरल करि भरचौ असाध।
कमल तैं अति कोमल बनमाली, तहँ तैं कैसैं काढ़चौ काली।
तहँ पुनि बहुत जुगन कौ कह्यौ, सर्प अजलचर क्यौं जल रह्यौ।
५ गोप बेष श्रीकृष्न चरित्र, अति बिचित्र अरु परम पबित्र।
निरवधि मधु की धारा आहि, सु को जु तृपतै पीयत ताहि।
हरिलीला-रससिंधु हिलोले, मंद मुसकि तब श्री सुक बोले।

जमुनहि मिल्यौ निकट ही महा, अति अगाध ह्रद कहियै कहा।
विष की आगि लागि जल जरै, उड़ते खग जहँ गिरि गिरि परै।
पवन रासि उठि सुठि जल लहरैं, तिन तैं बिष की फुही जु फहरैं। १०
इक जोजन के थिर चर जंत, जरि जरि मरि मरि गये अनंत।
जो बृंदावन जोग्य न हुते, ते सब बिष-जल-ज्वाला हुते।
ताही ढिँग इक मृदुल कदंब, सो छ्वै सक्यौ न बिष कौ अंब।
या पर कृष्न-चरन परसिहैं, इहि चढ़ि या दुष्टहि करसिहैं।
भावी जा कदंब की ऐसैं, विष-जल परसि सकै तिहि कैसैं। १५
ऐसैं ही भावी भक्त जु आहि, कालादिक छ्वै सकत न ताहि।
कान्ह कह्यौ कि हमारी जमुना, क्यौं पूछियै बिष भरी अमुना।
सरितहि सुद्ध करन कलमले, छबि सौं उहि कदंब ढिँग चले।
किंकिनि सौं कटि पटहि लपेटि, कुटिल अलक मुकट मैं समेटि।
चटं दै जिहि कदंब पर चढ़े, छाजत ता छिन अति छबि बढ़े। २०
जिहि जल छुवत जात जन जरे, तिहि जल कुँवर कूदि ही परे।
वर बारन ज्यौं जल मैं धसरै, सत सत धनु चहुँ दिसि पय पसरै।
अति ऊधम सुनि काली डरचौ, बज्र परचौ कि गरुर बल करचौ।
अरग अरग आयौ रिस भरचौ, कोमल कुँवर दिष्टि-पथ परचौ।
नूतन घन तन सुंदर स्याम, तड़ि दिव पीतबसन अभिराम। २५
घन इव, तड़ि दिव उपमा ऐसैं, साखा बिन ससि सुझै न जैसैं।
बिहरत विभु अपने रस-रंग, ईस्वरता कछु नाहिंन संग।
ताकौं कह जानै यह नीच, लोचन भरे महा तम कीच।
अरुन कमल से कोमल पाइ, डसत भयौ दुरात्मा आइ।

३० लपटि गयौ पुनि सिगरे गात, रोष भरे दृग अनल चुचात।
ऐसें जब निरखे ब्रजबाल, गाइ, वृषभ, बछ, बाछी, बाल।
मुरझि परे ठाँ ठाँ सब ऐसें, सुंदर तरु बिन मूलहि जैसें।
ब्रज मैं हौन लगे उतपात, असुभ सूचने फरके गात।
भूमिकंप नभ ते उड़ि गिरे, अवर असगुन निरखि थरहरे।
३५ कहत कि आज राम बिन स्याम, बन जु गये कछु बिगरचौ काम।
अति कलमले बिरह दलमले, बाल-बिरध सब कानन चले।
तिन सौं कछु न कहत बलदेव, जानत हरि भैया कौ भेव।
चरन-सरोज-खोज ही लगे, जिन मैं सुभ लच्छन जगमगे।
अरि, दर, मीन, कमल जब जहाँ, अंकुस, कुलिस, धुजा छबि तहाँ।
४० जा रज कहुँ सिव, अज नित बंछत, अनुदिन सनक, सनंदन इंछत।
तिहि सिर धारत अतिसय आरत, कृष्न कृष्न गोबिंद पुकारत।
क्रम क्रम करि जमुना अनुसरे, निरखे ग्वाल-बाल, पसु परें।
दह मैं दिष्टि परे बनमाली, लपटि रह्यौ तन कारौ काली।
जौ बलभद्र बीच नहिं परै, तौ सब जन जल-ज्वाला जरै।
४५ तिन मैं गोपबधू भरि नेह, दृगन मैं प्रान रहे तजि देह।
जसुमति उमगि उमगि दह परै, छन छन संकर्षन भुज धरै।
ब्रज अनन्य गति दिखि बनमाली, गहि डारचौ तब कारौ काली।
ठाढ़ौ भयौ भयानक भारौ, इक सत फन, बरियारौ कारौ।
फन फन द्वै द्वै जीभ कराल, लपलप करै निपट बिकराल।
५० डारत बार बार फुंकार, छुटत जु गरल अनल की झार।
द्वै सत लोचन राते ऐसें, माड़े पकने भाँड़े जैसें।

तिन तैं अगिनि की चिनगी परैं, ठाढ़े इहाँ तीर के जरैं।
ऐसैं काली सौं बनमाली, खेलन लगे सकल गुनसाली।
बाम भाग दिये तिहि उर मेलत, जैसैं गरुड़ सर्प सौं खेलत।
बुझि गयौ ओज उरग कौं ऐसैं, नाग दवन के देखत जैसैं। ५५
पुनि ताके फन पर चढ़ि गये, सकल कला गुरु निर्तत भये।
सोहैं नंद-सुवन तहँ ऐसैं, सेस उपर नाराइन जैसैं।
तिहि छिन ब्रज गंधर्व जितेक, लै लै ताल मृदंग अनेक।
सुघर सुघर जे सुर लोक के, सिव लोक के बिष्नु ओक के।
अद्भुत नर्त्तक नहिं कछु बचे, सर्प फनन पर तांडव नचे। ६०
फनन तैं निकसि निकसि मनि परैं, पगन मैं झलमल झलमल करैं।
तैसिय हरि-नख-मनि की जोति, सब दिसि जगमग जगमग होति।
जोई जोई फन अहि उन्नत करै, तहँ तहँ मान कान्ह कौ परै।
पगंन की कूटनि दुखित जु भयौ, सर्प कौ दर्प सबै गिरि गयौ।
कहत कि यह बल नहिंन मनुज कौ, निरवधि ईस्वर बल जु अनुज कौ। ६५
सापराध अहि निपटहि डरचौ, मन करि चरन सरन अनुसरचौ।
दुखित देखि ताकी सब तिया, आई थर थर कंपत हिया।
छुट्टे लरिकन आगे किये, जैसैं दया फुरै हरि हिये।
नैंनन तैं जलकन यौं परैं, कमलन तैं जनु मुक्ता झरैं।
बिगलित कच सु बदन छबि बढ़े, अहि सिसु जनु कि ससिन पर चढ़े। ७०
कछु मुद भरी कछू भय भरी, करि दंडवत स्तुती अनुसरी।
अहो नाथ अनुचित नहिं करचौ, अहि कहुँ दंड न्याय ही धरचौ।
दुष्ट-दमन तुम्हरौ अवतार, हो ईस्वर ब्रजराज-कुमार।

जो दिखियत यह विस्व पसारौ, सो सब क्रीड़ा-भार तुम्हारौ।
७५ अहि कहुँ तुम जु दंड नहिं धरयौ, या पर परम अनुग्रह करयौ।
अहो प्रभु तुम तैं जिती बड़ाई, इन पाइन सौं किनहुँ न पाई।
एक अंड कौ भार सु कितौ, गरवत सेस धरे सिर तितौ।
अमित अंडमय बपु रस भरयौ, सो इन धरयौ बहुत ही करयौ।
सुनतहि बचन दया रस भरे, तातैं तुरत उतरि ही परे।
८० हरैं हरैं उठि बोल्यौ काली, हो अद्भुत ईस्वर वनमाली।
तुम हीं हम इहि विधि के करे, गरल भरे अति तामस भरे।
तव नहिं सोचे इह बिधि वानत, अब हो नाथ बुरौ क्यौं मानत।
तव वोले ब्रजराज कुमार, यह बन हमरौ नित्य बिहार।
अब तू रमनक दीपहि जाहि, वा गरुड़ तैं नैंक न डराहि।
८५ मो पद चिह्नन चिह्नित भयौ, करि आनंद, सबै भय गयौ।
काली मर्दन लाल की, लीला सुनै जु कोइ।
महा ब्याल कलिकाल तैं, तिहि न तनक भय होइ॥

सप्तदश अध्याय

अव सुनि लै सत्रहौं अध्याइ, सर्पहि रमनक दीप पठाइ।
उठिहै निसि वन बन्हि अचान, पानी लौं हरि करिहैं पान।
नृप सुनि करि पुनि पूछै ऐसैं, हो प्रभु ! मो सौं कहि यह कैसैं।
रमनक दीप अहिन कौ धाम, क्यौं छाँड़यौ इन काली बाम।
५ गरुर कौ कहा कियौ अनभायौ, जातैं यह इहि दह मैं आयौ।

श्री सुक कही अहिन के ठौर, परी रहति नित खगपति दौर।
थोरे खाइ, बहुत हति जाइ, तब सर्पन मिलि कियौ उपाइ।
आवहु मास मास बलि दीजै, इहि विधि भले कैऊ दिन जीजै।
तब पर्वनि पर्वनि तरु तरे, अपनी अपनी बलि लै धरे।
यह अति विष-बीरज-मद भरयौ, गरुड़ तैं रंचक नाहिन डरयौ। १०
अपनौ भाग, अवर कौ भाग, खाइ जाइ यह काली नाग।
सुनि कै कुपित भयौ द्विजराज, कद्रू-सुतहि हतन के काज।
महा बेग धरि रिस भरि धायौ, बल-आलय उरगालय आयौ।
इत यह बली बालि बिहरानौ, मधु-रिपु-आसन अति समुहानौ।
इक सत फनन फुफात सु तातौ, द्वै सत लोचन अनल चुचातौ। १५
अति बल गरुड़ नखायुध जाके, दूजौ मधुसूदन बल ताके।
बाम पच्छ नव कंचनमई, रहपट एक जु ताकौं दई।
तहँ तैं भज्यौ सु बिह्वल भयौ, धाइ आइ इहि दह दुरि गयौ।
इहाँ गरुर की कछु न बसानी, फिरि गयौ सौभरि संका मानी।
सुनि कै प्रश्न करी नृप ऐसैं, हो प्रभु ! सौभरि संका कैसैं। २०
तब राजा सौं श्री सुक कहै, सौभरि कौ तहँ आश्रम रहै।
एक समै इहि दह मैं आइ, खगपति कीनौ बहुत उपाइ।
तहँ के मीनन कहुँ दुख दीनौ, तिन कौं राउ पकरि है लीनौ।
जलचर दुखित देखि कै खरे, बोले रिषि अति करुना भरे।
अब कै जौ ह्याँ खगप्रति आवै, प्रान सहित तौ जान न पावै। २५
अकिलौ काली जानत आहि, और न लेलिह जानत ताहि।
सो वह काली, हरि बनमाली, काढ़ि दियौ करि कीर्त्ति बिसाली।

सुत-कलित्र लै भरि अनुराग, रमनक गयौ नाग बड़भाग।
तब नँद-नंदन दह तैं निकसे, मुसकत नवल कमल से बिकसे।
३० अहिपति निज कर पूजे स्याम, अद्भुत पट, अद्भुत मनि-दाम।
वन्यौ जु बदन सु को छबि गनौं, दीनी ओप चंद मधि मनौं।
धाइ घुरि गई जसुमति मैया, इत हँसि दौरि घुरचौ बल भैया।
गोपी, गोप, गाइ, बछ जिते, घुरि गये सुंदर अंगनि तिते।
चलत सबन के नैंनन नीर, जनु निकसी जल ह्वै उर पीर।
३५ आये ब्रज के द्विज अनुरागे, नंद सौं कहन सबै यौं लागे।
जा कहुँ ऐसौ बिषधर खाइ, सो सुत बहुरि मिलै तोहिं आइ।
तातैं दान देहु ब्रजराज, अपनौ कुल मंडन के काज।
जु कछु जन्म-उत्सव मैं कीनौ, ब्रजपति तातैं दूनौ दीनौ।
दानन देत परि गई साँझ, रहि गये ताही कानन माँझ।
४० सब दिन अति कलेस करि भरे, सोवत हुते महा निसि परे।
तहँ अभिचार मंत्र करि प्रेरचौ, उठचौ अगिनि, तिहि सब ब्रज घेरचौ।
दुष्ट पवन लगि उठति जु लपटैं, दूरि दूरि लगि अति झर झपटैं।
जगे जु लोग कुलाहल परचौ, कहत कि अब कै सब ब्रज जरचौ।
पौढ़े हुते साँवरे जहाँ, सब जन धाये आये तहाँ।
४५ अहो कृष्न, श्री कृष्न पियारे, जरत हैं सबै दवानल जारे।
हमहिं कछू तौ डर न मरन कौ, नहिं सहि परत बियोग चरन कौ।
सुनत जगे, अति नीके लगे, आलस पगे, उठे रँगमगे।
करन नैंन मींजत छबि पावत, रुठे कमल, मनु कमल मनावत।
एक सकति कहुँ आग्या दई, कब धौं अगिनि पान करि गई।

जे द्रुमलता दवानल जरे, अमी-दृष्टि करि तैसेंई करे। ५०
भोर भये अपने ब्रज आये, मिटे अमंगल, मंगल गाये।
अगिनि पान हरि जा़न कौं, गान जु करिहै कोइ।
महा झार संसार-झर, बहुरि न परिहै सोइ॥

अष्टादश अध्याय

अब सुनि अष्टादसौं अध्याइ, सुनत सहज सब ताप नसाइ।
जामैं कृष्न केलि अभिराम, हतिहैं असुर प्रलंबहि राम।
श्री सुक कहत हैं हो नृप सत्तम, अवर एक लीला सुनि उत्तम।
गोप-वेष करि अद्भुत सोहत, राम-कृष्न सब के मन मोहत।
ग्रीषम रितु आपने सुभाइक, प्रगटचौ जगत सबन दुखदाइक। ५
अति निदाघ तहँ कछु सुधि नाहीं, दादुर दुरे फनी-फन-छाँहीं।
सो बृंदावन मधि जब आयौ, सरस बसंत समान सुहायौ।
ठाँ ठाँ गिरि तैं निर्झर झरैं, ते वै सलिल सिलन पर परैं।
तिन तैं बहति जु सरिता गहिरी, दूरि दूरि लौं परसति लहरी।
बहुरि अनेक अगाध सु सरवर, रस झूमरे, घूमरे तरवर। १०
तिन के तर तृन-वीरुध जिते, हरित हरित रँग भरित सु तिते।
तरनि किरन जिन नैंक न परसै, छिन छिन मैं छबि तिन मैं सरसै।
कुसुमित बनराजी अति राजी, जैसी नहिंन बसंत बिराजी।
ठौर ठौर सर सरसिज फूले, डोलत लंपट अलिकुल भूले।
कमल पवन, अरु चंदन पौन, मिलि जु बहत, सुख कहियै कौंन। १५

बोलत सुक, जनु सुक मुनि पढ़ै, सरसुति सम कल कोकिल रढ़ै।
मधुर मधुर सुर बोलत मोर, नंद-सुवन के मन के चोर।
इहि बिधि बृंदावन छवि पावत, तहँ मनमोहन धेनु चरावत।
बल समेत, ब्रजबाल समेत, श्रीनिकेत सबहिन सुख देत।
२० कहूँ अवधि बदि मेलत डेलन, कहूँ परस्पर खेलत बेलन।
कहुँ अँग छुवनि, कहूँ दृग बंधनि, कहुँ चढ़ि जात द्रुमन के कंधनि।
कहूँ रचत भूषन बनमाल, लै लै फल-दल-फूल, प्रवाल।
कबहूँ निर्तत मोहनलाल, ताल बजावत, गावत ग्वाल।
कबहूँ वर हिंडोल बनावत, झूलत मिलि, गावत छवि पावत।
२५ कबहूँ राज सिंघासन ठानत, छत्र, चँवर फूलन के बानत।
राजा ह्वै रजई दिखरावत, ग्वाल-बाल दुंदुभी बजावत।
लौकिक लरिकन की सी नाँई, खेलत खेल जगत के साँई।
असुर प्रलंब गोप के बानक, आनि मिल्यौ तिन माँझ अचानक।
नंद-सुवन तब हीं पहिचान्यौ, दुष्ट न दुरै दई कौं हान्यौ।
३० ताकौं हतन हिये मैं आन्यौ, तब हरि और खेल इक ठान्यौ।
कहत कि सुनहु भिया ही हीरी, अवर खेल खेलहु बटि बीरी।
द्वै द्वै ह्वै ह्वै आवहु ऐसैं, बल अरु अबल जानि कै जैसैं।
जो हारै सो लेइ चढ़ाइ, बट भंडीर तीर लै जाइ।
भले भले कहि किलके हँसे, ललित कटिन झट दै पट कसे।
३५ नाइक भये स्याम बलराम, आवन लागे धरि धरि नाम।
कोउ लेउ चंद, कोउ लेउ सूर, कोउ खजूर, कोउ लेहु बबूर।
परलंबादि ग्वालगन जिते, नंदकिसोर ओर गन तिते।

श्रीदामा बृषभादिक ग्वाल, बल दिसि गये बजावत गाल।
जमुना पुलिन ललित चौगान, खेलन लगे जान-मनि जान।
लै गये मारि टोल बल प्यारे, कमल-नयन दिसि के सब हारे। ४०
तिन पर चढ़ि चढ़ि बल ओर के, चले चपल अपनी जोर के।
श्रीदामा हरि पर चढ़ि चले, को ठाकुर जो खेल मैं रले।
बल प्रलंब पर सोहत ऐसैं, सो उपमा अब कहियत कैसैं।
बट भंडीर तीर लगि चढ़े, लै गये बालकेलि रस बढ़े।
कान्ह कुँवर की दृष्टि बचाइ, असुर अवधि तैं आगे जाइ। ४५
अपने रूपहि आश्रित भयौ, तब हीं अंबर लौं चढ़ि गयौ।
ता छिन भयो भयानक भारौ, पहिरे कंचन-भूषन कारौ।
ता पर संकर्षन अति सोहे, ब्रजबालक बिलोकि सब मोहे।
जो होइ कारी भारी घटा, बिच बिच चमकै-दमकै छटा।
ऊपर सरद चंद होइ जैसैं, सोहै रोहिनि-नंदन तैसैं। ५०
बिकट बदन अरु बड्डे दंत, बिकट भृकुटि दृग अग्नि बमंत।
तपत ताम्र से सिररुह लसे, तब दिखि हलधर रंचक त्रसे।
पुनि सुधि आइ तनक मुसकाइ, दियौ जु मुठिका मूँड़ बनाइ।
किरच किरच ह्वै गयौ लिलार, मुख तैं चली रुधिर की धार।
धरयौ प्रलंब न कछु संभारयौ, गिरि जस गिरत बज्र कौ मारयौ। ५५
पाँउ पसारि असुर जब परयौ, निरखि रूप तब सब ब्रज डरयौ।
घुरि घुरि मिले ग्वालगन ऐसैं, मरि गयौ कोउ फिरि आवत जैसैं।
अमर निकर बर अतिसय हरषे, बल पर सुमन सु सुंदर बरषे।
फूलन पर ह्वै ब्रज कौं आवत, बालक-बृंद सु कीरति गावत।

६० ब्रज मैं दिन दूलह नँद-नंद, छिन छिन दुतिया कौ सौ चंद।

अष्टादस अध्याइ इह, सुनै तनक मन लाइ।
ताके पाप प्रलंब जिमि, सब मरि, गरि, सरि जाइ॥
अष्टादस अध्याइ कौ, फल न कछू कहि 'नंद'।
अपने ही हिय रहन दै, चरित सहित ब्रजचंद॥

एकोनविंश अध्याय

अब उनइसवौं सुनि अध्याइ, स्याम-राम मुंजा बन जाइ।
गोप-गाइ-गन गह्वर डर तैं, लैहैं राखि दवानल झर तैं।
बृंदाबन सब छवि कौ धाम, सखन समेत स्याम बलराम।
बिहरत अति आसक्त जु भये, गोधन निकसि बनांतर गये।
५ मुंजारन्य नाम है जहाँ, अति गह्वर सुधि परत न तहाँ।
पसु-सुभाउ तैं लुबधे लोभा, चलि गये चरत चरत बन गोभा।
आगे कुंज पुंज अति भीर, नहिंन नीर परसै न समीर।
मारग नहिं जु उलटि इत परै, गोधन-बृंद सु क्रंदन करै।
खेल छाँड़ि जौ इत उत चहै, गोधन कहूँ निकट नहिं लहै।
१० बालक बिकल भये सब ऐसैं, धन गये होत कृपन जन जैसैं।
उच्च द्रुमन पर चढ़ि चढ़ि हेरत, धौरी, धूमरि, पीयरि टेरत।
टेर सुनहि जब हौहि सु नियरी, दूरि गई वे काजरि पियरी।
तब जुरि खोज खोजि ही चले, जहँ जहँ तृन खुर-दंतन दले।
आगे अति गह्वर दिखि चके, धसि न सके तित ही सब थके।

तब हरि इक कदंब पर चढ़े, छाजत तिहि छिन अति छबि बढ़े । १५
जनु सब कृत कौ फल रस-पग्यौ, हि कदंब एकै यह लग्यौ ।
चंचल दृगन की इत उत हेरनि, मधुर मधुर टेरनि, पट फेरनि ।
मुकट की झलकनि, कुंडल झलकनि, कछु कछु राजति गोरज अलकनि ।
लै लै नामन गाइन टेरे, यह छबि सदा बसहु मन मेरे ।
बगदी उत तैं चाइन चाइन, हरि-मुख तैं सुनि अपने नाइन । २०
प्रेम सहित आवनि, हुंकारनि, सींचत धरनि दूध की धारनि ।
आनि जु भई धेनु इकठौरी, धौरी धौरी, अति छबि बौरी ।
सब के कंठनि कंचन-माला, सोहन सुंदर नयन बिसाला ।
घनन घनन घंटागन गजैं, अमरराज-गज की छबि लजैं ।

हरि सनमुख आवति उमहि, उज्जल गोधन-नार । २५
समुदहि मनहुँ मिलन चली, गंग भई सतधार ॥

ऐसैंहि माहिं दवानल लग्यौ, बृप-रबि-रस्मि परसि जगमग्यौ ।
प्रबल पवन लगि अति झर झपटै, लतन सौं लपटि द्रुमन सौं लपटै ।
जरि जरि ताल तमाल जु लटके, पटके बाँस, काँस-तृन चटके ।
डरे गोप-गोधनगन सबै, आये नंद-सुवन ढिँग तबै । ३०
ज्यौं कोउ काल ब्याल तैं डरै, भजि हरि-चरन-सरन अनुसरै ।
कहन लगे कि अहो बलराम, हो श्रीकृष्न कृष्न घनस्याम ।
राखि लेहु हम बंधु तुम्हारे, जरत हैं सबै दवानल जारे ।
तब हँसि बोले मोहनलाल, मूँदहु नैंन धेनु, बछ, बाल ।
जब सब के दृग मुद्रित भये, तब हरि अगिनि पान करि गये । ३५
दृग उघारि जो चहहिं अभीर, ठाढ़े बट भांडीर के तीर ।

कहन लगे अति विस्मय पाये, कित हम हुते, कितै अब आये ।
यह जु नंद कौ नंदन आहि, भिया मनुज जिनि जानहु याहि ।
देवन मैं जु देव वड़ कोई, हम जानहिं कि आहि यह सोई ।
४० आगे धरि लै गोधनवृंद, चले सदन ब्रज कदन-निकंद ।
मधुर मधुर धुनि बेनु वजावत, बालकबृंद सु कीरति गावत ।
गोपीजन कौं परमानंद, भयौ निरखि बृजपति कौ चंद ।
जिन कहुँ जा बिन इक छिन ऐसैं, बीतत कोटि कोटि जुग जैसैं ।
श्रीदामादि सखा जिते, जीतत खेलहि लागि ।
४५ ऐसी ठौर न सुधि परै, पियौ जात क्यौं आगि ॥
सुनै जु कोऊ हरि-चरित, उनविंसत अध्याइ ।
पाप न परसै नंद तिहि, पदमिनि-दल-जल न्याइ ॥

विंश अध्याय

अब सुनि लै बीसौं अध्याइ, बर्नित जहँ द्वै रितु के भाइ ।
इक बरषा अरु सरद सुढार, बिहरत जहँ ब्रजराज-कुमार ।
प्रथमहि प्रावृट प्रगटित तहाँ, सब जंतुन कौ उद्भव जहाँ ।
छुभित जु गगन पवन संचरै, रबि अरु ससि कहुँ मंडल परै ।
५ नील बरन नीरद उनये, गरजि गरजि नभ छादित भये ।
जैसैं सगुन ब्रह्म यह जीय, सत, रज, तम करि आवृत कीय ।
अष्ट मास धर कौ जल जितौ, रस्मिन करि रबि पीयत तितौ ।
चारि मास पुनि निर्झर झरैं, सब दुख हरैं, सुखन बिस्तरैं ।

जैसें नृप अपनौ कर लेइ, समय पाइ पुनि परजहि देइ।
तड़ित-दृगन करि मेघ महंत, देखे ताप तपे सब जंत। १०
प्रेरे पवन सु जीवन बरषै, सबन के दुख करषै, मन हरषै।
जैसें करुन पुरुष पर हेत, अपने प्यारे प्रानन देत।
ग्रीष्म-ताप करि कृश हुती धरनी, सरस भई, सोहति बर बरनी।
ज्यौं सकाम कोउ फल कौं पाइ, भोगन भुगति पुष्टि ह्वै जाइ।
साँझ समै पटबिजना चमकै, घन करि छपे नखतगन दमकै। १५
ज्यौं कलि बिषै पाप पाखंड, नहिंन निगम के धरम प्रचंड।
घन-गरजनि सुनि मुदित जु भेक, बोले धरनि अनेक अनेक।
ज्यौं गुरु आग्या सुनि चटसार, चटा पढ़ि उठत एक हि बार।
पाछे सुकी हुती जे सरिता, उत्पथ चली बहुत जल भरिता।
अजितेंद्रिय नर ज्यौं इतराइ, देह, गेह, धन, संपति पाइ। २०
बुढ़ी लुढ़ी जु हरित भई धरनी, उछलींध्र छबि फबि हियहरनी।
जनु कोउ भूपति उतरयौ आइ, छत्र तनाइ, बिछौन बिछाइ।
निपजे छेत्र कागुनी धान, तिनहिं निरखि हरखे जु किसान।
धनी लोग उपतापहि जाहीं, दैवाधीन सु जानत नाहीं।
जल के, थल के बासी जिते, जल-सोभा करि सोभित तिते। २५
जैसैं हरि-सेवा करि कोई, रुचिर रूप अति राजत सोई।
सरित-संग करि छुभित जु सिंधु, उमगि ऊरमी, ह्वै गयौ अंधु।
ज्यौं अपक्व जोगी चित धाइ, बिषयन पाइ भ्रष्ट ह्वै जाइ।
गिरिगन पर जलधर बर बरसै, ऐ परि गिरि कछु बिथा न परसै।
परसे पै निरसै नहिं ऐसैं, कष्टन पाइ कृष्नजन जैसैं। ३०

मारग ठौर ठौर तृन छये, पंथ चलत पथिकन भ्रम भये।
ज्यौं अभ्यास विन विप्र सु वेद, समझि न परै अरथ-पद-भेद।
मेघन विषै अलप जल परै, तड़ि भई अलप नेह परिहरै।
ज्यौं लंपट जुवती जग माहीं, निधन भये पुरुषहि तजि जाहीं।
३५ घन घुमड़नि मधि चाप सुरेस, विन गुन सोभित भयौ सुदेस।
प्रगट प्रपंच जगत मैं जैसैं, निर्गुन पुरुष विराजत तैसैं।
गगन मैं सघन घनन करि छयौ, तहँ उड़राज बिराजत भयौ।
लपटि, अहंता ममता जैसैं, जग मैं जीव न सोहत तैसैं।
सुनि कै सुंदर घन हर घोर, भरि आनँद बन कुहकैं मोर।
४० जैसैं ग्रहन बिषै दुख पाइ, रहत है ग्रही बैरागहि आइ।
तिन के जाहिं संत जन जैसैं, दुख हरने, सुख करने तैसैं।
सरन के तट, तहँ कंटक कीच, चक्रवाक बसे तिन ही बीच।
ज्यौं कुचील घरनि मैं गँवार, बसत है बिबस उदर ब्यवहार।
इंद्र के बरषत जल भरि भारी, टूटि फूटि गई सब मिँडवारी।
४५ ज्यौं कलि बिषै दंत रस स्वाद, लोपहि भई बेद मरजाद।
पके आँव, जामुन अरु दाख, मधुर खजूर सु लाखन लाख।
तहँ मनमोहन धेनु चरावत, बल बालक समेत छबि पावत।
सीसनि सुंदर छतना दि`, कंचन लकुट करन मैं लिये।
सोभित सिरनि कसूँभी खोरी, लाल निचोइ मनहुँ रँग बोरी।
५० मुरली मधुर मलार सु गावत, उघरे अंबुद फिरि घिरि आवत।
भीजि बसन सुंदर तन लपटनि, दृगनवंत कहुँ अति सुख दपटनि।
जब हरि धेनु बुलावत बन मैं, फूलि नहीं समात तन-मन मैं।

चलि न सकत ऐनन के भार, आवत श्रवत दूध की धार।
ठाँ ठाँ द्रुमन श्रये मधु नये, निरखि बनौकस प्रमुदित भये।
गिरि तैं गिरत जु जल की धार, तिन तैं उठत नाद झंकार। ५५
बल समेत, ब्रजबाल समेत, निरखत डोलत रमानिकेत।
पवन सहित जब बरसत मेह, परसत सीत सु कोमल देह।
तव कंदर कदंब के मूलनि, दुरत हैं जाइ कलिंदी कूलनि।
कबहूँ स्वच्छ सलिल तट जाइ, सिलन के थार, कचोर बनाइ।
दधि-ओदन, विंजन बिस्तरैं, पैठि परस्पर भोजन करैं। ६०
अवर अनेक विहार उदार, करत विपिन ब्रजराज-कुमार।

शरद वर्णन

सरद समै मनभायौ कानन, स्वच्छ सलिल अरु अनिल सुहावन।
पानी पाहुने से चलि बसै, सरनि मैं सरसिज छबि सौं लसै।
ज्यौं जोगीजन-मन बहि परै, बहुरि जोग बल निर्मल करै।
गगन के घन जलमल भुव पंक, जंतन की संकीरन संक। ६५
सरद हरित भयौ सहजहि ऐसैं, कृष्न-भक्ति-आश्रय दुख जैसैं।
अपनौ सरबस दै करि मेह, राजत भये सु उज्जल देह।
सुत-बित-इच्छा परिहरि जैसैं, सोहत मुनि गतकलमष तैसैं।
गिरिबर निर्मल जल की धार, कहूँ श्रवत, कहुँ नहिं निज ढार।
जैसैं ग्यान-अमृत कहुँ ग्यानी, देहि न देहि, दया रस बानी। ७०
अलप जलन मैं जलचर रहे, छीन होत जल नाहिंन लहे।
ज्यौं नर मूढ़ छिनहि छिन माहीं, छीजत आयु सु जानत नाहीं।

तुच्छ सलिल के पुनि ये मीन, सरद ताप तपि भये जु दीन।
कृपन, दरिद्र कुटुंबी जैसें, अजितेंद्रिय दुख भरत है तैसें।
७५ सनै सनै थल-पंक मिटाई, बीरुध-तृनन की गई कचाई।
ज्यौं मुनि धीर सरीरन बिषै, तजत अहंता ममता इषै।
सुंदर सरदागम जब भयौ, निश्चल जल समुद्र ह्वै गयौ।
आतम विपै एक चित जैसें, त्यक्त-क्रिया-मुनि राजत तैसें।
क्यारिन विपै किसानन बारि, ठाँ ठाँ रोके सुदिढ़ सुधारि।
८० ज्यौं इंद्रिन करि श्रवत है ग्यान, रोकि लेत जोगीजन जान।
सरद अर्क दिन तपति जु दई, उड़प उदित ह्वै सब हरि लई।
ज्यौं देहाभिमान कौ ग्यान, ब्रज-जुवती-दुख कौं भगवान।
बिन घन गगन सु सोभित तहाँ, उदित अमल नाराइन जहाँ।
जैसें सुद्ध चित्त अति सरसै, सब्द ब्रह्म के अरथहि दरसै।
८५ ससि अखंड मंडल जु गगन मैं, राजत भयौ नछत्र-गनन मैं।
ज्यौं जदुकुल करि अवनी ऐन, राजत कृष्न कमल-दल-नैंन।
गो, मृग, खग, जुवती रसमई, सरद समै पुहुपवती भई।
तिन के संग फिरत पति ऐसें, कृष्न क्रियन-पाछे फल जैसें।
रबि के उगत कमल-कुल लसै, कुमुदन हसै, सकुचि मन त्रसै।
९० नृप-प्रताप ज्यौं निर्भय साधु, दुरत भोर भये चोर असाधु।

सुनै जु उपमा सरद बर, यह बीसौं अध्याइ।
सरद समै के नीर जिमि, मन निर्मल ह्वै जाइ॥
'नंद' देहरी दीप जिमि, करि बीसौं अध्याइ।
नेह-तेल भरि कंठ धरि, दुहुँ दिसि कौ तम जाइ॥

एकविंश अध्याय

अब सुनि इकईसौं अध्याइ, सरद समै बृंदावन जाइ।
बेनु बजैहै मोहनलाल, तिहि सुनि सुंदर ब्रज की बाल।
बरनन करिहैं परम पुनीत, अहो मीत ! सुनि गोपी-गीत।
सरद स्वच्छ जल-कमल जितेक, प्रफुलित भये अनेक अनेक।
तिन की बास बायु लै गयौ, ता करि सब बन बासित भयौ।   ५
तिहि बन अच्युत मोहनलाल, गवने बल-बालक-गोपाल।
औरौ सुसम कुसमगन फूले, मधुकर मत्त फिरत जहँ भूले।
तरवर, सरवर के खग जिते, मुद भरि करत कुलाहल तिते।
तहँ गिरि गोधन सुछ छबि छये, नित बरसत, सरसत सुख नये।
जहँ नँद-नंदन चारत धेनु, मधुर मधुर सुर बजवत बेनु।   १०
सो वह बेनु-गीत सु रसाल, सुनत भई ब्रज मैं ब्रजबाल।
बढ़्यौ जु तन-मन प्रेम अनंग, मनु उत ही हैं हरि के संग।
बरनत भई सखिन प्रति ऐसैं, परतछ कान्ह कुँवर बर जैसैं।
हे सखि ! दिखि नटवर बपु धरैं, कर्ननि कँवल कर्निका करैं।
धरैं मुकट चटकीलौ माथ, फेरत कमल दाहिने हाथ।   १५
राजत उर बैजंती माल, चलत जु मत्त द्विरद की चाल।
अधर-सुधा मुरली के रंध्रनि, निकसति मिलि सुर सप्त सुगंधनि।
ता करि सब बन धूनित कियौ, काहू माँझ रह्यौ नहिं हियौ।
निज पद अंकित, नित कमनीय, बृंदारन्य परम रमनीय।
तहाँ प्रवेस करत छबि पावत, गोपबृंद कल कीरति गावत।   २०

मोहन-मंत्र सु मुरली राग, सुनि कै ब्रजतिय भरि अनुराग ।
बरनन करत भई मिलि ऐसैं, हरि परिरंभन देत है जैसैं ।

गोपी कहति है

हे सखि ! नैंनन कौ फल यहै, सुंदर प्रियतम-दरसन चहै ।
तिन कहुँ फल पिय-दरसन फरै, छिन छिन बदन बिलोकन करै ।
२५ यातैं अवर नहिंन कछु परै, निसि-बासर अवलोकन करै ।
सो फल सखिन सहित बन घन मैं, बल समेत डोलत गोगन मैं ।
मधुर मधुर धुनि बेनु बजावत, अनेक राग-रागिनि उपजावत ।
तानन के सँग स्निग्ध कटाछे, चलत जु मंद हँसनि के पाछे ।
जिन करि वह सुंदर मुख चह्यौ, नैंनन कौ फल तिन हीं लह्यौ ।

अन्याहु

३० हे सखि ! अवर एक छबि लहौ, प्रिय घनस्याम-राम तन चहौ ।
नूत प्रबाल पुहुप बर गुच्छ, मत्त मयूर चंद्रिका स्वच्छ ।
छबि-पुंजा गुंजा बलि पहिरैं, तिन मैं उठति जु छबि की लहरैं ।
कमल-दलन की काछनि काछे, धातु बिचित्र चित्र तन आछे ।
चटकीलौ पट कटि-तट लसै, नील-पीत दामिनि कहुँ हँसै ।
३५ सखन मध्य दिखि राजत कैसैं, रंगभूमि बिच नटवर जैसैं ।

अन्याहु

हे सखि ! यह जु बेनु रँग भीनौ, इन धौं कवन पुन्य है कीनौ ।
अधर-सुधा सरबस जु हमारौ, ताकौं निधरक पीवनहारौ ।
अरु दिखि जिन के जल करि पुष्ट, ते सरिता लखियत अति तुष्ट ।

तिन मधि नहिं बिकसे जलजात, जनु अनंग भरि पुलकित गात।
अरु दिखि या वन के द्रुम जिते, मधु-धारा धर वरसत तिते। ४०
कहत कि धनि धनि हमरौ वंस, जामैं उपज्यौ यह बर वंस।
मधुन श्रवत अति हर्ष जु भरे, दृगन तैं जनु आनँद-जल ढरे।
ज्यौं कुल बृद्ध अपने कुल महियाँ, निरखि निरखि हरि सेवक कहियाँ।
अति प्रमोद भरि, दृग भरि नीर, सीचत जैसैं सकल सरीर।

अन्याहु

हे सखि! बृंदावन भुवि कीरति, स्वर्ग तैं अधिक भई मुनि ईरति। ४५
जसुमतिसुत-पदपंकज करि कै, पाइहै छवि संपति हिय भरि कै।
अरु दिखि नँद-नंदन पर कांति, परसत नील मेघ की भाँति।
ता कहुँ आगम घन मानि कै, मुरली-धुनि गर्जनि जानि कै।
निर्त्तत मत्त मोर छवि छये, अवर बिहंगम चित्र से भये।
अनत नहिंन सुनियत यह बात, यातैं भुवि कीरति बिख्यात। ५०

अन्याहु

हे सखि! दिखि इहि बन की हरिनी, जदपि मूढ़मति इन की बरनी।
बेनु-नाद सुनि अति सचु पावति, पतिन सहित चलि हरि पै आवति।
सुंदर नंद-कुँवर बर बेष, निरखत लगत न नैंन निमेष।
प्रेम सहित अवलोकनि दूजै, आदर सहित हरिहि जनु पूजै।
हमरे पति जु गोप अति मंद, जब इत ह्वै निकसत नँद-नंद। ५५
तब जौ हम अवलोकन करैं, सहि नहिं परै, अवर जिय धरैं।

अन्याहु

हे सखि ! अवर चित्र इक चहौ, गगन मैं सुर-बनिता किन लहौ ।
बैठी जदपि विमानन महियाँ, अपने पतिन सौं दै गरबहियाँ ।
दृष्टि परे साँवरे अनूप, निपटहि बनिता उत्सव रूप ।
६० पुनि सुनि बेनु-गीत-गति नई, कल नहिं परत बिकल ह्वै गई ।
लगे जु सर सुमार मार के, खसत जु कुसम कवरि भार के ।
धीरज धरे हियै पुनि हरैं, नीवी-बंधन खसि खसि परैं ।

अन्याहु

हे सखि ! देव-वधुन की रहौ, तुम इन गाइन तन किन चहौ ।
हरि मुख तैं जु श्रवत है बाल, बेनु-गीत-पीयूष रसाल ।
६५ श्रवन उठाइ पिवत हैं ऐसैं, नैंक कहूँ छरि जाइ न जैसैं ।
अरु देखहु वछ-वछियन ओर, सुनि कै बेनु-गीत चितचोर ।
पियत थनन मुख भरि रह्यौ छीर, चित्र सी रहि गई गैयन तीर ।
गाइ-बृषभ वछ-बाछी जिती, हरि तन इकटक चितवत तिती ।
दृगन के मग लै मोहन कहियाँ, धरि कै अप अपने हिय महियाँ ।
७० पुनि पुनि तहँ परिरंभन करैं, अति सुख आनँद-अँसुवा ढरैं ।

अन्याहु

हे सखि ! वन बिहंग किन हेरौ, सुनत जु बेनु-गीत पिय केरौ ।
बैठे रुचिर द्रुमन की डारैं, इकटक मोहन बदन निहारैं ।
छुवत न फल, न बदत कछु बात, अति सुख उमगत, घूमत जात ।
निपट चटपटी सौं मुख चहैं, फल प्रवाल अंतर नहिं सहैं ।

मुनि पुनि कर्म फलन तजि जैसैं, अप अपनी श्रुति-साषा बैसैं। ७५
कमल-नयन अवलोकन करैं, फलन के अंतर नहिं सहि परैं।
तैसेंई इह बन खगगन जिते, मुनि हौन के जोग हैं तिते।

अन्याहु

हे सखि ! चेतन जन की रहौ, ये जु अचेतन ते किन चहौ।
बेनु-गीत सुनि सरिता जिती, उमगि मनोभव बिथकित तिती।
बीच जु भ्रमत भँवर अभिराम, मारत मनहि मसूसे काम। ८०
लै लै अमल कमल उपहार, लहरि भुजन करि ढारहि ढार।
पकरे चहत स्याम के पाइ, जैसैं काम-बिथा मिटि जाइ।

अन्याहु

बन मैं बल अरु सुंदर स्याम, पसु चारत, परसत दिखि घाम।
निरखहु सजनि मेह कौ नेह, छत्र करि लियौ अपनौ देह।
छोह किये डोलत दिन संग, फुही फूल बरपत बहु रंग। ८५
कनक-दंड जिमि दामिनि बनी, छाजति छबि कछु परत न गनी।
सखा भयौ घन घनस्याम कौ, नातौ मानि एक नाम कौ।
जग-आरति हरने, रस-सने, दोऊ आनि एक से बने।

अन्याहु

हे सखि ! मेह-नेह की रहौ, भील-भामिनी तन किन चहौ।
प्रमुदित इत जु फिरति हैं सखी, मैं इक इनके मन की लखी। ९०
प्रिया-उरज कुंकुम-रस-पगे, ते कुंकुम हरि पिय-पद लगे।
पदन तैं बन-तृन भूषित भये, ते तृन इन तीयन लखि पये।

तिहिं कुंकुम दिखि बढ़ि गयौ काम, बिकल भई भीलन की भाम।
सो कुंकुम मुख-कुचन लगावति, ता करि मनमथ-बिथा सिरावति।
९५ यातैं धनि भीलन की तिया, हसनि कछू तरफरत है हिया।

अन्याहु

देखौ सखी गोवर्धन कहियाँ, परम श्रेष्ठ हरि-दासन महियाँ।
राम-कृष्न-पद परसन करि कैं, रह्यौ जु अति आनंदहि भरि कैं।
नव नव तृन अंकुर छवि छये, रोम रोम जनु उत्थित भये।
गोप-बृंद गोबिंद समेत, आदर सहित सबन सुख देत।
१०० सीतल जल सुंदर, तृन सुंदर, सीतल अति पबित्र गिरि-कंदर।
कंद-मूल-फल, धात बिचित्र, अवर अनेक अनेक पबित्र।
तिन करि सेवत सब सुखदाइक, धन्य धन्य गोधन गिरि नाइक।

अन्याहु

हे सखि गिरि गोधन की रहौ, सुंदर नंद-कुँवर तन चहौ।
अद्भुत गोपबेष बर करैं, सेली कंध सु मुनिमन हरैं।
१०५ ठाढ़े गाइ गहन के काज, किये फिरत ग्वालन कौ साज।
तैसिय रूप-माधुरी सरसै, रंग-रली-मुरली मधु बरसै।
ता करि हरे सबन के हिये, चर कीने थिर, थिर चर किये।
अहो मित्र! इहि बिधि ब्रजगोपी, परम पबित्र कृष्न-रस-ओपी।
बैठि परस्पर बरनत भई, प्रेम-बिबस तनमय ह्वै गई।
११० ता करि बढ़यौ जु प्रेम अनंग, रम्यौ चहति हरि प्रीतम संग।
तब कात्यायनि अर्चन करयौ, पायौ परम उदय रस भरयौ।

'नंद' इकीस अध्याइ यह, ऐसैं सुनि चित चाहि।
प्रिया-बचन जिमि पीय के, सुनिबौई फल आहि ।।

द्वाविंश अध्याय

बिवि बिंसत अध्याइ सुनि मित्र, बस्त्रहरन मनहरन पबित्र।
नंद गोप ब्रज की दारिका, अद्भुत अद्भुत सुकुमारिका।
जदपि समस्त बिवाहित आहि, नंद-सुवन के रूपहि चाहि।
बिबस भई पति परिहरि परिहरि, करत भई ब्रत हिय हरि धरि धरि।
हिम रितु प्रथम मास अभिराम, देबी कात्यायनी जु नाम। ५
तिहि पूजन जमुना-तट जाहिं, तहाँ न्हाइ हविषा कछु खाहिं।

ब्रत कौ पूर्ब भाग कहत हैं

उठैं बड़े खन चाइन चाइन, बोलत छबि सौं मधुरी भाइन।

कछुक आगमोक्त भक्त तिन के नाम कहत हैं

प्रेमकला, बिमला, रतिकला, कामकला, नवला चंचला।
चंद्रकला, चंद्रावलि, चंदनि, जग-बंदनि बृषभान की नंदनि।
कामलता, ललिता, रतिबेलि, रूपलता, चंपकलता एलि। १०
अवर अनेक नहिंन कहि परै, चंचल नैंन मैन-मन हरैं।
सब दिसि तैं आवति छबि पावति, नूतन मंगल गीतन गावति।
अमुना बिधि जमुना-तट आवति, अतिसै करि मन मोद बढ़ावति।
करि संकल्प सलिल मैं जाइ, मौन धरे बिधि सहित अन्हाइ।
बहुरि कालिंदी कूलन सरैं, बारू की बर प्रतिमा करैं। १५

दिव्य आभरन, दिव्य दुकूल, चंदन, बंदन, तंदुल, फूल ।
प्रीति सहित तिहि अर्चन करैं, पुनि पुनि ताके पाइनि परैं ।
अये गवरि ! इस्वरि सब लाइक, महामाइ बरदाइ सुभाइक ।
देवि दया करि ऐसैं ढरौ, नंद-सुवन हमरौ पति करौ ।
२० बोली बचन देवि रस भारे, पूर्न मनोरथ हौहु तुम्हारे ।
कात्यायनि तैं यौं बर पाइ, बहुरि धसी जमुना-जल आइ ।
बुड़किन बिहरति अतिछबि झेलति, जनु नव घन गन दामिनि खेलति ।
तदनंतर सुंदर नँद-नंदन, चित की पाइ, आइ जग-बंदन ।
नीर तीर तैं चीर चुराइ, चढ़े गोबिंद कदंबनि जाइ ।
२५ लज्जित ह्वै धसि गई जल गहरैं, उठत जु तामैं द्रुति की लहरैं ।
बदन बदन छबि दिखि कै भूली, कनक-कमल कलिंदि जनु फूली ।
चपल दृगंचल पिय-मन-रंजन, कमल कमल जनु जुग जुग खंजन ।
लटन तैं चुवति जु जलकन जोती, जनु ससि छिदि छिदि डारत मोती ।
तब बोले हरि तिन तन चितै, हे अबला अब आवहु इतै ।
३० आनि कै अपने अंबर गहौ, कत कौं भीत, सीत तन सहौ ।
सत्य कहत कछु करत न खेला, आवहु चलि न बिलंब की बेला ।
पाछे हू मैं अनृत न कबै, बोल्यौ है ये जानत सबै ।
चितै परस्पर तब सब हँसी, बड़ी अँखियन अति छबि लसी ।
रूप-उदधि भरि भरि रस आछे, मीन चलत जिमि मीन के पाछे ।
३५ सीतल सलिल कंठ परजंत, तहँ ठाढ़ी थर थर बेपंत ।
तिन मधि मुग्ध बैस की बाला, ऐंड़ सौं कहति भई तिहि काला ।
अहो अहो कान्ह, अनीति न करौ, बलि बलि कछू दई तैं डरौ ।

नंद-महरि के पूत रावरे, जानि बूझि जिनि हौहु बावरे।
देहु वसन, वरि गई अस हँसी, मरति हैं सीत सलिल मैं धसी।
पुनि तिन मैं जे प्रौढ़ा आहि, ते बोली हँसि हरि तन चाहि। ४०
हे सुंदर वर ! करहु न हाँसी, हम तौ सबै तुम्हारी दासी।
जो तुम कहहु, सोइ हम करिहैं, देहु वसन, बिन काजहि मरिहैं।
जौ न देइहौ रस भाइ सौं, कहिहैं जाइ नंदराइ सौं।
तव बोले ब्रजराज दुलारे, मैं समझे संकल्प तिहारे।
इत आवहु, रंचक न लजाहु, व्रत कौ फल लै लै घर जाहु। ४५
नंद-सुवन कौ मन हो जैसें, निकसी सव रस-बिकसी तैसें।
परम प्रेम के फंदन परी, नंद के नंदन खेल की करी।
पुनि वोले ब्रजराज दुलारे, पूर्न मनोरथ हौहु तुम्हारे।
पै आत्यंतिक नाहिन ह्वैहै, मन-अभिलाष पाइ पुनि जैहै।
मेरे बिषय जु मति अनुसरै, सु मति न बहुरि विषय संचरै। ५०
भुंजित धान जगत मैं जैसें, बीज के काम न आवहि तैसें।
ऐ परि जौ मो इच्छा होई, भूज्यौ बीज निपजि परै सोई।
आगामिनी जामिनी ऐहै, तिन मैं तुमहिं बहुत सुख दैहै।
इहि बिधि बरहि पाइ छबि छई, कैसैं हूँ कैसैं ब्रज गई।
वसन पये, पै मन नहिं पये, मन मनमोहन गोहन गये। ५५

ब्रजतिय कौं दै अपनपौ, कृष्न कमल-दल-नैंन।
जगपतिनी अपनी करन, चले अनुग्रह दैन॥

तिन के पति जु भक्ति-रति-हीन, कर्मन बिषय निपट लवलीन।
तिन तन दृष्टि दिये मुसकात, वन के द्रुमन सराहत जात।

६० सखन सौं कहत कुँवर नँदलाल, अहो भोज, अहो ओज रसाल।
अहो सुबल, अर्जुन, अहो अंस, अहो श्रीदामा, बंस अवतंस।
देखहु ये कैसें द्रुम बने, छत्र से तने, सबै गुन सने।
जिन के तरहर सियरे सियरे, फल पियरे पियरे अरु नियरे।
दल करि फल करि, फूलन करि कै, वलकल करि, अरु मूलन करिकै।
६५ पर काज ही सबै कछु जिन कौं, धनि है जग मैं जीवन तिन कौं।
बात-बरप अपने-तन सहैं, काहू सौं कछु दुख नहिं कहैं।
बैठत आनि छाँह हम सरसे, घाम मैं सुंदर सीतल घर से।
ऐसैं कहत कहत छवि छये, बल समेत जमुना-तट गये।
पहिले जल गाइन कौं दियौ, ता पाछे आपुन पय पियौ।
७० विवि बिंसत अध्याइ यह, सुनै जु हित चित लाइ।
धनु देखे खग-अवलि जिमि, पापावलि उड़ि जाइ॥

त्रयोविंश अध्याय

अब सुनि त्रयबिंसत अध्याइ, द्विज अरु द्विजपतिनिन के भाइ।
ठाढ़े हुते जमुन के तीर, बल अरु सुंदर बर बलबीर।
श्रीदामादि ग्वालगन जिते, आरत भये छुधा करि तिते।
बस्त्रहरन हित हरि के संग, देखन गोपबधुन के रंग।
५ भोर भये खन उठि उठि धाये, भोजन कछू लेत नहिं आये।
यातैं भूखे हैं ब्रजबाल, आये तहँ जहँ मोहनलाल।
अहो बलराम अतुल बलधाम, हो घनस्याम, परम अभिराम।

भूख लगी भिया उद्यम करौ, प्रान प्रहारनि पापिनि हरौ।
जगपतिनीन अनुग्रह दैन, बोले तब हरि करुना-ऐन।
इत ये जाग्यक जग्यहि करैं, स्वर्ग-काम-हित पचि पचि मरैं। १०
तिन पै जाहु, न तनक डराहु, अरु जाचंग्या तैं न लजाहु।
लीजहु जाइ हमारौ नाम, वल अरु, वल भैया घनस्याम।
ये ठाढ़े दोऊ तरु तरैं, तुम सौं कछू प्रार्थना करैं।
जौ न देहिं, वे रिस भरि जाहिं, लाज तौ हमहिं, तुमहिं तौ नाहिं।
गये जग्य जहँ थर थर डरतै, वहुत भाँति दंडौतन करतै। १५
अंजुलि जोरि डरात डरात, कहन लगे विप्रन सौं वात।
हो भूदेव ! सुनहु इत हम पै, राम-कृष्न करि पठये तुम पै।
भोर के आये गोधन संग, खेलत खेलत अपने रंग।
घर तैं कछु भोजन नहिं लाये, भूखे हैं, अव तुम पै आये।
श्रद्धा हौइ तौ ओदन दीजै, धर्मबिरुद्ध करम कत कीजै। २०
कहँ यह हरि ईस्वर कौ जचिबौ, कहँ वह द्विजन कौ मद करि मचिबौ।
सुनत न सुनैं, भरे अभिमान, जनु इन द्विजन के नैंन न कान।
पुनि जब भौंह अमेठन लागे, तब ये ग्वाल-बाल डरि भागे।
जिन कर्मन करि अधिक कलेस, फल अति तुच्छ मिटै न अँदेस।
तिन मधि मूढ़ धरि रहे आस, छुयौ न अमृत पाइ अनयास। २५
ह्वै निरास बालक उठि आये, समाचार हरि प्रभुहि सुनाये।
नंद-कुँवर तब हर हर हँसे, हँसत जु रदन बदन मैं लसे।
अस कछु जगमग जगमग होइ, मानिक ओपि धरे जनु पोइ।
सखन सौं वहुरि कहत रस-सने, रे भैया न हौहु अनमने।

३० अरथी ह्वै बैरागहि आवै, सो अरथी अरथी न कहावै।
जाचक ह्वै जग मैं अस कौंन, जचत अनादर भयौ न जौन।
ऐसैं लोक-रीति दिखराइ, पुनि बोले प्रभु मृदु मुसकाइ।
अहो मित्र इन की तिय जिती, हम कौं नीके जानत तिती।
देहमात्र वे बसत गेह मैं, सदा मगन अद्भुत सनेह मैं।
३५ तिन पै जाहु, लजाहु न भिया, समझौगे तब तिन के हिया।
सुभग-सुगंध, स्वच्छ बर-व्यंजन, दधि-ओदन मोहन मन-रंजन।
दैहैं जात, बिलंब न लैहैं, अपने करन लिये ही ऐहैं।
जगपतिनीन के गृह हैं जहाँ, सकुचत सकुचत गवने तहाँ।
राजति कंचन पीढ़नि बैठी, सोहति सुंदर भौंह अमेठी।
४० पहिरे अद्भुत मनिमय भूषन, अद्भुत बसन नहिंन कछु दूषन।
डहडहे वदन निरखि सिसु भूले, कंचन-जलज अँगन जनु फूले।
द्विजपतिनिन के पाइन परे, बातै कहत महा मुद भरे।
हे द्विजपतिनि! कान्ह मनमोहन, आये इतहि गाइ-गन-गोहन।
छुधित आहि कछु भोजन दीजै, सखन सहित अघाइ सो कीजै।
४५ जिन के दरसन हित अरबरती, पतिन सौं बिनती करती अरती।
जुग जुग भरि निसि-बासर भरती, नैंनन नींद नैंक नहिं परती।
ते अच्युत ब्रजराज दुलारे, निकटहि पाये प्रानपियारे।
चारि प्रकार बिचित्र सुब्यंजन, भक्ष्य, भोज्य, चुस, लिह, मनरंजन।
लै चली कंचन भाजन भरि भरि, सुत-पति तिन सौं अरि अरि लरि लरि।
५० रोकि रहे सुत-पति अपनौ सौं, मानत भई ताहि सपनौ सौं।
जैसैं उमगत सावन-सरिता, कौंन पै रुकहि प्रेम-रस-भरिता।

जमुना निकट सुभग इक बाग, सब असोक तरु अति बड़भाग।
इक तरु तरे कुँवर घनस्याम, ठाढ़े कोटि काम अभिराम।
पीतबसन बनमाल रसाल, मोरचंद छबि छाजत भाल।
सखा अंस बाईं भुज दियें, केलि-कमल दच्छिन कर कियें। ५५
अद्भुत गुनगन सुनि हिय धरि धरि, रही हुती उत्कंठा भरि भरि।
सो साच्छात प्रगट रस भरे, अति रोचन लोचन-पथ परे।
दृग-रंध्रन करि अंतर लये, तहँ प्रभु कौं परिरंभन दये।
सुखित भई तिहि छिन सब ऐसैं, तुरिय अवस्था पाइ मुनि जैसैं।
तब बोले हरि हे बड़भागि! नीके आई भरि अनुराग। ६०
प्रतिबंधक जे हुते तिहारे, ते तुम तिन से लघु करि डारे।
मो दरसन हित इत अनुसरी, उचित करी, अनुचित नहिं करी।
जे जन निपुन जथारथ बेदी, स्वारथ अरु परमारथ भेदी।
तें मो बिषै भक्ति-रति करैं, फल न कछू रंचक चित धरैं।
हम सब ही के आतमा आहि, तत्वबेत्ता लेत है चाहि। ६५
प्रान, बुद्धि, मन, इंद्री, देह, पुत्र, कलित्र, मित्र, धन, गेह।
जाके अध्यास तैं अचेत, प्रिय लागत अपनपै समेत।
सो तुम करि हम पाये सबै, धनि धनि धन्य भई तुम अबै।
अब तुम देबि जजन प्रति जाहु, द्विज-जग्यन कौं करहु निबाहु।
तुम करि सत्र समापति करिहैं, अवर न कछू तनक मन धरिहैं। ७०
कहन लगी तब सब द्विज तिया, सुनि यह बात बहकि गयौ हिया।
हे सुंदर बर सरसिज-नैंन, जिनि बोलहु अस करकस बैन।
अपनी प्रतिग्या तन किन चहौ, बेद-पुरानन मैं ज्यौं कहौ।

मन-क्रम-बचन जु चेरौ मेरौ, सो भव-भवन न करिहै फेरौ।
७५ हम पद-पंकज प्रापति भई, सहजहि सब उपाधि मिटि गई।
पद अवसिष्ट जु परम रसाल, डारहुगे तुम तुलसी-माल।
सो नित अलक रलक मैं धरिहैं, सरन परी पद-अर्चन करिहैं।
अहो अरिंदम, नंद के दारक! काम, लोभ, मद, मोह बिदारक।
अब तौ पति, सुत, बांधव जिते, हमहिं तौ तनक छुवहिं नहिं तिते।
८० तातैं अवर गति न हरि हमरी, दास्य देहु, दासी भईं तुम्हरी।
तब बोले ब्रजराज के नंदन, जग-बंदन, जग-फंद-निकंदन।
पति, सुत, मित्र, सुहृदजन जिते, नहिंन असूया करिहैं तिते।
लोक तौ सबै हमारे किये, रोकि रहे हम सब के हिये।
अरु देखहु ये देव जितेक, हमरी आग्या मध्य तितेक।
८५ बुरौ जु मानै सो वह कौन, सर्बबियापी हम जिमि पौन।
प्रेम बृद्धि जौ कीनौ चहौ, तौ तुम मो तैं न्यारी रहौ।
बिरह मैं चित्त समाधि लाइहौ, तुरतहि तब मो कहुँ पाइहौ।
ऐसें जब हित सौं हरि बरनी, घर आईं तब सब द्विज घरनी।
किनहूँ नहिंन असूया कीनी, सुत-पति सबन भुजन भरि लीनी।
९० तिन मैं इक जु हुती पति गही, जान न पाई, बहुत पचि रही।
तब नँद-सुवन सुने हे जैसें, अपने हिय मैं धरि कै तैसें।
तजत भई तिहि तन कहुँ ऐसें, जीरन पट कोउ डारत जैसें।
रे पिय जहाँ ममत है तेरौ, यह लै अब का करिहै मेरौ।
दिब्य देह धरि कै उहि घरी, सबन तैं आगे सो अनुसरी।
९५ तिन सायुज्य परम गति पाई, उन के संग फिरि न घर आई।

जगपतितिनिन जे ब्यंजन आने, जाहि कै गोप-गोबिंद अघाने।
द्विज जु कहावत जे अति वड़े, तियन की गतिहि देखि सब गड़े।

'नंद' जु गोबिंद भक्ति बिन, वड़ौ कहावत कोइ।
बुझै जु दीपक ज्यौं वड़ौ, कहियत वह गति सोइ ॥

तियन की गतिहि निरखि द्विज जिते, पश्चाताप करत भये तिते।　　१००
जो प्रभु निगम अगम करि गाये, जैंवन मिस ते हम पै आये।
धिग धिग हम, धिग धिग ये क्रिया, धिग धिग बिप्र जन्म धिग जिया।
धिग बहुग्यता, धिग सव इषै, बिमुख जु कृष्न अधोक्षज बिषै।
यह प्रभु की माया मोहनी, जोगीजन-मन की खोहनी।
जा करि हम द्विज ह्वै मद भरे, गुरु कहाइ सठ भठ मैं परे।　　१०५
जिन के न कछु सोच आचार, गुरुकुल सेव न तत्त्व बिचार।
नहिं जप, नहिं तप, नहिं सुभक्रिया, कर्कस, कुटिल, जटिल नित हिया।
तिन के भई भक्ति-रति जैसी, देखी-सुनी न कित हूँ ऐसी।
सम्यक द्विज कर्मन करि भरे, ते हम हैं झख मारत परे।
हम करि जदपि सुन्यौ अवतार, जदुकुल विषै हरन भू-भार।　　११०
पुनि आये इत करुना-कंद, जाचन पूरन परमानंद।
ओदन कहा चाहियै तिन के, कमला पाइ पलोटत जिन के।
सुमिरि सुमिरि ग्वालन की बात, करन मींजि सब द्विज पछितात।
पुनि कहैं हम हूँ उत्तम भये, मन के सब संसय मिटि गये।
जिन की ऐसी तिय बड़भागि, तन-मन-भरी कृष्न-अनुराग।　　११५
जिहि अनुराग हमारे हिये, चपरि कै कमल-नैंन मैं किये।

त्रयबिसत अध्याइ यह, सुनि नीके सुख-कंद ।
जप, तप, व्रत, संयम न कछु, कृष्न-भक्ति बिन 'नंद' ॥

चतुर्विंश अध्याय

चतुर्बिस अध्याइ अनूप, सुनि हो मित्र ! परम सुख रूप ।
जामैं गिरि गोबर्धन पूजा, अति पुनीत अस गीत न दूजा ।
द्विजन कौं क्रिया गर्ब सब हरचौ, चाहत इंद्रहि निर्मद करचौ ।
इंद्र कौ जग्य करन जब लगे, गोपी-गोप महा मुद पगे ।
५ पूछत हरि अजान से भये, मंद मुसकि सु नंद ढिँग गये ।
कहहु तात यह बात है कहा, भवन भवन आनंद है महा ।
कवन सु फल, काके उपदेस, कवन देवता सेस-सुरेस ।
मो मन अति अभिलाष है कहौ, लरिका जानि चाइ जिनि रहौ ।
यह करनी तुम सास्त्र तैं पाई, ऐ किधौं परंपरा चलि आई ।
१० कैधौं लोकरूढ़ है तात, मो सौं कहौ कहा यह बात ।
नंद जु कहत मेघगन जिते, मघवा के बसवर्त्ती तिते ।
अपनौ जीवन जग मैं बरषै, दुख करषै, सब जंतुन हरषै ।
यातैं यह जु पुरंदर आहि, जजत हैं जग्यन करि नर ताहि ।
हम हूँ सब यह तिहि उद्देस, करत हैं ज्यौं रस देइ सुरेस ।
१५ ता करि अर्थ, धर्म अरु काम, पावहिं सबै पुरुष बिश्राम ।
परंपरा चलि आयौ धर्म, अहो तात नहिं अब कौ कर्म ।
जो नर याकौं नाहिन करैं, लोभ-द्वेष-भय तैं परिहरैं ।

सो नर नहिं पावैं कल्यान, कहत हैं वेद पुरान सुजान।
महानंद, उपनंद, सुनंद, निजानंद अरु बाबा नंद।
ऐसैं करि जब सबहिन कह्यौ, सब के ईस्वर नाहिंन गह्यौ। २०
सुरपति अति श्रीमद करि छयौ, महा गर्ब पर्वत चढ़ि गयौ।
तहँ तैं ता कहुँ डारचौ चहैं, करम की गति लिये बातैं कहैं।
ऐ परि नहिं प्रमान ये नित ही, सुरपति मान-भंग के हित ही।
इंद्रहि रिस दिवाइ दंद सौं, बोले मंद मुसकि नंद सौं।
अहो तात यह देव न कोई, करम की गति जु होइ सो होई। २५
कर्महि करि उपजत ये जंत, कर्महि करि पुनि सब कौं अंत।
कुसल-छेम, सुख-दुख, भै-अभै, होत हैं ये कर्मन करि सबै।
रज गुन करि उपजत हैं मेह, बरषत सब ठाँ नहिं संदेह।
ऊसर पर, पर्बत पर परै, ते सबै कहाँ जग्य है करै।
हंमरे नहिं पुर-पट्टन ग्राम, बन, गिरि, नदी, निकट बिश्राम। ३०
जहँ सुख तहँ हम बसहिं निसंक, करिहै कहा पुरंदर रंक।
एक करहु जग्यन कौं जिती, करि ते सुभ सामग्री तिती।
और कछू जिय मैं जिनि आनौ, मेरौ कह्यौ सत्य करि मानौ।
सुनतहि मोहन मुख की बानी, भले भले कहि सबहिन मानी।
कुल-मंडन सपूत सुख-दैना, सब के जीवन, सब के नैंना। ३५
रचहु बिबिधि परकार सु ब्यंजन, सुभग, सुगंध, स्वच्छ, मनरंजन।
पुवा, सुहारी, मोदक भारी, गूझा, रस-मूझा, दधि न्यारी।
मिश्री मिश्रित पायस करौ, बर संजाव भाव बिस्तरौ।
मुद्गा दाली, घृत की ब्याली, रस के कंदर सुंदर साली।

४० जैसैं नंद-सुवन उच्चरयौ, प्रीति सहित तैसैं ही करयौ ।
पूजन चले गोप गिरि गोधन, आगे करि लिये अपने गोधन ।
कंचन-सकटनि चढ़ि चढ़ि गोपी, चली जु तिनहुँ सबै बिधि लोपी ।
सुंदर नंद-कुँवर गुन गावति, भाग भरी सब राग रिझावति ।
हरि धरि गिरि कौं सुंदर रूप, बैठे विकसि सु निकसि अनूप ।
४५ गिरि के द्वै द्वै रूप वताये, इक जड़, इक चैतन्य सुहाये ।
गोबरधन की मूरति दुसरी, श्री गोबिंदचंद हित कुसरी ।
दिखि कै गोप महा मुद भरे, नमो नमो कहि पाइनि परे ।
तिन के संग रंग हरि करैं, अपने पाइनि आप ही परैं ।
जेतिक भोजन ब्रज तैं आयौ, गिरि रूपी हरि सिगरौ खायौ ।
५० भई प्रतीति, भरे मुद भारी, देहिं प्रदच्छिन नर अरु नारी ।
फिरत जु छवि बाढ़ी तिहि काल, गिरि गरे जनु मनि-कंचन-माल ।
कहन लगे देखौ तुम्हरे काजा, प्रगट भयौ यह गिरिन कौ राजा ।
मेघरूप ह्वै बरषा बरषै, कालरूप ह्वै यह आकरषै ।
बिछी, ब्याल, वृक, केहरि जिते, याके डर छ्वै सकत न तिते ।
५५ ऐसैं करि पुनि पाइनि परे, घर आये अति आनँद भरे ।

चतुर्बिस अध्याइ यह, जु कोउ चतुर सुनिहै जु ।
जे दिन बीते अनसुने, तिन कौं सिर धुनिहै जु ॥

पंचविंश अध्याय

अब सुनि पंचविस अध्याइ, पंचविस निर्मल ह्वै जाइ।
सुनि कै इंद्र भरयौ रिस भारी, लाग्यौ देन सबन कौं गारी।
धन-मद-अंध नंद कौ बेटा, सो भयौ हमरे मख कौ मेटा।
ताके बल करि मो सौं घाती, रहिहैं गोप कहौ किहि भाँती।
ज्यौं कोउ उरन पूँछि कर धारै, तरयौ चहै सठ सिंधु अपारै। ५
झूठ की जो कोउ नाउ बनावै, मूढ़ तहाँ लै कुटँब चढ़ावै।
ऐसैं गोपन कृष्न भरोसे, महा वैर कीनौ है मो से।
अब देखौ कैसी सिखलाऊँ, गोकुल गाँवहि खोदि बहाऊँ।
बोले मेघन के गन सोइ, जिन के जल जग परलै होइ।
परमातम पर पीर के नाइक, कृष्न कमल-लोचन सुखदाइक। १०
ढाहन कहत कि तिन की कुटी, इंद्र मूढ़ की चारयौ फुटी।
'नंद' कहत श्रीमद सब ऐसैं, सुनैं न सुत कुबेर के जैसैं।
उमगे घन-गन रिस भरि भारे, ताते, राते, पियरे कारे।
तड़तड़ाहिं तड़ि वज्र से परैं, घरहराहिं घन ऊधम करैं।
चली अपरबल बात अघात, उड़े जात कहि बनति न बात। १५
परन लगी नान्हीं बुँदवारी, मोटे थाँभन हू तैं भारी।
तब ब्रजजन जित तित तैं धाये, सुंदर नंद-कुँवर पै आये।
धौरी धौरी धेनु जु दौरी, बड़ी बूँदन के दुख बौरी।
नमित सु ग्रीव, पुच्छ उच किये, छबिली छतिन तर बछरन लिये।
गोपिन पै कहि बनत न बात, थर थर कंपत कोमल गात। २०

हो श्रीकृष्न कृष्न, जगनाइक ! असुभहरन, सुभकरन सुभाइक ।
गोकुल के तौ तुम हीं नाथ, जैसैं मीन दीन के पाथ ।
कुपित भयौ सुरपति मतवारौ, हमरौ अवर कवन रखवारौ ।
बोले हरि बिलोकि तिन माहीं, कत भय करत, इहाँ भय नाहीं ।
२५ मुसकत मुसकत स्याम सुहाये, छबि सौं चलि गिरि गोधन आये ।
झट दै उचकि लियौ गिरि ऐसैं, साँप बैठना कौ सिसु जैसैं ।
गोपी-गोप, गाइ-बछ जिते, अपने सुख रहे तिहि तर तिते ।
बाम हस्त पर गिरि अब वन्यौ, फूल कौ जनु कि छत्र है तन्यौ ।
ललित त्रिभंगी अँग किये ठाढ़े, मुरली अधर धरे छबि बाढ़े ।
३० गिरि-मूल तैं जु गिरि की धात, गिरि गिरि परी साँवरे गात ।
अरुन, पीत, सित अंग सुहाये, फागु खेलि जनु अब हीं आये ।
मित्र कहत अचरिज मो हिये, ठाढ़े हरि त्रिभंग तन किये ।
दुहुँ कर वेनु वजावत नाथ, सखा-मंडली राजत साथ ।
'नंद' कहत अचरिज जिनि मानि, गिरिबरधर अचरिज की खानि ।
३५ बाम हस्त लाघवता ऐसी, तरल अलात-चक्र-गति जैसी ।
कृष्न-कल्पतरु से जहँ वनै, सव सुख बरसत, बर रस सनै ।
तब इक उपमा मो मन भई, कही कहति, किधौं उपजी नई ।
परबत पर तरु होत हैं घने, तरु पर परबत होत न सुने ।
जलद जु बरषन लागे पानी, कह कहियै, कछु अकथ कहानी ।
४० महा प्रलै कौ जल है जितौ, गोबरधन पर बरस्यौ तितौ ।
ता पर नग-खग अरु तरु बेली, तिन पर फुही न परति अकेली ।
इंद्रहु अपने बज्र चलाये, पातन लगि तेऊ नहिं आये ।

सात दिवस अद्भुत झर ठान्यौ, ब्रजबासिन तनकौ नहिं जान्यौ।
सुंदर बदन विलोकन आगै, भूख प्यास उर कौं नहिं लागै।
निकसे तब जब गिरिधर भाख्यौ, गोबरधन फिरि तहँई राख्यौ। ४५
प्रेम-भरी वनिता जुरि आई, वारहिं अभरन लेति बलाई।
चूमति बदन जसोमति मैया, इत घुरि रह्यौ बड़ौ बल भैया।
नंद परम आनंदहि पाइ, पूतहि रह्यौ छती लपटाइ।
मुनिवर, सुरवर, सिधबर जिते, वरषत कुसुम भरे मुद तिते।
दुंदुभि-धुनि, दुर-धुनि हिय हरैं, जै जै धुनि पुनि मुनिवर करैं। ५०
गावत गुन गंधर्ब सु गाइन, नृतत अपछरा चाइन चाइन।
तिन मधि यह अमरन कौ रानौ, हौ रानौ पै निपट खिसानौ।
हरि दिसि तकि, अपनी दिसि तकै, सुरन मैं वदन दिखाइ न सकै।
करन मीड़ि पछितात है ऐसैं, सुरापान करि द्विजबर जैसैं।
तदनंतर गोपी अरु गोप, ओपे परम ओप की ओप। ५५
लोकन लै निज लोकन चले, रंगन रले, लगत अति भले।
तिन मैं गोप-बधू सुख बरसैं, नूतन गीतन मरमन परसैं।
तिन आगे हरि अरु बलराम, आवत कर जोरे छबि-धाम।
कछुक कहत सब के जिय हरते, पुहुपन पर पद-पंकज धरते।
खेल सौं खेलि कै इहि परकार, ब्रज आये ब्रजराज-कुमार। ६०

बल अनुजहि जु मनुज किये, जानै जग मैं कोइ।
अहो 'नंद' इहि इंद्र जिमि, दई बिगारै सोइ॥
पंचबिस अध्याइ यह, यौं हिय मैं धरि राखि।
रसिक भक्त बिन आन सौं, 'नंद' न कबहूँ भाखि॥

षड्विंश अध्याय

अब सुनि षर्डविसत अध्याइ, नंद गरग के बचन सुनाइ।
समाधान गोपन कौ करिहै, बाल-चरित-मधु पुनि बिस्तरिहै।
अद्भुत कर्म कुँवर कान्ह के, निरखि गोप अति सब चकमके।
विस्मय भये, महा छबि छये, मिलि कै नंद महर ढिंग गये।
५ अहो नंद यह तुम्हरौ तात, यामैं सब अचरज की बात।
क्यौं बूझियै जनम हम माहीं, हम गँवार या लाइक नाहीं।
कहँ यह सात बरस कौ बारौ, कहँ वह गिरि गोबरधन भारौ।
कर करि उचकि लियौ वह ऐसैं, मद गजराज कमल कौं जैसैं।
अरु जब प्रथम बैस बर बारी, आँख्यौं नाहिंन हुती उघारी।
१० आई जब जु बकी तक तकी, देति भई बिष, नहिं कछु सकी।
पय सौं ताके प्रान मिलाइ, जैसैं काल ऐन लै जाइ।
पुनि वह सकट बिकट भर भरयौ, तामैं आनि असुर इक अरयौ।
तनक चरन ऐसैं करि करयौ, तब वह सकट उलटि ही परयौ।
पुनि जब एक बरष कौ भयौ, तृनावर्त्त उड़ि लै नभ परयौ।
१५ कैसैं कंठ घोटि कै मारयौ, बहुरयौ आनि सिला पर डारयौ।
अरु जब चोरी माखन खात, पकरे बाँधे जसुमति मात।
जमलार्जुन मधि आइ सुभाइ, कैसैं गिरि से दिये गिराइ।
अरु वह ब्रत्सरूप ह्वै आइ, कैसैं पकरे पिछले पाइ।
दियौ फिराइ, उपर ही मरयौ, कितक कपित्थ साथ लै परयौ।
२० बकी अनुज बक बछरन चारत, आयौ सबन सँघारत मारत।

करकर चौंच विदारचौ कैसैं, चीरत कोउ पटेरहि जैसैं।
धेनुक खर अति बल कलमल्यौ, बलदाऊ कैसैं दलमल्यौ।
ताके बंधु डेल से करे, ऊँचे फल तिनहूँ करि झरे।
गोप बेष करि असुर प्रलंब, कैसैं गयौ न लग्यौ बिलंब।
पसु अरु पसुप दवानल माहीं, चकित भये जित-कित ह्वै जाहीं। २५
कैसैं राखि आपने लये, अगिनिहि तछन भछन करि गये।
अरु वह काली गरल बिसाली, ताके फन पर चढ़ि बनमाली।
तांडव नृत्य नचे सो कैसैं, देखे-सुने न कितहूँ ऐसैं।
जमुना कैसैं निर्मल भई, मानौं बहुरि नई करि छई।
अहो नंद ! ब्रजजन हैं जिते, नर-नारी पसु-पंछी तिते। ३०
तेरे सुत सौं सब की प्रीति, कोउ सुभाइ कछु ऐसिय रीति।
संका उपजत इहि तन चाहि, जैसैं सब कौ बेत्ता आहि।
कत यह सात बरस कौ सबै, फूल सौं उचकि लियौ गिरि तबै।
यातैं संका उपजत महा, कहौ नंद सो कारन कहा।
तिन के समाधान ब्रजराइ, कहे गरग के बचन सुनाइ। ३५
नामकरन मधि लच्छन लहे, अरग-अरग दै मो सौं कहे।
याके चरित परत नहिं बरने, हिय-हरने जग-मंगल-करने।
उज्जल अरुन और इक रीत, अब श्री कृप्न सु परम पुनीत।
पूरव जन्म कहूँ सुत तेरौ, पूत भयौ है बसुदेव केरौ।
तातैं बासुदेव इक नाम, पूरन करिहैं सब के काम। ४०
और बहुत तव सुत के नाम, सब गुन-धाम परम अभिराम।
रूप अनंत, गुन-कर्म अनंत, गनत गनत कोउ लहै न अंत।

अरु यह वहुत श्रेय कौं करिहै, तुम्हरी सबै आपदा हरिहै।
जो यासौं करिहैं अनुराग, तिन सम अवर नहिंन वड़भाग।
४५ अति परिभव करि सिघिनि कैसैं, हरि अनुसरि नर सुर भयौ जैसैं।
नाराइन मधि गुन हैं जिते, तेरे सुत मैं झलकत तिते।
श्री, कीरति, संपति रसमई, नाराइन हू तैं अधिकई।
यातैं याके करमन माहीं, रंचक बिस्मै करियै नाहीं।
सुनि ये वचन नंद के नये, गोप सबै गत-विस्मय भये।
५० षर्डविसत अध्याइ यह, षर्डविसत जु अनूप।
सो गिरिधर प्रभु नंद के, दसयें आश्रय रूप॥

सप्तविंश अध्याय

अब सुनि सप्तविंस अध्याइ, जामैं इंद्र मंद लजि जाइ।
बिनती करि, परि हरि के पाइ, जैहै घर अपराध छिमाइ।
अद्‌भुत कर्म कान्ह जव करचौ, छत्राकार महा गिरि धरचौ।
ऐसैं अरि तैं लयौ व्रज राखि, बोले सुर मुनि जै जै भाखि।
५ तव वह सुररानौ बिलखानौ, आयौ कितहूँ तैं बिररानौ।
लोकन मुख दिखाइ नहिं सकै, नंददुलारेहि न्यारे हित कै।
तनक कहूँ एकांतहि पाइ, धाइ आइ हरि लै रह्यौ पाइ।
रबि सम मुकुट चरन पर लुठै, पुनि पुनि पगनि घुरै नहिं उठै।
देख्यौ-सुन्यौ प्रभाउ प्रभू कौ, गिरि गयौ गर्ब जु लोक तिहू कौ।
१० क्रम क्रम उठचौ सु थर थर डरै, अंजुलि जोरि स्तुती अनुसरै।

हो प्रभु सुद्ध तत्वमय रूप, एक रूप पुनि नित्य अनूप।
रज गुन, तम गुन, ये सब डरैं, तुम कहुँ दूरि परे तैं परैं।
हम रज गुन, तम गुन करि भरे, अंध दुर्गंध गर्ब-मद-भरे।
कहँ तुम निज आनँद-रस-भरे, कित हम लोह, मोह, मद-भरे।
दुष्ट-दमन तुम्हरौ अवतार, हे अद्‌भुत ब्रजराज-कुमार। १५
परम धरम रच्छा जु करत हौ, हम से खलन कौं दंड धरत हौ।

पूर्व पक्ष

जौ कहौ सक्तिवान अस कौंन, तुम कौं दंड धरि सकै जौन।
तुम तौ त्रिभुवन-कारन, पालक, हम ब्रजजन गोपालक बालक।
तहाँ कहत हँसि सुरपति बैन, हो श्रीकृष्ण कमल-दल-नैंन।
जगत-जनक, गुरु-गुरु, तुम स्वामी, सब जंतुन के अंतरजामी। २०
तुम हीं महा दुरासद काल, धारे दंड प्रचंड कराल।
तुम तौ उचित दंड कौं धरयौ, मो से उन्मद कौ मद हरयौ।
जौ कहौ तुम्हरौ हम कहा कियौ, ब्रज अपनौ राखि है लियौ।
तहाँ कहत सुरपति हो नाथ, तुम्हरे तनक खेल के साथ।
मो सन कौं जु महा अभिमान, मर्दन होत जानि-मनि जान। २५
नहिं जान्यौ तुम्हरौ परभाव, मत्त भयौ सुरराव कहाव।
मंद बुद्धि हौं निपट असाध, छमा करहु मेरौ अपराध।
अब प्रभु मो पै ऐसैं ढरौ, ऐसी असत मति बहुरि न करौ।
श्रीमद करि जु अंध ह्वै गयौ, मनु अंजन रंजन तुम दयौ।
तुम ईस्वर गुरु आतम अपने, और सबै रजनी के सपने। ३०

ऐसैं अस्तुति सरसिज-नैंन की, कीनी इंद्र अभय-पद-दैन की।
तब बोले हरि ढरि इहि भाइ, मधुर बचन, मधुरे मुसकाइ।
अहो अमर वर हो वड़भाग, मैं मेटचौ जु रावरौ जाग।
ह्वै गयौ हुतौ निपट मतवारौ, श्रीमद-मान-पान करि भारौ।
३५ भूलि गये हे हम तुम ऐसैं, पुनरपि काज न ह्वैहै जैसैं।

गर्व करौ जिनि भूलि कोउ, गृह-जन-धन कौं पाइ।
'नंद' इंद्र तैं को बड़ौ, दीनौ धूरि मिलाइ॥

तदनंतर सुरभी इत आइ, वंदे नंद-सुवन के पाइ।
जग मैं कामधेनु हैं जिती, आई ताके गोहन तिती।
४० स्तुती करति हैं, नैंन भरति हैं, पुनि पुनि प्रभु के पाइ परति हैं।
हो श्री कृष्न अमित परभाव, वलि कीनौ इहि सरल सुभाव।
इंद्रहि मंद तौ तुम हीं करे, अजहूँ मत्त न डर उर धरे।
हती हुती हरि बिन हत्यारे, राखी सुंदर कान्हर बारे।
बावरौ हुतौ रहौ यह मंद, वलि बलि तुम कहुँ करिहैं इंद।
४५ गाइ-बिप्र देवता जितेक, तुव पद-पंकज परत तितेक।
अब तैं हमरी रच्छा करहु, ऐसैं इंद्र बिना ही सरहु।
अभिषेक कौं करन जगमगी, डोलति सुरभि प्रेम रँगमगी।
अपने पै कंचन-घट भरैं, सुभग सुगंध सरस सौं अरैं।
गगन गंग कौ जल नवरंग, आये कर करि अमर ते अंग।
५० कंचन-आसन पर ब्रज-चंद, बैठारे जब सब सुख-कंद।
तिहि छिन गन गंधर्ब जितेक, बिद्याधर चारन जु तितेक।
लगे जु प्रेम बिमल जस गावन, जिन के सुनत हौइ जग पावन।

नचत अप्सरा अति मुद भरी, जनु नग-जरी छुटन की छरी।
अमर नगर तैं बरषत फूल, सब के हिये समात न मूल।
हौन लगे अभिषेक जु महा, तिहि छिन की छवि कहियै कहा। ५५
कुटिल अलक तैं चुवत जलकनी, बदन की दुति पुनि परति न गनी।
जनु अंबुज-रस अलि अनियारे, मुख भरि भरि डारत मतवारे।
धरचौ गोबिंद नाम अभिराम, पूरन भये सबन के काम।
जब हीं इंद्र भये गोबिंद, ठाँ ठाँ उमगे परमानंद।
बूड़ि गई, कछु परति न बरनी, छाई रहति दूध करि धरनी। ६०
सरितन की छबि जात न कही, उमगि उमगि सब रस भरि बही।
जंतु सबै अति हर्षित भये, सहज प्रसन्न दुरमति मिटि गये।
फूले फूल रहत द्रुम जिते, मधुर मधुर मधु बरषत तिते।
अन्न अनेक भाँति ही नये, उपजत भये बिना ही बये।
नगन मध्य नग हुते जितेक, लै लै ऊपर बैठे तितेक। ६५
समुद पुनि उत्तम मोती जिते, कढ़ि कढ़ि बाहिर डारत तिते।
मंद सुगंध पवन नित सरसै, करकस ह्वै कहुँ तनकन परसै।
स्वर्ग तैं सुंदर सुंदर फूल, बरष्यौ करत सदा अनुकूल।
इंद्र-गोबिंदहि दै अभिषेक, सुर, मुनिगन, गंधर्ब जितेक।
आग्या पाइ चले निज ओक, सुखित भये तब हीं सब लोक। ७०

सप्तबिस अध्याइ यह, इंद्र भये गोबिंद।
'नंद' नैंक इहि गाइ धौं, को है कलि-मल मंद।

अष्टविंश अध्याय

अब सुनि अष्टविंस अध्याइ, पैहौ जहाँ निरोध के भाइ।
सुरपति उनमद कौ मद हरचौ, अब चाहत बरुनहि बस करचौ।
परमानँद मूरति जो नंद, अरु घर मैं सुत सब सुख-कंद।
सो एकादसि ब्रत आचरै, हरि इच्छा बिन क्यौं अनुसरै।
५ एक समै द्वादसि दिखि थोरी, उठे नंद कछु मति भई भोरी।
सास्त्र के बल तैं अति कलमले, अरुनोदय तैं पहिले चले।
जाइ जमुन निर्मल जल धसे, तहँ अन्हात नंद कछु लसे।
उज्जल अंग सु को छवि गनौं, खोरत इंदु कलिंदि मैं मनौं।
जप-तप कछू करन नहिं पये, बरुन के लोक पकरि लै गये।
१० ब्रजराज के संग जन जिते, कूकत भये जमुन-तट तिते।
सुनत उठे मनमोहन लाल, आलस-रस भरे नैंन बिसाल।
पितु के हित आतुर गति भये, करुनालय बरुनालय गये।
बरुन निरखि जु उठचौ अकुलाइ, पगन मैं लोट-पोट ह्वै जाइ।
पाछे प्रभु-पूजा अनुसरचौ, डोलत बरुन परम रँग भरचौ।
१५ उत्तम उत्तम रिधि-निधि जिती, आनि धरी हरि चरननि तिती।
दुर्लभ दरस दिखि बढ़चौ जु हेतु, अरप्यौ सब अपनपौ समेत।
पुनि पुनि माथ नाथ-पग धरै, अंजुलि जोरि अस्तुति कछु करै।
हो प्रभु! यह जु देह मैं धरचौ, अरु सब अरथ परापति करचौ।
तव पद-पंकज दरसे-परसे, कौंन पुन्य धौं मेरे सरसे।
२० अरु संसार असार अपार, सहजहि भयौ जु ताके पार।

तुम अपने परमातम स्वामी, ब्रह्मरूप सब अंतरजामी।
लोक सृष्टि सिरजत यह माया, तुम तैं दूरि मलमई काया।
हे सरवग्य, अग्य जन मेरे, जाने नहिंन धर्म प्रभु केरे।
तुम्हरे पितहि जु इत लै आये, कछु भाये, कछु मोहिं न भाये।
पुनि पुनि धरत पगन पर सीस, अति प्रसन्न कीने जगदीस।　　२५
छबिली भाँति अपने घर आये, ब्रज मैं घर घर मंगल गाये।
नंद जु जब बरुनालय गयौ, निरखि बिभूति चकृत अति भयौ।
पुनि जब सुत के पाइनि परयौ, तब ब्रजराज अचंभे भरयौ।
कहन लग्यौ हिय मैं यह बात, ईस्वर है यह मेरौ तात।
स्वच्छ मुक्ति जो ब्रह्म है कोई, हम कौं सहजहि दैहै सोई।　　३०
ऐसैं जब विस्मय करि लसे, तब गोबिंदचंद्र मृदु हँसे।
भक्त मनोरथ पूरन करने, जैसैं बेद-पुरानन बरने।
जिंहि गति प्रेरे जोगीजन-मन, जात है क्रम क्रम करि तप कै पन।
संसारी-जन तहँ को गने, काम-कर्म जु अविद्या सने।
तिहि गति बैठे सब ब्रज लोइ, पूरन तरुन, किरनमय होइ।　　३५
प्रथमहि ब्रह्म बिषै अनुसरे, इहि न ब्रह्म घर ता मधि अरे।
देह सहित ब्रह्म देखन गये, तहँ के सुख ते सब अनभये।
तातैं पुनि बैकुंठ सिधारे, तहँ के सुख नीके अवधारे।
मूर्तिवंत जहँ चारौ बेद, बरनत प्रभु के नाना भेद।
अरु कौतुक जे कान्ह ब्रज करे,. गिरिबर-धरन अवर रँग भरे।　　४०
ते सब गान करत श्रुति जहाँ, नंदादिक सुनि चकि रहे तहाँ।
परी चटपटी सब के मन मैं, कब देखैं इहि बृंदाबन मैं।

मधुर मूर्ति विन जव अकुलाने, तव फिरि बहुरचौ ब्रज ही आने।
मित्र कहत कि ब्रह्म मैं जाइ, पुनि अकुंठ बैकुंठहि पाइ।
८५ वहुरि जु लोकन मैं फिरि आवै, यह संदेह मोहिं भरमावै।
'नंद' कहत कछु जिनि करि चित्र, जिन के मनमोहन से मित्र।
नंद-सुवन दिनमनि सम रूप, ब्रह्म-बियापी जाकी धूप।
बैकुंठ मधि सुक्ख हैं जिते, सव वृंदाबन ठाँ ठाँ तिते।
अप्टविंसत अध्याइ की, लीला सब सुख-कंद।
५० मुक्ति न मन-मानी जहाँ, फिरि आये ब्रजचंद॥

एकोनत्रिंश अध्याय

उनतीसौं अध्याइ सुनि मित्र, जामैं रास उपक्रम चित्र।
ब्रह्मादिकन जीति कंदर्प, बाढ़चौ हुतौ वाके अति दर्प।
कियौ चहत अब ताकौ खंडन, जय जय गोपी-मंडल-मंडन।
आगामिनी जामिनी जु ही, ब्रजभामिनीन सौं जे कही।
५ ते आई जब परम सुहाई, नंद-सुवन दिखि अति मनभाई।
प्रफुलित सरद मल्लिका जहाँ, अवर अनेक कुसुम छबि तहाँ।
जब हीं नँद-नंदन मन भयौ, तब हीं उड़प उदय है लयौ।
अरुन बरन तहँ सोभित ऐसौ, प्राची दिसि तिय कौ मुख जैसौ।
दीरघ काल मिल्यौ है पीय, तिन मनु कुंकुम रंजित कीय।
१० लसत अखंडल मंडल जाकौ, ऐ किधौं है इह बदन रमा कौ।
उझकत कौतुक अपने रवन कौ, अधिकार न जनु इतहि अवन कौ।

कोमल किरन अरुनिमा नई, कुंजनि कुंजनि प्रसरित भई।
हरिपिय-हिय-अनुराग जु भरचौ, सोई जनु निकसि वाहिरै परचौ।
स्याम रंग सिंगार कौ, अरुन रंग अनुराग।
पीत रंग है प्रेम कौ, ओढ़ै कोउ वड़भाग॥ १५
तव लीनी कर-कंजनि मुरली, खर्जादिक जु सप्त सुर जुरली।
सोइ जोग-माया गुन-भरी, लीला-हित हरि आश्रित करी।
सिव मोहिनी जु वह मोहिनी, वा तैं मुरली सरस सोहिनी।
वहुरचौ अधर-सुधासव रली, मधुर मधुर गति व्रज कहुँ चली।
सुनी सवन पै तेई आई, जे हरि मुरली माँझ बुलाई। २०
प्रीतम-सूचक सब्द सुढारक, सुनतहि इतर राग बिस्मारक।
दुहत चली जु दह्यौ तजि चली, सिद्ध बस्तु तेऊ दलमली।
या करि अर्थ, धर्म अरु काम, परिहरि चलति भई सव वाम।
मात-तात-भ्रातन करि वरजी, पतिन अनेक भाँति कै तरजी।
तदपि न रही सबै पचि रहे, जिन के मन मनमोहन गहे। २५
प्रेम-विवस जु बिकल व्रज-बहूँ, भूषन-बसन कहूँ के कहूँ।
धरे हुते जे परम सुहाये, जहाँ के तहाँ आप ही आये।
मन-बच-क्रम जु हरिहि अनुसरै, कवन विघन जु बिघन कौं करै।
श्रवननि मनि-कुंडल झलमले, वेगि चलन कहुँ जनु कलमले।
कुंतल संकित बने जु नैंन, मैन के मनहि देत नहिं चैन। ३०
एक जु तिय घर मैं घिरि गई, बिबस भई, निकसन नहिं पई।
देखे-सुने हुते हरि जैसैं, ध्यान धरे हिरदै मैं तैसैं।
तजि तजि तिहि छिन गुनमय देह, जाइ मिली करि परम सनेह।

जद्दपि जार-बुद्धि अनुसरी, परमानंद-कंद-रस भरी।
३५ मित्र कहत यौं वनत है कैसें, मो मन में आवत नहिं तैसें।
'नंद' कहत यह जिय जनि धरौ, अमृत-पान कोउ कैसें करौ।
बहुरि कहत यह गुनमय देह, पाप-पुन्य, प्रारब्ध के गेह।
भुगते विन न घाटि ह्वै जाही, कव भुगतै यह मो मन माही।
दुसह विरह जु कमल-नैंन कौ, अनेक भाँति के दुक्ख दैन कौ।
४० सो दुख आनि परचौ जव इन मैं, कोटि नरक-दुख भुगये छिन मैं।
ता करि पापन कौ फल जितौ, जरि बरि मरि सरि गयौ है तितौ।
पुनि रंचक धरि हिय मैं ध्यान, कीने परिरंभन, रस-पान।
कोटि सुरग सुख छिनक मैं लिये, मंगल सकल बिदा करि दिये।
तब यह प्रश्न परीच्छित करी, हो प्रभु! मो मन संका परी।
४५ नंदकिसोरहि सुंदर जानि, भजति भई न ब्रह्म पहिचानि।
गुन प्रवाह ऊपर भयौ कैसें, यह हौं नाहिंन समझत तैसें।
श्री सुक कही कि हम तौ पाछे, कहि आये नृप तो सौं आछे।
दुष्टन कौ नृप, नृप सिसुपाल, निंदत ही वीत्यौ सब काल।
पूछ्यौ-गन्यौ न ताकौ हियौ, लै बैकुंठ पारषद कियौ।
५० ये हरि-प्रिया परम रस ओपी, जिनहुँ सबै बिधि इहि बिधि लोपी।
आवृत ब्रह्म जियन मैं मानि, कृष्ण अनावृत ब्रह्म है जानि।
नरन के श्रेय करन हित तेही, दिखियत आत्मा परम सनेही।
कौंनहि भाँति कोउ अनुसरौ, काम-क्रोध-भय सौं हृद करौ।
हे नृप! ह्याँ कछु चित्र न मानि, ते सब हरिहि मिलेई जानि।
५५ नूपुर-धुनि जब श्रवननि परी, सब अँग श्रवन भये उहि घरी।

दिष्टि परी जब तव सब अंग, दृगन मैं भरे, रहे रस-रंग।
कुंजन तैं निकसत मुख लसैं, चहुँ दिसि उदित चंदगन जैसैं।
आसपास ठाढ़ी भई आइ, ता छिन की छबि नहिं कहि जाइ।
इकहि बैस, समकंध सुदेस, ऊपर बनै जु वदन बिसेस।
कंचन कोटि काम जनु करचौ, चंद कौ बृंद कँगूरनि धरचौ। ६०
छबि सौं चितये सवन की ओर, बोले नागर नंदकिसोर।
प्रथमहि वचन धर्म नेम कौ, कहन लगे जु परम प्रेम कौ।
हे बड़भाग भले ही आई, क्यौं आई कछु संभ्रम पाई।
व्रज मैं कुसर-खेम तौ आहि, कारन कवन कहहु किन ताहि।
तब सब मंद परस्पर हँसी, लाज-लपेटी अँखियाँ लसीं। ६५
या छबि की कछु उपमा नहीं, लसौ-बसौ नित जहँ की तहीं।
पुनि बोले दिखि तिन की ओर, यह सजनी यह रजनी घोर।
तियन की नहिन निकसनी बेर, बेग जाहु घर होति अबेर।
मात, तात, पति भ्रात तुम्हारे, ढूँढ़त ह्वैहैं बंधु पियारे।
चटपटी परी होइहै सब हीं, कहिहैं कित गई इत ही अब हीं। ७०
तब कछु प्रनय-कोप-रस-पगी, छुभित ह्वै इत-उत चितवन लगी।
तब बोले तिन सौं मनमोहन, हौं जानौं आई बन जोहन।
देखहु बन कुसमित छबि छयौ, राका ससि करि रंजित भयौ।
अरु इत यह कलिंद-नंदिनी, बहति सरस आनंद-कंदिनी।
इत यह ललित लतन की फूलनि, फूलि फूलि जमुना जल झूलनि। ७५
देख्यौ बन, अब गृह अनुसरौ, हे सति पतिन की सेवा करौ।
अरु जौ बन देखन नहिं आई, मो हित करि आई मोहिं भाई।

जुगति करी, न करी अनरीति, मो सौं सबै करत हैं प्रीति।
ऐसैं बहुतै बिप्रिय बैन, कहे जु प्रीतम पंकज-नैंन।
८० भग्न-मनोरथ चिंता परी, रहि गई जनु कि चित्र है करी।
दृगन तैं अंजन जुत जलधार, धसी सु तन पर इहि आकार।
कनक बरन जनु ढार सुढार, दीने सूत बिरह सुत धार।
भरत उसास हुतासन ररे, मुरझत अधर-बिंब मधु भरे।
चरननि धरनि लिखनि इमि गनौ, अवनि तैं मारग माँगति मनौ।
८५ मुनि कै प्रिय के अप्रिय बैन, ज्यौं कोउ इतर कहै दुख दैन।
जल गँभीर नैंनन की कोर, पौंछि कै छबिले पटन के छोर।
गदगद गरन कहति भई ऐसैं, काँपाजुत सुर पिकगन जैसैं।
अहो अहो सुंदर बर ब्रजनाइक, क्रूर वचन नहिं तुम्हरी लाइक।
जिनि बोलहु बलि अति दुख दैन, तुम तरुना करुना-रस-ऐन।
९० सब परिहरि हरि चरननि आई, बलि अब भजौ तजौ निठुराई।
जैसैं आदि पुरुष वह कोई, मुमुखन भजत सुन्यौ हम सोई।
अरु जु अपति पति सुहृद सुभूषन, तियन कौ धरम कह्यौ जु अदूषन।
हे ब्रजभूषन नहिं अब इधै, सो सब होत तुम्हारे बिषै।
तुम अपने आत्मा नित नित के, सुत-पति अति दुखदाइक कित के।
९५ करम-धरम कौ फल जुग जुग ही, निगम कहत जिहिं सो तौ तुही।
फल फिरि बहुरि सिखावै धर्म, च्याये रहौ, दहौ जिनि मर्म।
अरु जे सास्त्र निपुन जन जिते, चरन-कमल-रज बाँछत तिते।
रमा रमनि के चहियतु कहा, तुम करि दियौ उरस्थल महा।
जाकी चितवन हित सुर सब के, ब्रह्मादिक तप करत हैं कब के।

तिन तन कबहूँ नैंक न चहैं, चित तौ तुव पद-पंकज रहैं। १००
अरु यह तुलसी लसी रस भरी, अनु दिन रहति पगन पर परी ।
यातैं तुम्हरे चरन सेइहैं, सुख देइहैं कछु न लेइहैं ।
अरु जो कहत कि जाहु ब्रज माहीं, जाहिं कहाँ अरु कह लै जाहीं ।
चित तौ तुमहिं चोरि है लियौ, चरन न चलै कहा धौं कियौ ।
हियौ नहीं अब हाथ हमारे, करिहैं कहा ब्रज जाइ तिहारे। १०५
हो पिय ! यह कल गीत तिहारौ, महा अनिल के बान अनिवारौ ।
अधर-अमृत करि काहे न सींचत, मुसकि मुसकि बलि क्यौं दृग मींचत ।
जौ न सींचिहौ पिय ब्रजनाथ, तौ इह बिरह अगिनि के साथ ।
धरि धरि ध्यानहि जरि बरि अबै, ह्वैहैं आनि कै दासी सबै ।
जौ कहौ क्यौं भई दासी हमारी, तजि तजि गृह ठकुराइत भारी। ११०
तहाँ कहत अहो पिय मनमोहन, आवत तुम जब गोगन गोहन ।
बदन-कमल परि घूँघर केस, देखि कै गोरज छुभित सुबेस ।
तैसैंई मनि-कुंडल छबि बढ़े, दुहुँ दिसि जात मीन से चढ़े ।
मृदुल मुकुर से लोल कपोल, मंद हसनि मिलि करत कलोल ।
अरु अधरन मधि मधु झलमली, दिखि दिखि उपजत हिय कलमली। ११५
अरु यह छबिली छती साँवरी, भुज रावरी रूप बावरी ।
इन करि सुधि बुधि गई हमारी, यातैं भई पिय दासी तुम्हारी ।
जौ कहौ उपपति-रस नहिं स्वच्छ, सब कोउ निंदत अरु अति तुच्छ ।
तहाँ कहति हैं ब्रजभामिनी, लहलहाति जनु नव दामिनी ।
तुम्हरी यह कलगी तजि पीय, त्रिभुवन माँझ कवन अस तीय। १२०
सुनतहि आरज-पथ नहिं तजै, सुंदर नंद-सुवन नहिं भजै ।

सुनि खग-मृग जु रहैं कौर तैं, जमुना चलि न सकति ठौर तैं।
पुरुपहु चले जु हैं दृढ़ हिया, हो पिय कवन आहि ये तिया।
जैसैं आदि पुरुप सुर लोक, दूरि करत हैं तियन कौ सोक।
१२५ तैसैं ब्रजजन दुख के हरता, तुम कीने पिय जो कोउ करता।
रंचक कर-पंकज सिर धरौ, जरत है तन-मन सीतल करौ।
ऐसैं विरह विकल कल बैन, सुनि कै तरुना करुना ऐन।
जोगीस्वरन के ईस्वर स्याम, बहुरचौ जदपि आत्माराम।
रमत भये तिन सौं रस बातैं, केवल एक प्रेम के नातैं।
१३० ग्यान तुलित, बिग्यान पुनि, तुलित तुलित जम-नेम।
सबै बस्तु जग मैं तुलित, अतुलित एकै प्रेम॥
ऐसैं प्रभु बस होत जिहिं, सुनहु प्रेम की बात।
तप करि प्रेरे मुनिन के, मन जहँ लगि नहिं जात॥
बिहरत बिपिन विहार उदार, ब्रजरमनी ब्रजराज-कुमार।
१३५ पियहि पाइ तिय के मुख लसैं, सरद मैं सरसिज होत न असैं।
बीरी खात, दिये गरबाँहीं, डोलत फूली कुंजन माँहीं।
तिन मधि बने कुँवर नँद-नंद, बड़े उड़न सौं ज्यौं घन चंद।
बिलुलित उर बैजंती माल, लटकत चलत सु मद गज चाल।
इहि परकार कुँवर रस भरे, छबि सौं जमुन पुलिन अनुसरे।
१४० कोमल उज्जल बालुका जहाँ, मलय समीर धीर नित तहाँ।
सु कर तरंगन करि कै जमुना, रच्यौ रुचिर जहँ और की गमु ना।
सीतल मंद सुगंध बयारि, पंखा करति वनिता बपु धारि।
भृंगन सहित भृंगन की घरनी, बीन सी बजति महा सुखकरनी।

कमल अमोद, कुमुद आमोद, सब परिमल जहँ देत बिनोद।
तहाँ बैठि भुज भुज गरमेलनि, परिरंभन, चुंवन, कल केलनि। १४५
कच-लट गहि बदनन की चूमनि, नख नाराचन घायल घूमनि।
कुचन की परसनि, नीबी करसनि, सुखन की वरसनि मन की सरसनि।
ताही के सरन मैन जब हत्यौ, दुखित भयौ घूमत जिमि मत्यौ।
भस्म करहिं जिनि इह डर डरचौ, तब उठि प्रभु के पाइनि परचौ।
कोटि अनंग अंग के भौन, इक अनंग जीतिबौ सु कौंन। १५०
सिव से जीतत कैसेंहुँ कैसें, दृढ़ बैराग्य जोग बल तैसें।
ऐसें बिस्व-विमोहन कामहि, को जीतहि बिन मोहन स्यामहि।
अपने रस वस देखि साँवरे, ह्वै गये तियन के मन बावरे।
कहति भईं भरि हिय अभिमान, हम सम तिय न तिहूँ पुर आन।
यहै मान बढ़ि सैल समान, ओट परि गये पिय भगवान। १५५

सुनै जो कोउ मन-क्रम-बचन, उनतीसौं अध्याइ।
ध्वंसनि कलि-मल-बंस कहुँ, 'नंद' न अवर उपाइ॥

पदावली

बधाई

बधाई माई आज बधाई ।

आज बधाई सब ब्रज छाई, ब्रज की नारि सबै जुरि आई ।
सुंदर नंद महर जू के मंदिर, प्रगटचौ है पूत सकल सुख कंदर ।
होत ही ढोटा ब्रज की सोभा, देखि सखी कछु और ही ओभा ।
मालिन सी जहँ लछिमी डोलै, बुंदनमाला बाँधति लोलै ।
बगर बुहारति फिरति अष्टसिधि, कोरन सथिया चीतति नवनिधि ।
गृह गृह तैं गोपी गमनी जब, गली रँगीलिन भीर भई तब ।
बीथी प्रेम-नदी छबि पावैं, नंद-सुवन-सागर कौं धावैं ।
हाथनि कंचन-थार रहे लसि, कमलनि चढ़ि आये मानौं ससि ।
मंगल कलस जगमगे नग के, भागे सकल अमंगल जग के ।
फूले ग्वाल मनौं रन जीते, भये सबन के मन के चीते ।
कामधेनु तैं नैंक न हीनी, द्वै लख गाइ द्विजन कौं दीनी ।
नंदराइ तहँ अति रस भीने, पर्बत सात रतन के दीने ।
नंदराइ गृह माँगन आये, ते बहुरचौ माँगन न कहाये ।
घर के ठाकुर के सुत जायौ, 'नंददास' तहँ सब सुख पायौ ।

जुरि चली हैं बधाये नंद महर घर, चंचल ब्रज की बाला ।
कंचन-थार, हार चंचल, छबि कहि न परत तिहि काला ।।

डहडहे मुख, कुंकुम-रँग-रंजित, राजत रस के ऐंना ।
कंजन पर खेलत मानौं खंजन, अंजनजुत वने नैंना ।।
दमकत कंठ पदिक मनि कुंडल, नवल प्रेम-रँग वोरी । २०
आतुर गति, मानौं चंद उदय भयौ, धावति तृपित चकोरी ।।
खसि खसि परत सुमन सीसन तैं, उपमा कौंन बखानौं ।
चरन-चलन पर रीझि चिकुर वर, वरषत फूलन मानौं ।।
गावति गीत, पुनीत करति जग, जसुमति-मंदिर आई ।
बदन बिलोकि, वलैया लै लै, देत असीस सुहाई ।। २५
ता पाछे गन गोप ओप सौं, आये अतिसय सोहैं ।
परमानंद-कंद रस भीने, निकर पुरंदर को हैं ।।
मंगल कलस निकट दीपावलि, ठाँ ठाँ दिखि मन भूल्यौ ।
मानौं आगम नंद-सुवन के, सुवन फूल व्रज फूल्यौ ।।
आनँद-घन ज्यौं गाजत, राजत, बाजत दुंदुभि भेरी । ३०
राग-रागिनी गावत हरषत, बरषत सुख की ढेरी ।।
परम धाम, जगधाम, स्याम अभिराम श्री गोकुल आये ।
मिटि गये द्वंद 'नंददासन' के भये मनोरथ भाये ।।

श्री गोपाल लाल गोकुल चले, हौं बलि बलि तिहि काल ।
मोद भरे बसुदेव गोद लै, अखिल लोक प्रतिपाल ।। ३५
तरनि तेज जैसैं तम फूटत, खुलि गये कुटिल कपाट ।
महा बेग बल छाँड़ि आपनौ, दीनी श्री जमुना बाट ।।
भोर भये कुमुदिन ज्यौं मूँदत, कंसादिक भये मोहे ।
संत जनन के मन अंबुज बनि, फूल डहडहे सोहे ।।

४० वार वार फुहीं फूल सी बरषत, अंबुद अंबर छायौ।
अपनौ निज वपु जानि सेस तहँ, बूँद बचावन आयौ॥
परम धाम, जगधाम, स्याम अभिराम श्री गोकुल आये।
'नंददास' आनंद भयौ व्रज हर्षित मंगल गाये॥

माई आज गोकुल गाम, कैसौ रह्यौ फूलि कै।
४५ गृह फूले दीसैं, जैसैं संपति समूल कै॥
फूली फूली घटा आई, घरहर घूमि कै।
फूली फूली बर्षा होति, झर लायौ झूमि कै॥
फूलौ फूलौ पुत्र देखि, लियौ उर लूमि कै।
फूली हैं जसोदा माइ, ढोटा मुख चूमि कै॥
देवता अगिनि फूले, घृत-खाँड़ होमि कै।
फूल्यौ दीसै दधिकाँदौ, ऊपर सो भूमि कै॥
मालिन बाँधै बंदनमाल, घर घर डोलि कै।
पाटंवर पहिराइ (राइ?), अधिकै अमोल कै॥
फूले हैं भँडार सब, द्वारे दिये खोलि कै।
नंद दान देत फूले, 'नंददास' बोलि कै॥

श्री बृषभान नृपति के आँगन, बाजत आज बधाई।
कीरति जू रानी हुलसानी, सुता सुलच्छन जाई॥
सक्ति सबै दासी हैं जाकी, याहू तैं अधिक सुहाई।
निरवधि नेह, अवधि रसमूरति, प्रगटी सब सुखदाई॥
ब्रह्मादिक, सनकादिक, नारद, आनँद उर न समाई।
'नंददास' प्रभु पलना पौढ़े, किलकत कुँवर कन्हाई॥

बालकृष्ण

चिरैया चुहचुहानी, सुनि चकई की बानी,
कहति जसोदा रानी, जागौ मेरे लाला।
रवि की किरन जानी, कुमुदिनी सकचानी,
कमलन बिकसानी, दधि मथैं बाला ।। ६५
सुबल श्रीदामा, तोक उज्जल बसन पहिरें,
द्वारे ठाढ़े हेरत हैं बाल गोपाला।
'नंददास' बलिहारी, उठि बैठौ गिरिधारी,
सब कोउ देख्यौ चाहैं लोचन बिसाला ।।

आज सिँगार स्यामसुंदर कौ देखे ही बनि आवै। ७०
स्याम पाग अरु स्वेत चोलना छूटे बंद सुहावै ।।
मोतिन माल हार उर ऊपर, कर मुरली जु बजावै।
'नंददास' प्रभु रसिक कुँवर कौं लै उछंग हुलरावै ।।

बाल गोपाल ललन कौं, मोद भरी जसुमति हुलरावति।
मुख चूमति, देखति सुंदर तन, आनँद भरि भरि गावति ।।
कबहुँक पलना मेलि झुलावति, कबहुँक अस्तन पान करावति।
'नंददास' प्रभु गिरिधर कौं रानी निरखि निरखि सुख पावति ।।

अहो तो सौं नँद-लाड़िले झगरूँगी।
मेरे संग की दूरि जाति हैं, मटुकी पटकि डगरूँगी।
भोर ही ठाढ़ी, कत करी मो कौं, तुम्हैं जानि कछु कानि न करूँगी। ८०
तुम्हरे संग सखान के देखत, अबहीं लाड़ उतारि धरूँगी।

सूधे दान लेहु किन मो पै, और कहा कछु पाइ परूँगी।
'नंददास' प्रभु कछू न रहैगी, जब बातन उघरूँगी।

बन तैं आवत गावत गौरी।
८५ हाथ लकुट गैयन के पाछे ढोटा जसुमति कौ री॥
मुरली अधर धरे नँद-नंदन, मानौं लगी ठगौरी।
याही तैं कुलकानि हरी है, ओढ़े पीत पिछौरी॥
अटन चढ़ी ब्रजवधू निहारनि, रूप निरखि भई बौरी।
'नंददास' जिन हरि मुख निरख्यौ तिन कौ भाग बड़ौ री॥

हनूमान्

९० जब कूद्यौ हनुमान उदधि जानकी सुधि लेन कौं।
देखन कौं दसमाथ, अपने नाथ कौं सुख देन कौं॥
जा गिरि पर चढ़ि कुलाँच लीनी उचकैयाँ।
सो गिरि दस जोजन धसि गयौ है धरनी महियाँ॥
धरनी धसि गई पताल, भार परे जाग्यौ।
९५ सेसहु कौ सीस जाइ, कमठ पीठ लाग्यौ॥
अरुन बदन तेज सदन, बड़ौ पीन गात है।
उत्तर तैं दच्छिन मानौं मेरु उड़्यौ जात है॥
जा प्रभु कौ नाम लेत, भव-जल तरि जात है।
सत जोजन सिंधु कूद्यौ, तौ केतिक यह बात है॥
१०० रामचंद्र-पद-प्रताप, जगत मैं जस जाकौ।
'नंददास' सुर-नर-मुनि कौतुक भूले ताकौ॥

रास

देखौ देखौ री नागर नट, निर्तत कालिंदी तट,
गोपिन के मध्य राजै मुकट लटक।
काछिनी किंकिनी कटि, पीतांवर की चटक,
कुंडल किरन रवि-रथ की अटक।
ततथेई ताताथेई सब्द सकल उघट,
उरप तिरप गति परै पग की पटक।
रास मैं राधे राधे, मुरली मैं एक रट,
'नंददास' गावै तहँ निपट निकट (?)।

बृंदाबन बंसी बट, कुंज जमुना के तट,
रास मैं रसिक प्यारौ खेल रच्यौ बन मैं।
राधा-माधौ कर जोरे, रबि-ससि होत भोरे,
मंडल मैं निर्तत दोऊ सरसे सघन मैं।
मधुर मृदंग बाजै, मुरली की धुनि गाजै,
सुधि न रही री कछू सुर मुनि जन मैं।
'नंददास' प्रभु प्यारौ, रूप उजियारौ कृष्न,
क्रीड़ा देखि थकित सब जन मन मैं॥

निर्तत कुंजन की परछाहीं।
नंद नंद बृषभान नंदिनी श्री बृंदावन माहीं॥
गावति गीत बजावति हस्तक याही तैं कुँवर सराहीं।
'नंददास' सहचरी भाग बिन, औरन इह सुख नाहीं॥

दीपमालिका

गाइ खिलावत सोभा भारी ।
गोरज रंजित वदन-कमल पर, अलक झलक घुँघुरारी ॥
नख-सिख अंग सुभग बहु भूषन, पहिरत सदा दिवारी ।
खेलि रही है खरिक सभा पर, नग रंगन उजियारी ॥
श्रमकन राजै भाल-गंड-भुज, या छवि पर बलिहारी ।
श्रवत हेरि चंचल अंचल सब चढ़ती हैं अटन अटारी ॥
भीर बहुत अति अहिर बृंद की, मड़हन पर ब्रजनारी ।
सैनन मैं समझावत सगरीं, धनि धनि निरखनहारी ॥
रहे खिलाइ धूमरी, धौरी, धगुरनि, काजर कारी ।
'नंददास' प्रभु चले सदन जब एक बार हुंकारी ॥

दीपदान दै हटरी बैठे नंद बबा के साथ ।
नाना विधि की मेवा मँगाई, बाँटत अपने हाथ ॥
बिबिध सिँगार पहिरि पट-भूषन और चंदन दिये माथ ।
'नंददास' प्रभु सगरिन आगे गिरि गोबर्धन नाथ ॥

हटरी बैठे श्री ब्रजनाथ ।
अपने संग सखा सब लीने, बाँटत मेवा हाथ ॥
भाँति भाँति पकवान मिठाई, बिधि सौं धरे बनाइ ।
चलौ सखी देखन कौं जैयै, सुख सोभा अधिकाइ ॥
आरति करति देति न्यौछावर मन आनंद बढ़ाइ ।
'नंददास' कुसुमन सुर बरषत, जै जै सब्द कराइ ॥

गोवर्द्धन-धारण

अब नैंक हमहिं देहु कान्ह गिरिवर ।
तुम्हें लिये वड़ी बार भई है, दूखि चल्यौ ह्वैहै कोमल कर ॥
मति डिग परै, दबैं सव ब्रजजन, भयौ है हाथ पर अति भर ।
तब कैसें यह बदन देखिहैं, तातैं जीय मैं बड़ौ यहै डर ॥ १४५
जानि सखन कौ हेत मनोहर, दियौ नवाइ नैंक अपनौ कर ।
'नंददास' प्रभु भुजा लटकि गई, तब हँसे नागर नगधर बर ॥

झूला

हिँडोरे माई झूलत गिरिधर लाल ।
सँग राजत बृषभान नंदिनी, अँग अँग रूप रसाल ॥
मोरमुकट मकराकृत कुंडल, उर मुक्ता बनमाल । १५०
रमकि रमकि झूलत पिय प्यारी, सुख बरसत तिहि काल ॥
हँसत परस्पर इत-उत चितवत, चंचल नैंन बिसाल ।
'नंददास' प्रभु की छबि निरखत, बिबस भई ब्रजबाल ॥

झूलत मोहन रंग भरे, गोपबधू चहुँ ओर ।
जमुना पुलिन सुहावनौ, बृंदाबन सुभ ठौर ॥ १५५
राधा जू करैं किलकारी, ज्यौं गरजत घनघोर ।
ता पाछे सब गोप-सुंदरी, मिलि जु करति हैं सोर ॥
तैसैंई रटत पपैया, चातक, बोलत दादुर मोर ।
'नंददास' आनँद भरे निरखत, जै जै जुगलकिसोर ॥

रँग भरी झूलति स्याम संग राधिका प्यारी।
मधुरे सुर गावति उपजावे, आछी आछी तानन मनुहारी॥
कबहुँक मंद मंद मुसकात मनोहर, कबहुँक रीझि देत कर तारी।
निरखि निरखि या मुख ऊपर तहाँ 'नंददास' बलिहारी॥

डोल झूलत हैं गिरिधरन झुलावत बाला।
निरखि निरखि फूलत ललितादिक राधा वर नँदलाला॥
चोवा-चंदन छिरकत भामिनि उड़त अबीर-गुलाला।
कमल-नयन कों पान खवावत पहिरावत मनिमाला॥
बाजत ताल मृदंग अघौटी बिच बिच कूजत बेनु रसाला।
'नंददास' जुवती जन गावति रिझवति श्री गोपाला॥

होली

अरी चलि बेगि छबीली हरि सँग खेलन जाइ।
निकसे हैं मोहन साँवरे री, फाग खेलन ब्रज माँझ।
घुमड़यौ है अबीर गुलाल गगन मैं, मानौं फूली साँझ॥
बाजत ताल, मृदंग, मुरज, डफ, कहि न परति कछु बात।
रँग रँग भीने ग्वाल बाल सब, मानौं मदन बरात॥
उत तैं सब सुंदरि जुरि आईं, करि करि अपनौ ठाट।
खेलति नहिं कोउ कान्ह कुँवर सों चाहति तेरी बाट॥
बिन राजा दल कौन काज कौ, उठि, छाँड़ियै ऐंड।
उमग्यौ निधि लौं नवल नंद कौ, रोकत रावरी मैंड़॥
उठि बिहसी बृषभानु कुँवरि बर, कर पिचकारी लेत।
सहि न सकत कोउ महासुभट बर, सनत समर संकेत॥

आई रूप अगाधा राधा, छवि वरनी नहिं जाइ ।
नवल किसोर अमल चंदै मानौं मिली है चंद्रिका आइ
खेल मच्यौ व्रज बीथिनि बीथिनि, बरषत परम अनंद ।
दमकत भाल गुलाल भरे, मानौं चंदन भुरकौ चंद ।।
और रंग पिचकारिन भरि भरि, छिरकत हरि तन तीय । १८५
कुटिल कटाच्छ प्रेम रँग भरि भरि, भरति पीय कौ हीय ।।
दुरि दुरि भरनि, बचावनि छवि सौं, बाढ़्यौ रंग अपार ।
मन मुनी सी बोलति डोलति पग नूपुर झनकार ।।
सिव सनकादिक नारद सारद बोलत जै जै जै ।
'नंददास' अपने ठाकुर की जीवै बलैया लै ।।

हो हो हो हो होरी बोलै, नंद-कुँवर व्रज बीथिन डोलै ।
नवल रँगीलौ सखा सँग लीने, राजत अँग अँग सब रँग भीने ।
रँगीली भाँति रँगीलौ निकस्यौ जहाँ, चोवा-चंदन कीच मचै तहाँ ।
ताल, मृदंग मुरज, डफ बाजै, ढोल टनक नव घन ज्यौं गाजै ।
सुनि व्रज-बधू आनँद अति बाढ़ी, निकसि निकसि सब पौरिन ठाढ़ी ।
अँजुरी अबीर छुटत छवि पावै, पंकज मनौं पराग उड़ावै ।
पिचकारिन रँग उछटत भारी, उड़ि गुलाल रँगे अटा-अटारी ।
जब लगि लाल तकत पिचकारी, तब लगि भामिनि भाँति भरी ।
जो कोउ नवल वधू भरि भागै, रँगीलौ लाल ताके गोहनै लागै ।
तिनहिं धाइ धाइ भरत छबीलौ, जैसैं जाहि बनै तैसैं रंग रँगीलौ ।
जाइ परत ललना-मंडल जब, घेरि लेत, कर तारी देत तब ।

अँग भरि भुज भरि हिये भरि लालै, छाँड़ति छबिली नहिं मदन गोपालै।
कहत न वनै, वढ़चौ रँग भारी, 'नंददास' तहँ वलि वलि हारी।

कान्हर खेलियै हो वाढ़चौ श्री गोकुल में अनुराग।
२०५ जान्यौ नहीं वहुरि कव ऐहै परम भावति फाग॥
वाजत ताल, मृदंग, झाँझ डफ, सहनाई अरु ढोल।
तुम हूँ खेलौ सखा संग लै, करहुँ आपनी ओल॥
उत तैं सवै सखी जुरि आई, प्रवल मदन के जोर।
खेल मच्यौ है नंद जू की पौरी, प्यारी राधा नंदकिसोर॥
२१० नव वृषभान नंदिनी आई, लीनी सखी वुलाई।
ऐसौ मतौ करौ मेरी सजनी मोहन पकरौ जाई॥
मुरली लेहु स्याम के कर तैं, मृगमद वदन लगाई।
हलधर की पिचकारी छीनौ, कान्हर देहु बनाई॥
चोवा, चंदन, मृगमद, केसरि, झोरिन भरहु अबीर।
२१५ लये अरगजा छिरकत डोलत, ब्रज जुवतिन के बीर॥
हलधर की पिचकारी छूटे, कोऊ न बाँधै धीर।
ब्रज बीथिन में खेलत डोलत, सखा वने सब लाल॥
गोपी-ग्वाल करत कौतूहल गावत गीत रसाल।
खेलत खेल सब आनँद बाढ़चौ, रीझे मदनगोपाल
२२० 'नंददास' सँग लागी डोलत, छबि निरखत ब्रजवाल॥

हो हो होरी खेलै नंद कौ नवरंगी लाला।
अबीर भरि भरि झोरी, हाथन पिचकारी
रंगन बोरी, तैसिय रँगीली ब्रज की बाला॥

मूरति धरे अनंग, गावत तान-तरंग,
ताल मृदंग मिलि बजावें बीन-बेन रसाला
'नंददास' प्रभु-प्यारी के खेलत रंग रह्यौ,
छबि बाढ़ी, छूटी है अलक, टूटी है माला ।।

ए री सखी निकसे मोहनलाल, खेलन ब्रज मैं फाग री ।
उमड्यौ है अबीर गुलाल, मानौं उनयौ अनुराग री ।।
सोभित मदनगोपाल, कटि बाँधे पट सोहनौ ।
काछिनि काछे लाल, लाल निचोय रँगी मनौ ।।
मोरमुकुट छवि देत, बंक दृगन हँसि देखनौ ।
सब ही कौ हियौ हरि लेत, ऐन मैन मानौं पेखनौ ।।
घट आवज सुर बीन, अनाघात गति गाजहीं ।
ताल, मृदंग, उपंग, रुज मुरज, डफ बाजहीं ।।
घिरि आईं ब्रजनारि, मृगनयनी, गजगामिनी ।
छेके हैं मदनगोपाल, घन घेर्यौ मानौं दामिनी ।।
छिरकत पिय नँदनंद, तिय पट-ओट बचावहीं ।
मानौं घन पून्यौ चंद, दुरे निकसि पुनि आवहीं ।।
बने हैं तियन के अंग, छिरकि छींट छबि छैल की ।
मानौं फूली रँग रंग, ललित लता जनु प्रेम की ।।
बढ़्यौ है परस्पर रंग, उमगि उमगि रस भरन मैं ।
निरखि भई मति पंग, पीतांबर फहरनि मैं ।।
जब गहि रंगन भरे, मोहन मूरति साँवरे ।
हरैं हरैं हरि हँसि परे, मुनि-मन ह्वै गये बावरे ।।

भई सरस्वति मति बोर, और खेल कहँ लौं कहैं ।
रस भरे साँवल-गौर, 'नंददास' के हिय रहैं ।

आज बनि-ठनि फाग खेलन निकस्यौ नंददुलारौ ।
फव्यौ है ललित भाल लाल के जटित लाल टिपारौ ।
बड़रे बंक बिसाल, नयन छवि भरे इतराहीं ।
बन्यौ है मंजुल मोरमुकट चलत देखत परछाहीं ।
उत बनी ब्रज नव किसोरी, गोरी रूप भोरी ।
बोरी प्रेम रंग मैं, मानौं एक ही डार की तोरी ।
ब्रज की बाल लिये गुलाल, मोहनलाल छाये ।
मानौं नीलघन के ऊपर, अरुन अंबुद आये ।
ताही घूँघरि मध्य मत्त भ्रमर भ्रमत ऐसें ।
बनी है छवि बिसाल, प्रेम जाल गोलक जैसें ॥
बन्यौ है जल-जंत्र-खेल छुटत रंग की धारैं ।
जानौं धनुधर सरन लखत, धार सुधारि मारैं ॥
और कहाँ लगि कहियै, खेल परम रस की मूली ।
गावत सुक सारद, नारद संभु समाधि भूली ॥
जिहि जिहि हरिचरित अमृत सिंधु सौं रति मानी ।
'नंददास' ताहि मुकति लौन कौ सौ पानी ॥

रक्षा

राखी नदलाल कर सोहे ।
पचरँग पाट के फुँदना राजत, देखत मनमथ मोहे ॥

आभूषन हीरा के पहिरे लाल पाट के पोहे।
'नंददास' वारत तन-मन-धन गिरिधर श्रीमुख जोहे॥

नाम-महिमा

कृष्न-नाम जब तें श्रवन सुन्यौ री आली,
भूली री भवन हौं तौ बावरी भई री।
भरि भरि आवें नैंन, चित हू न परै चैन, २७०
तन की दसा कछु औरै भई री॥
जेतिक नेम-धर्म-व्रत कीने री मैं बहु विधि,
अँग अँग भई मैं तौ श्रवनमई री।
'नंददास' जाके श्रवन सुने ऐसी गति,
माधुरी मूरति कैधौं कैसी दई री॥ २७५

गुरु

प्रात समै श्री वल्लभ सुत कौ उठतहि रसना लीजै नाम
आनँदकारी, मंगलकारी, असुभहरन, जन पूरन काम
इह लोक परलोक के बंधु, को कहि सकै तिहारे गुन-ग्राम
'नंददास' प्रभु रसिकसिरोमनि, राज करौ गोकुल सुखधाम॥

प्रात समै श्री वल्लभ-सुत के बदन-कमल कौ दरसन कीजै। २८०
तीनि लोक बंदित पुरुषोत्तम, उपमा को पटतर कौं दीजै॥
श्रीवल्लभ-कुल उदित चंद्रमा, यह छबि नैंन-चकोरन पीजै।
'नंददास' श्रीवल्लभसुत पर तन-मन-धन न्यौछावर कीजै॥

जयति रुक्मिनीनाथ, पद्मावतिपति, विप्र-कुल-छत्र, आनंदकारी।
२८५ दीप-वल्लभ-वंस, जगत निस्तम करन, कोटि उड़राज सम तापहारी ।।
जयति भक्ति-पति, पतित-पावन-करन, कामीजन-कामना पूर्नचारी।
मुक्ति-कांक्षीय-जन, भक्ति-दाइक-पभू, सकल सारम गुनगनन भारी ।।
जयति सकल तीरथ फलै, नाम सुमिरन मात्र, बास व्रज नित्य गोकुल बिहारी।
नंददासन' नाथ पिता गिरिधर आदि, प्रगट अवतार गिरिराज धारी ।।

२९० श्री गोकुल जुग जुग राज करौ।
यह सुख भजन प्रताप तैं कबहूँ छिन इत उत न टरौ ।।
वावन रूप दिखाइ महाप्रभु, पतितन पाप हरौ।
विस्व बिदित दीनी गति प्रेतन, क्यौं न जगत उद्धरौ ।।
श्रीवल्लभ-कुल-कमल इही वर जस-मकरंद भरौ।
२९५ 'नंददास' प्रभु षट गुन संपन्न श्री विट्ठलेस बरौ ।।

प्रकटित सकल सृष्टि आधार, श्रीमदबल्लभ राजकुमार।
धेय सदा पद-अंबुज-सार, अगनित गुन महिमा जु अपार ।।
धर्मादिक द्वारे प्रतिहार, पुष्टि भक्ति कौ अंगीकार।
श्री बिट्ठल गिरिधर अवतार, 'नंददास' कीनी बलिहार ।।

परिशिष्ट

१ संदिग्ध तथा असंपादित सामग्री

(क) 'मानमंजरी नाममाला' के संदिग्ध दोहे

'अ' प्रति से उद्धृत

नाम रूप गुन भेद के सो प्रगटिन सब ठौर ।
ता विन तत्व जु आन कछु कहै सो अति बड़ बौर ।।१।।

अंतर्ध्यान

गुप्त तिरोहित अंतरित गूढ़ दुरूह निलीय ।
लोकांजन में लुकि सखी देखी इह विधि तीय ।।२।।

अरुन

अरुन श्रोत आरक्त पुनि लोहित राते गात ।
तुव आगम आनंद तें जनु अनुराग चुचात ।।३।।

इंद्र

सहस्राक्ष वृद्धश्रवा आखंडल सुरपत्त ।
सुनासीर लेखर्षभरु सतमन्पुर दिविपत्त ।।४।।
सुत्राभा सूदन वृषा जूंभभेदि हरि होइ ।
बलाराति हरिबाहनो मेघवाहनो सोइ ।।५।।

उर

वत्स वक्ष उर पीय के निरषि आपनी झाँय ।
मान गह्यो निज जीय मे आन तिया के भाँय ।।६।।

कंचन

जातरूप कलधौत पुनि चामीकर तपनीय ।
रुक्म रुद्र रोदन कनक महा रजत रमनीय ।।७।।

काम

काम अनन्यज मकरधुज विस्व विमोहन नाँउ ।
पति सौं रति जिमि रूठि रहि इमि देखत बलि जाँउ ॥८॥

कुंद

माध्वी कुंदलता ललित पगनि परति चहुं भाँति ।
जाकी कलियन में कछू तुव दसनन की काँति ॥९॥

गनिका

दासी दार निलज्जिका खला पुंश्चली होइ ।
रूपाजीवा कामकी पुन्यजोषिता सोइ ॥१०॥
बारवधू जग वल्लभा कहत संभली जाहि ।
मुह संभार किन बोलिये ह्याँ कोउ गनिका नाहि ॥११॥

चंद्रमा

कुमुदबंधु श्रीबंधु विधु रोहिनिधव सुर पेय ।
उडगनपति द्विजराज हरि ग्लौ मृगांक आत्रेय ॥१२॥

जन्म

भव उद्भव उद्गम जनम जन उतपति है भाम ।
जन्म सफल जानै तबहिं भजिये सुंदर स्याम ॥१३॥

धन

द्रविन द्रव्य बसु बित्त वल राय अर्थ सुख-ओक ।
धन जेतो बृजनंद के तेतो नहिं तिहुं लोक ॥१४॥

धनुष

धनु कोदंड इष्वास पुनि कार्मुक रिपु संताप ।
चाप विना नहिं पनच कछु पनच विना नहिं चाप ॥१५॥

धाम

सदन सद्म आगार गृह गेह बेस्म संकेत ।
अयन धिस्न पुनि आसपद आलय निलय निकेत ॥१६॥

मंदिर मंडप आयतन वसति निकाय अस्थान।
भवन भूप वृषभान के गई सहचरी जान ॥१७॥

पतिव्रता

साध्वी सती मनस्विनी सुचरित्रा सुचि हीय।
पतिव्रता तुव नाम लै होत जगत में तीय ॥१८॥

पान

ताम्बूल अहिवेलिदल द्विज मुख मंडन पान।
नहिन खाति अनखाति अति भर जो रही मन मान ॥१९॥

मनोहर

मंजुल मंजु मनोज्ञ मधु मधुर चारु सुकुमार।
ललित उदार सुनंद को सब वृज को आधार ॥२०॥

महादेव

उग्र कपर्दी भूतपति पसुपति मृड ईसान।
नीलकंठ सितकंठ सिव मृत्युंजय कल्यान ॥२१॥

मेघ

धाराधर जलधर जलद जगजीवन जीमूत।
मुदिर वलाहक तडितपति कामुक धूम-सपूत ॥२२॥
नीरद छीरद अंबुबह बारिद जलमुक नाँउ।
घन बिछुरी बिजुरी मनौं इमि देखत बलि जाँउ ॥२३॥

रस

सारध मधु पुनि पुष्प-रस कुसुम-सार मकरंद।
रस के जानन हार जन सुनि पैहैं सुख कंद ॥२४॥

रोमावली

राजी अवली आललति रोम पाँति इहि भाइ।
मानहु उत तें झलमलत बेनी नीकी झाइ ॥२५॥

लघुभ्राता

अनुज अवर्ज सनाभि पुनि विश्ट कनिस्ट कनीय ।
लघु सोदर की का सकुचि सखा स्याम को तीय ॥२६॥

समूह

समुदय व्यूह समूह घन प्रकर निकर निकुरंव ।
पूर पुंग व्रज पटल चय मंचय निचय कदंब ॥२७॥
बिसरत ग्राह संदोह उघ जूथ व्रात गन जात ।
चक्र अनंत समाज वहु तोम जाम संघात ॥२८॥
कंदल जाल कलाप कुल कूट अनेक सुबृंद ।
वहुत कही मै बात पै भई तवे की बुंद ॥२९॥

सीघ्र

आसु तरस सहसा झटित तुरित तूर्न द्रुत होइ ।
छिप्र सु सत्वर तुच्छ लघु राज्ञा रंभा सोइ ॥३०॥
वाज वेग जब रभस रभ अवलंबित उत्ताल ।
चपल चली चातुर अली आतुर लखि नँदलाल ॥३१॥

सुंदर

सौम्य बामधर मुग्ध पुनि सुष्ट अपीच प्रसस्त ।
सुंदर नंदकिसोर पर बलि बलि बिस्व समस्त ॥३२॥

सूर्य

चित्रभानु बृहभानु रबि बिबस्वान दुतिवान ।
अंसुमान हरिभान हरि जगतचच्छु भगवान ॥३३॥

नीचे

निम्न नीच तरु कुम्भ अध अवच अजस की षांन ।
नीचे नैंन न डार बलि नैक कह्यौ तौ मांन ॥३४॥

(ख) 'रासपंचाध्यायी' के संदिग्ध छंद

'ग' प्रति से उद्धृत

(पंक्ति ७२ के बाद)

जिन सोरभ ते मत्त मुदित अलि धाये आवत।
सुक सारिका रतनमयी गोविंद गुन गावत ॥१॥

(पंक्ति ७८ के बाद)

श्री वृंदावन की छवि अमित वरनी वुधि अनुसार।
अब सुंदर नागर नवल बरनुं नंद कुंवार ॥२॥

(पंक्ति १७२ के बाद)

अहो तिय कहा जीय जांनि कांनि तजि कांनन डगरी।
अर्ध गरी सर्वरी कहु न उर डरी न सगरी ॥३॥
अनुचित धरमाचरन निगम नित निदत करी अति।
निज पीय तजि चित वृत आन पति रति जु करन मति ॥४॥

'घ' प्रति से उद्धृत

(पंक्ति ४६६ के बाद)

मिलि जु भई एक धुनि अद्‌भुत तिहिं सुनि मुनि माहैं।
सुर नर गन गंधर्व कछु न जानैं हम को हैं ॥५॥

(पंक्ति ४७२ के बाद)

ललना अद्‌भुत राग लैत लागत सोभा अस।
सुभर्ग अटा पर छटा छबीली थिरक रहत जस ॥६॥

(पंक्ति ४८६ के बाद)

कोउ तिन हू तै अधिक जु गावत सुर अति नाई।
सुघर सिरोमनि पिय के संग संग अति छबि पाई ॥७॥

(पंक्ति ५०४ के बाद)

अद्भुन रस रह्यौ रास देखि कछु कहत न आवै ।
ज्यौं मुक लै रस कौ चसकौ मन ही मन भावै ॥८॥

(पंक्ति ५३२ के बाद)

अन अधिकारी जिनै तिनै तहाँ सुनि मुरझाये ।
अद्भुत रास विलास रीसि नहिं देखन पाये ॥६॥

(पंक्ति ५४२ के बाद)

जहां काहू की गमनां तहां जमुना सुप दैंनी ।
जगमगात तट घाट महा मनि जटित नसैंनी ॥१०॥

(पंक्ति ५६४ के बाद)

तिन मैं कितक अग्यातयोंवना छबि पावत तब ।
रोमावलि सी बाले जांनि पौंछैं डारतिं जब ॥११॥
तहँ अद्भुत कल केलि बर्नी छबि गनी न परई ।
तिहिं चित धरि चिंतत रचि पचि तिनि कलिमल हरई ॥१२॥

(पंक्ति ५८६ के बाद)

परै न समझि महेस सेस पै गुरु गनेश पै ।
चकित सरस्वति भई जु रति मति कहां सुरेस पै ॥१३॥

'ङ' प्रति से उद्धृत

(पंक्ति ४६ के बाद)

बन है आंन अनेक अमित फल फूलन माहीं ।
जुगल चंद सुख कंद रवन ब्रज इह सुख नाहीं ॥१४॥

(पंक्ति १०८ के बाद)

बिदति रजनि सुनि अहो तपति अति प्रभा अपारा ।
तव ग्रीषम पीड़ित हिम सब हरति विकारा ॥१५॥

उत के उत जे नारि धारि हमरी जिय आसा ।
हम सव कियो प्रका (स ?) रास हरि संग बिलासा ॥१६॥
निरखि रजनि कमनींय जु निरबचनीय निकाई ।
रीझि सामरे रसिक रास खेलन मनु आई ॥१७॥

(पंक्ति १६४ के बाद)

जिनकी बुधि श्री कृष्न विषैं सो शुक मुनि बरनी ।
अवधि प्रेम आवेस मोहनी कौ बस करनी ॥१८॥

(पंक्ति १६८ के वाद)

मानहुं मनसिज कोटि पुरट रस भरचौ सुहायो ।
बदन कांगरे चंद लाल्ल गोपिन बिच आयो ॥१९॥
मोंहन मूरति एक भरी सी प्रेम लगाई ।
जानि पूछ कै धर्म कथा सामरे चलाई ॥२०॥

(पंक्ति १७४ के बाद)

कुशल छेम ब्रज रवन गवन संभ्रम सी पाई ।
कारन कौन जु भौंन तजि केंसै तुम आई ॥२१॥

(पंक्ति १७६ के बाद)

पुनि बोलें तिहि ओर चाहि गोबिंद रसाला ।
हो सजनी रजनी मऽहा नहि निकसन काला ॥२२॥
अब ग्रह जावौ मन भायौ पैहै दुख सब प्यारे ।
मात तात सुत बंध कंत ढूढतु जु तुम्हारे ॥२३॥
परी होइहै चटपटी अटपटी सब के मन मै ।
कहां गई अब ह्वी सब हुती सदन मै ॥२४॥
बचन व्यंग सुनि श्री गुनि पुनि मन मै छुभित भई सब ।
प्रणय को के (?) पि रस वोप पगी चितवनि जु लगीं तब ॥२५॥

पुनि बोले श्री नंदलाल तिनि सनमुख सौंहन।
जौआई मन भाई भलै वंशी धुनि गौंहन ।।२६।।
दिखि वन सोभा लोभा कुशमित छवि छाई।
छिटक रही चांदनी भली फूलनि कर भाई ।।२७।।
अरु इह इत बहै जमुना सब सुखदाई।
पुलिन मनोहर त्रिविधि बात बहै ताप नसाई ।।२८।।
देखी वन सोभा सबै अब निज निज ग्रह जायौ।
अहो सती निज पतिन की सेवा मै चित लावौ ।।२९।।
बधिर गुंग कपटी लंपट आदिक जौ पति होई।
तौउ तिय नहि तजै भजै बड्भागिन सोई ।।३०।।
अरु जौ वन देखन नहि आई मो परसन हित आई।
तौ तुम नीकी अति करी अनुचित नहि काई ।।३१।।

(पंक्ति २०८ के बाद)

इही हेत हम देत सदां कमलज है गारी।
पलकांत्तर विच पस्त मरत हम कुंज बिहारी ।।३२।।

(पंक्ति २१६ के बाद)

अब तुम मधुर अधर अमृत कह धौं कबहि प्याऊगे।
बहुत पुण्य ह्वै मित्र परत जौ हमहि ज्याऊगे ।।३३।।
पुनि कानन भयभीत कोटि जुग बीतत है छिन।
अहो निसा इहि भांति हमै जानै को तुम बिन ।।३४।।
पारधी हू तै कठिन महा जसुधा नंदन पिय।
बेंन बजाय बुलाय म्रगी सी मोहि लैइ तिय ।।३५।।
मातु पिता पति बंधु सिंधु तरि तुम ढिग आई।
जानि बूझ अधरात गहर वन मै बगराई ।।३६।।

(पंक्ति २३८ के बाद)

इनहि कुंद केवरा केतकी गंध बंध हित।
राय वेलि इत अरल वेलि मृग मदका वेलि हित ॥३७॥

(पंक्ति ३०६ के बाद)

कोऊ श्रीदामा ह्वै वाम चढ़ति कान्हर के कांधै।
कोऊ जसुमति ह्वै ललित लाल ऊखल सौं बांधै ॥३८॥

(पंक्ति ३१२ के बाद)

जमलार्जुन भंजन फनी फन गंजन सब कौं।
कोऊ कहै मूंदौ लौचन हौं मोचौ दावानल कौं ॥३९॥
जदपि परम सुखधाम स्यांम सुंदर लीला रस।
तदपि तिनहि अवलोकनि विन अकुलाय अस ॥४०॥
ज्यौं चंदन औ चंद तप्त कौ सीतल करहीं।
बिरही जन जे लोग तिनहि लगि अग्नि वितरहीं ॥४१॥

(पंक्ति ३२२ के बाद)

पुनि जगमग खोज मनोज के चोज बढ़ावनि।
कहन लगीं रस पगी जगी छबि अति मन भामिनि ॥४२॥
एक भयो रज गरत परत नहीं अकथ कहांनी।
तव इक सखी लखी जिय की सो बोली मृदु बानी ॥४३॥
निरखि सुवन बर ऊंच मूंच पिय मन मै ठांनी ॥
तिय पिय कंध चढ़ाय सु छवि नहीं परत वखानी ॥४४॥
भयो भार तें बाम कंध लयो रस मल्हकंती।
तातै नीचौ परचौ अवनि उतरी ढलकंती ॥४५॥

यह विधि अति आनंद पाय मन ही मन फूली ।
तहां सखी सौ अनुराग भाग बड़ कहि अनुकूली ।।४६।।

(पंक्ति ३५४ के बाद)

केहें गोरी भोरी पिय मुख चंद चकोरी ।
पिय बहु भांति निहोरी रस रास मै झकझोरी ।।४७।।
लज्जित रही नहीं कही सब सखियनि बातै ।
पिय कौ प्रेम उरझि रह्यौ मुरझ्यौ नही तातै ।।४८।।

(पंक्ति ३७२ के बाद)

तुम सौ कोऊ न भयौ न कौऊ आगै ह्वैहै ।
अब ह्वै ग्रैसौ न कौऊ सुलभ हम सी नहि पैहै ।।४९।।

(पंक्ति ३९० के बाद)

गति बिलास मृदु हास प्रेम बांछित तुमरौ पिय ।
मारत मन्नि मसूसैं रूसै निकसत है जिय ।।५०।।
अज हूँ कछु नहि बिगरयौ बंचक रंचक आवहु ।
जो मुरली कौ झूंठौ अधरामृत हमहि पियावहु ।।५१।।

(पंक्ति ४१४ के बाद)

कृष्न भौंह के भंग, काल आदिक थरहरहीं ।
गोपिंनि रिस भरि भौह तै, मोहन आपुन डरहीं ।।५२।।

(पंक्ति ४४२ के बाद)

कौटिक रसना हौहि तुम्हारे रस जस ही गावै ।
हे वड़भागिन अनुरागनि तऊ कोऊ पार नि पावै ।।५३।।

(पंक्ति ४९६ के बाद)

बरसति मंजुल अंजुल सुर तिय ऊ ल सी नी ।
निंदति अमृति पांन ध्यांन दंपति उर आंनी ।।५४।।

दुंदभि मग्न बजामै गांमै तांननि न्यांमै ।
गोपन की गति जति अनि रति करत ऊ अमावै ॥५५॥
जगमग जगमग करत रगवगी मंडल मोभा ।
कोऊ थकित रस छकित लाल मुप निरपन लोभा ॥५६॥
सनमुप निरपत लाल लाडली प्रेम बढ़ामै ।
कवि छवि उपमा दैंन उरझि मुरझनि नहि पामै ॥५७॥

(पंक्ति ५१२ के बाद)

सुघर राग रागनी मंडल ढिग गुन गन गावत ।
अपने अपने गुन गनहिं सब प्रघट दिखावत ॥५८॥

(छंद १२ के बाद[1])

कोई आपन तै थमी लसी पिय अति रति मानी ।
कोऊ पट गहि कटि गहि छवि सूं पानी मै आनी ॥५९॥

(पंक्ति ५७६ के बाद)

इह लीला गोपाल लाल की परम वास विधि ।
शिव सुक सारद नारद तिन कौन महा निधि ॥६०॥

(पंक्ति ५९४ के बाद)

यह वृंदावन रंग महल गिरधर प्यारी कौ ।
पंचाध्याई रास रजनि अति उजियारी कौ ॥६१॥
जिन के हिय बसै दंपति संपति जंपति सोई ।
सब संसार असार छार करि डारै सोई ॥६२॥

---

[1] दे. पृष्ठ ३५०

'छ' प्रति से उद्धृत

(पंक्ति २८ के बाद)

राजत अंग विभूति अनेक विबेक प्रकासक ।
नख सिख रूप अनूप सकल जनु अघ के नासक ।।६३।।

(पंक्ति १८० के बाद)

कुल तिय को यह धरम, स्रुतिन मिलि आगम गावैं ।
आरति सों निज पतिहि सेय, पति लोकहि पावैं ।।६४।।

(पंक्ति २०० के बाद)

विस्व विमोहँन रूप सुघर, यह पिया तिहाराँ ।
धरमन हू को धरम, मिलन ब्रजराज दुलाराँ ।।६५।।

(पंक्ति २४० के बाद)

जुही चमेली चारु कुंद नव पल्लव वेली
सुक पिक मोर चकोर कोकिला करि रही केली ।।६६।।

(पंक्ति २८८ के बाद)

अहो चम्पक अहो कुसुम तिहारी छबि है न्यारी ।
नेक वतावहु जहाँ हिय हरि कुंजबिहारी ।।६७।।

(पंक्ति २९० के बाद)

अहो बंस ! बर बंस, कहूं देखे हें हरि ! तुम ।
गोप बंस, अवतंस, बिना सब दीन हीन हम ।।६८।।

(पंक्ति २९४ के बाद)

हे जमुना सब जानि पूंछि तुम हठहि गहति-हौ ।
जो जल जग उद्धार, ताहि तुम प्रगट करत हौ ।।६९।।

(छंद ३६ के बाद[1])

छिन बैठत छिन उठत लोटते तिहि रज माहीं।
थोरे जल ज्यौं मीन दीन आतुर अकुलाहीं ॥७०॥

सन्तत भय ते अभय करन कर-कमल तिहारे।
कह घट जैहैं नाथ तनक सिर छुवत हमारे ॥७१॥

स्रवन मात्र मंगलदायक अस और न होई।
मोहन मुख निरखे बिन और सहाय न कोई ॥७२॥

(पंक्ति ४८६ के बाद)

एक एक ही देह मधुर मूरति रंग भीने।
कोटि जूथ ब्रज जुवति मनोरथ पूरन कीने ॥७३॥

(पंक्ति ५४० के बाद)

सब विटपन सँग लता लिपटि फूलीं झूलीं जल।
कूँजन सारस हंस बास विगलित अंबुज दल ॥७४॥

(पंक्ति ५९० के बाद)

नैन हीन जो नायक ताको नव नागरि जस।
मंद हसन सु कटाक्ष लसनि कहा वह जाने रस ॥७५॥

'ज' प्रति से उद्धृत

(पंक्ति ४० के बाद)

श्री सुक रूप अनूप हो, क्यों बरनै कबि नन्द।
अब वृन्दावन बरनिहौं जहँ वृंदाबन चन्द ॥७६॥

---

[1] दे. पृष्ठ ३५२

(पंक्ति १८४ के बाद)

मो हँसि हँसि ऐसे कह्यो, सुन्दर सब को राउ।
हमरो परस तुमै भयौ, अपने घर को जाउ ॥७७॥

(पंक्ति २०४ के बाद)

अरु तुमरे कर कमल महा दूती यह मुरली।
राखे सब के धर्म प्रेम अधरन रस जुरली ॥७८॥

(पंक्ति २७० के बाद)

कुञ्ज कुञ्ज ढूढ़त फिरीं, खोजत दीनदयाल।
प्राणनाथ पाये नहीं बिकल भयी ब्रज बाल ॥७९॥

(पंक्ति ३३६ के बाद)

पिया संग एकांत रस, विलसत राधा नारि।
कंध चढ़न हरि सों कह्यो, या ते तजी मुरारि[१] ॥८०॥

(पंक्ति ४३६ के बाद)

जे भजते को भजै आपने स्वार्थ के हित।
जैसे पसू परस्पर चाटत सुख मानत चित ॥८१॥
जे अनभजते भजें वहै धर्म्मी सुख कारी।
जैसे मात पिता जु करे सुत की रखवारी ॥८२॥
जे दोउन को तजै तिन्हैं ज्ञानी जानों तिय।
आत्म काम अथवा गुरुद्रोही अकृतज्ञ हिय ॥८३॥

---

[१] **पंक्ति ३३६ के बाद 'सिद्धांतपंचाध्यायी' का रोला ८६ देकर 'ज' ने इस दोहे को दिया है।**

(ग) पदावली

'क' प्रति से प्राप्त पद

वर्षोत्सव

(१)

भादों की अष्टमी आधी रात्र में कान्ह भयो सब के मन भायो ।
जोरि बटोरि धरचो धन सौंरी में सोरी जसोदा जु लुटायो ।।
मोद सों गोद लिये हुलरावत प्रान पियारे कों प्रान सो पायो ।
रोहनी में भयो मोहनी मूरति नंददास लखि हियो सिरायो ।।१।।

(२)

पुत्र भयो हे आज श्री व्रजराज के ।
प्रथम यथामति बरन ही हो पुष्टि मारग रस रूप ।
भूतल प्रगट भये आय के हो श्री गोकुल के भूप ।।
श्री व्रजराज को दूर गये दुख भाज ।। श्री व्रजराज के ।।
व्रजवासी सब सुनतही हो आवत चहुँ दिश धाय ।
ले कावर दधि दूध की हो तन की सुधि बिसराय ।। श्री ।।
जिन छांड दिये घर काज ।। श्री ।।
हरद दूध दधि अक्षत कुमकुम देत परस्पर सींच ।
भीर भई नंद द्वार में हो, आंगन माची कीच ।। श्री ।।
तिन तजी लोक की लाज ।। श्री ।।
नंद भूप कर नचावही हो देह दशा गये भूल ।
मंगल स्नान करावही मन पुत्र जन्म की फूल ।।

गर्ग परासर बोल के हो जान कर्म कर नंद ।
श्रुति पुरान गुन गावही हो प्रगटे आनंद कंद ॥
करत वेद धुनि गाज ॥ श्री ॥
चंदन भवन लिपावही हो धरत साथिये चीति ।
मोतिन चोक पुरावही हो करी वेद विधि रीत ॥
कलश लिये सब साज ॥ श्री ॥
दुंदुभी देव बजावही हो चहुँ दिश घुरे निशान ।
बोहो विध बाजे बाजही हो करत सप्त सुर गान ॥
गावत सहज समाज़ ॥ श्री ॥
देत असीस सबे ब्रजनारी जसुमति कुख सिराय ।
मंगल साज सिंगार सुभग तन मेर धरत ले आय ॥
चरन नूपुर धुनि राज ॥ श्री ॥
जाचक जन मनिमाल पेहेराइ बिप्रन दीनी गाय ।
सोना मोती हीरा पन्ना दीये भंडार लुटाय ॥
देत दान ब्रजराज ॥ श्री ॥
श्री वृपभान आदि गोपन को बोहोत करचौ सनमान ।
प्रकट्यो नंददास को ठाकुर देत अभय पद दान ॥ श्री ॥२॥

(३)

प्रगट्यो आनंद कंद गोकुल गोपाल भयो
आइ निधि नंद के गृह अखिल भवन की ॥
सजल जलद स्याम बरन सोभित अति
चरन कमल उपमां को नांहिन कोउ देंउं कवन की ॥
छिरकत दधि हरद बाल फूले फिरत ग्वाल
सबें लूं चली सब दूध दह्यो भवन भवन की ॥

नंददास बंदी जम द्वार रह्यो ठाडो गावे महिमा
कछु उग्र रचिनर माखन की ॥३॥

(८)

ए री सखी प्रकटे कृष्ण मुरारि,
व्रज घर घर आनंद भयो दधिकादो आंगन नंद के ।
ए री सखी वाजत ताल मृदंग और बाजे सब साजि कें
भवन भीर व्रजनारि पून भयो व्रजराज कें ॥
घोप घोप ते वाम बसनन सजि सजि कें गई ।
रोहिनी महा बड़ भागि आदर दे भीतर लई ॥
बिछुवन के झनकार गलिन गलिन प्रति ह्वै रहे ।
हाथने कंचन थार उर पर श्रमकन च्वे रहे ॥
ग्वाल गोपिका जात रावरो सगरो भरि रह्यौ ।
फूले अंग न मात सबन को भागि उघरि रह्यो ॥
जहां व्रजरानी आप सेन कीयो ढोटा भयें ।
तहां कुतूहल होत मिलि जुवती जूथन गयें ॥
निरखि कमल मुख चारु आनंद मय मूरति भई ।
लये अंचल पट छोर मन भाई असीसें दई ॥
राय चोक में घेरि छिरकत दधि हरदी मेलि ।
पकरि पकरि कें ग्वाल बोल लेत भुज भुजन पेलि ॥
कावरि मथना माट अगनित गिने नहीं जात हें ।
धरे भरे सब ठोर कहां लों सदन समात हें ॥
होत परस्पर मार माखन के गेंदुक करे ।
एक एक कूं ताकि वदन अंग लेपत खरे ॥
ऊपर ते दधि दूध शीश सीसन गागरि ढरें ।
घोटुन लों भई कीच रपटि रपटि सगरे परें ॥

ब्रज गोपिन के चीर भीज लगे अंग अंग सों।
गावत हैं जुरि झुंड अपने अपने रंग सों॥
हो हो बोलें ग्वाल हेरी दे दे गावहीं।
जोरि जोरि सब बांह बाबा नंद नचावहीं॥
नंदराय बड भाग नाचत में देखत बने।
फिरत मंडलाकार अंग अंग सुख में सने॥
चिबुक केश सब स्वेत उर पर सगरे छे रहे।
रंग कुमकुमा रंग दधि दूधन उरझे रहे॥
भाल विशाल रसाल फेंटा शीस सुहावनों।
थोंदि थलक ओर चाल नाचे मृदंग मिलावनों॥
गहि गहि कें भुज मूल रहे गोप सुख मानि कें।
रपटि परे जिन नंद सावधान यह जानि कें॥
आंगन उदधि आनंद पंक चढ्यो कटि लों भयो।
दई पनारी खुलाइ सरिता ज्यों वीथनि गयो॥
भानु सुता में जाइ मिल्यो रंग आनंद में।
कलिंद नंदिनी आप सुख लूटत यह फंद में॥
यह ओसर सब साधि घोष नृपति जू न्हाइयो।
जो बरसोंदी खात ते सब विप्र बुलाइयो॥
पूजा पितर कराय दान करत बहु भाय सों।
घर के मागध सूत झगरत हैं ब्रजराय सों॥
मेटत सगरी रारि मन धन देत अघाइ कें।
करत बहुत सनमान भूषन पट पहराय कें॥
विधि सों गाइ सिंगारि दई द्विजन के ठाठ सों।
जो मांगो सो देहुं कहत नंद विप्र भाट सों॥

अभरन अंवर छाय सहस्त्र पांच दग आइयो।
हसि हसि रोहिनी आप व्रज तरुनी पहराइयो ॥
घर घर घुरत निसान कही न जात कछूये जिय की।
मंगलमय व्रजदेश फिरत दुहाई गाज की ॥
व्रज दशा को रूप कहा कहूं सखी या समें।
निरखि निरखि नंददास नृत्य करत हें ता समें ॥४॥

(५)

वधाई री बाजत आज सुहाई श्री गोकुलराज के धाम।
रानी जसुमति ढोटा जायो हे मोहन सुंदर स्यांम ॥
सुनि सब गोप घोष के वासी चले वर वसन वनाय।
तापुर की मंगल व्रज वीथनि भीर न निकस्यो जाय ॥
आई सब गोप वधू मिलि साथन हाथन कंचन थार।
कमल वदन सब वनी कमला सी झलकत कुंडल हार ॥
नाचत ग्वाल करत कुतूहल दधि घृत खोरें गात।
देत मगाय वसन पट भूषण फूले अंग न समात ॥
जो जाके मन हुती कामना सो पूजाई नंदराय।
नंददास कों दई कृपा करि अपने ललन की वलाय ॥५

(६)

श्री व्रजराज के आंगन बाजत रंग वधाइ,
श्रवन सुनत सब गोपिका आतुर देखन आई ॥
बद भांदों आठें दिना अर्धनीशा बुधवारी,
कौलव कर्ण रोहीणी जन्मे हें नंद कुमार ॥
गोप ओप सों राजत आये हे तीहीं काल,
नाचत करत कोलाहल वारत मुक्ता माल ॥

वाजन दुंदभी भेरी पटह नीशान सोहाय,
दधी हरदी मील छिरकत आनंद मंगल गाय ।।
ध्वजा पताका तोरन द्वारे द्वारे बंधाय,
कनक कलश शुभ मंगल भुवन भुवन धराय ।।
जाचक जुरी मिल आवत शब्द उच्चार,
पुष्प वृष्टि सुरपति करे बोले जयजयकार ।।
देत अशीश सबें मिलि मन में मोद अपार,
जसोमती सुत पर तन मन नंददास वलहार ।।६।।

(७)

नंद को लाल व्रज पालने झूले ।
कुटिल अलकावली तिलक गोरोचना चरण अंगुष्ठ मुख किलकि फूले ।
नेन अंजन रेख भेख अभिराम सुठि कंठ केहरि किंकिनी कटि मूले ।
नंददासनि नाथ नंद नंदन कुवरि निरखि नागरि देह गेह भूले ।।७।।

सुंदर श्याम पालने झूले ।
जसुमति माय निकट अति बेठी निरखि निरखि मन फूले ।
झुझुना लेके बजावत रुचि सों लाल ही के अनुकूले ।।
बदन चारु पर छूटी अलक रही देखी मिटत उर सूले ।
अंबुज पर मानहु अलि छौनां घिरि आये बहु टूले ।।
दसन दोउ उघरत जब हरि के कहा कहुं सम तूले ।
नंददास घन में ज्यों दामिनी चमकी डुरत कछु खूले ।।८।।

(९)

रंग भिनि ढाढनि अति रुचि सों चारु मंगलरा गावे हो ।
लाल जन्म सुनी नाचत आइ झांझ मृदंग बजावे हो ।।

उघटन मुख संगीत ललित गति ऐसी करी दीखरावे हो ।
चिरंजीवो जसोदा तेरो सुत यों कही मोद बढ़ावे हो ॥
सुनि सुनि रीझि रीझि व्रजपति अति आनंद उर न समावे हो ।
अपने लाल पर करि न्योछावर ढाढनि को पहेरावे हो ॥
देत असिस चली मंदिर व्रजरानी नेग चुकावे हो ।
वारंवार विलोकी ललन मुख नंददास मन भावे हो ॥९॥

(१०)

कृष्ण जन्म सुनि अपने पति सों ढाढिनि यों बोली जु ।
जाउ जाउ तुम नंद नृपति के द्वान कोठरी खोली जु ॥
तुमकों मिलेगो वागो बीड़ा और दक्षणा भरि झोरी ।
हमकौ लैयो नख शिख गहनो जेहरि सहित एक जोरी ॥
लैयो कंत जुगति सों लैयो हम चढिबे कों डोली ।
छोटी सी भेंस सुवन सींगन की टहल करन कों गोली ॥
साज सहित एक घुडिला लैयो गैया दुध अतोली ।
सुंदर सो एक हस्ती लैयो हस्तिन संग असोली ॥
सिज्या सहित एक ढुलिया लैयो और पानन की ढोरी ।
बीरी करि करि मोहि खवावै लैयो संग तमोली ॥
जन्म जन्म काही नहीं जाच्यो फिरि नहीं मांडो झोली ।
नंददास नंदराय कों ढाढी भयो अजाचिक ढोली ॥१0॥

(११)

माधो जु तनक सो वदन सदन शोभा को तनक भृकुटी पर तनक दिठोना ।
तनक लटुरी सोहें मुनिन के मन मोहे मानों कमल ढिग बेठे अलि छोना ॥
तनक सी रज लागी निरखत बड भागी कंठ कठुला सोहे नख बघना ।
नंददास प्रभु यशोदा के आंगन खेले जाको जस गाय गाय मुनि भये मगना ॥११॥

(१२)

निरंजन अंजन दिये सोहे नंद के आंगन माई ।
सबके नेन प्रान प्रकासिक ताके हित रच्यो चखोडा छाज छबि न कही जाई ।।
निगम अगम जाकों बोलें सो अलबल कल कछू कहत बनाई ।
नंददास जाकी माया जगत भूल्यो सो भूल्यो अपनी परछाई ।।१२।

(१३)

मो भोरी को मन भोरयो हे मन भावन बिन ही गुन मन दोरयो हे ।
जुरि जुरि आय व्रज की अथाइ चितवत ही चीत चोरयो हैं ।।
आये चतुर मोही भोरावन ओरन देख अकोरयो हे ।
नंददास प्रभु की चतुराई इत जोरयो इत तोरयो हे ।।१३।।

(१४)

छोटो सो कन्हैया एक मुरली मधुर छोटी ।
छोटे छोटे ग्वाल बाल छोटी पाग सिर की ।।
छोटे से कुंडल कान मुनिन के छूटे ध्यान
छूटे पट छूटी लट छूटी अलकन की ।।
छोटी सी लकुट हाथ छोटे वच्छ लियें साथ
छोटे से बने री कान्ह गोपी देखन आई घर घर की ।।
नंददास प्रभु छोटे भेद भाव मोटे मोटे
खायो हे माखन शोभा देखो ये बदन की ।।१४।।

(१५)

छगन मगन बारे कन्हैया नेंकु उरे धों आउ रे लाला ।
वन में खेलन जात लाल व्हे रहे सब मलीन गात
अपने लाल की लेहुं बलाय रे लाला ।।

संग के लरिका सब बनि ठनि आये यों कहेंगे केसी है तेरी माय रे लाला ॥
यशोदा गहत धाय बैयां मोहन करत न्हैयां न्हैयां
नंददास वलि जाय रैं लाला ॥१५॥

(१६)

एसो को है जो छुवे मेरी मटुकी अछूती दहेंडी जमी ।
विन मागे दियो न जाय मागे दें गारी खाइ केतेई करो उपाय
डराये डरत नहिं मेरे तें गोरस की कहां धों कमी ॥
ओर को दह्यो छिलछिलो लागत में ओट जमायो भर के तमी ।
नंददास प्रभु वडेई खवैया मेरे तो गोरस में बहुत अमी ॥ ॥१६॥

(१७)

लाल तुम परे हमारे ख्याल, स्याम लाल दान ही दान भइ नकवानी ।
जव हम यहि व्योपार छांडी देहे दूध दहीं को तव ह्वे हे काहे के दानी ॥
तिहारी चितवनी सुनी हो लाडीले नीके हम पहीचानी ।
नंददास प्रभु एसे तुम व्योसेंयो जेसी हम व्योसानी ॥१७॥

(१८)

कहो जू दान लेहो केसें हम तो देव गोवर्द्धन पूजन आई ।
कोउ दह्यो कोऊ मह्यो मांखन जोरि जोरि आछो अछूतो लांई ॥
तुम्हें पहलें केसें दीजे कान्हर जू तुम तो सबे फवी करत मन भाई ।
नंददास प्रभु तुमही परमेश्वर भये अब कछू नई ये चाल चलाई ॥१८॥

(१९)

काहे न आय आप देखो रानी जु अपने सुत के कर्म ।
भवन में भाजन एक न रह्यो कहे ते हसि परी को को जाने वाको मर्म ॥

दिन दिन कछु कानि न राखत काहु की हानि कहो जु बसिबे को कोन धर्म ।
नंददास प्रभु मैया के आगे साथ होय बेठे चोर को कहे न मर्म ॥१९॥

(२०)

गिरिधर रोकत पनघट घाट ।
जमुना जल जो भरि नीकसे डारि कांकरी फोरत माट ॥
नख सिख ते सब अंग भीजत तब कहेत वचन के साट ।
नंददास प्रभु भले पठे हो यह विधि को आवे या वाट ॥२०॥

(२१)

एसे केसे कहीयतु व्रज वधुवन सोइ ते आये धों पिछोडी ।
बरबट रोकत मो को करिहो कहा रिसाय कोहे बाबा की लोंडी ।
दिन दिन को प्रेडोंरी माइ नहीं जानत कछु बोतरी ओडी ।
नंददास प्रभु वे त्रिय ओर जोन चाय सब तुम कीनी कनोडी ॥२१॥

(२२)

दान देउ ठहेरो इक ठैयां ।
श्रमजल विंदु परत मुख पर तें बेठो आय कदम की छैयां ॥
कुचकलशन कों ढांक धरे क्यों चाखन देउ पलोटों पैयां ।
यह रस तुम को नाहीं मिलेगो छांडो लाल हमारी बैयां ॥
बहुत अवार भई घर जैहों मो को आज लडेगी मैयां ।
मंडो ओक प्याऊं दधि मीठो बेग करो आवत बल भैया ॥
प्यारी दधि प्यावत करि हित सों श्याम सुंदर पीवत न अघैयां ।
सुनो स्वाद कछु कहत न आवत नंददास आनंद न समैया ॥२२॥

(२३)

कपि चल्यो सीय सुधि कों पुनि पायन तन लटकि कें।
रिपु को कटक विकट ताको चोथौ अंस पटकि कें ।।
रथ सों रथ भटन सों भट चटपटी सी चटक कें।
जारि कें गढ लंक विकट रावण मुकुट झटक कें ।।
कितेक छेल तंदुल से छुरे ले ले मूशल मटक कें।
गिरि सों गज गेंद सी गहि डार्यो भूमि भटक कें ।।
सुरपुर आनंद उमग उर सों आंट अटक कें।
नंददास वहुर्यो नट ज्यों उलट काछो समुद्र सटक कें ।।२३।

(२४)

यह विधि पार पोहोंच्यो पवन पूत दूत श्री रघुनाथ को।
छूट्यो जनो धनुष तें सर परम सुभट हाथ को ।।
थर थर जहां करत मीच एसी राजधानी।
पेठन तिहि लंक वंक कपि न शंका मानी ।।
पुर मंदिर गिरि कंदर सुंदर मणिराई।
रावण रणवास ढूंढ्यो कहुं न सीय पाइ ।।
तव कह्यो यह जेतिक नगरी सगरी उचक लीजे।
उहांई ले जाय रामहि जानकी ढूंढ दीजे ।।
केधों दशकंध अंध इहांई ले मारों।
केधों रघुवीर आगें बांध रिपुहि डारों ।।
यह बिधि वल अपनो कपि सोचत जिय मांह।
नंददास प्रभु की मोहि एसी आज्ञा नांही ।।२४।।

(२५)

राजत रंग भिनी भामिनी सांवरे प्रीतम संग ।
निर्तत चंचल गति कही न परत द्रुति,
लहलहान सीखी नव घन जहां दामिनी ॥
जुवति मंडल में मध्य रूप गुन की अवधि,
नाते पावे संगीत की स्वामिनी ।
राग रंगनी की रानी ततथेइ की कल बानी,
कछुक सीखी कोकिला की कामिनी ।
नंददास रीझे तहां अपने पोवार्यो
जहां रवन रमा अभिरामनी ॥२५॥

(२६)

चटकीलो पट लपटानो कटि, बंसीवट जमुना के तट ठाडो नागर नट ।
मुकुट लटक ओर कुंडल चटक भ्रकुटी विकट तामें अटक्यो री मेरो मन ॥
चरण लपेटे आछे कनक लकुट चटकीली बनमाल ॥
कर टेके द्रुम डाल टेडे ठाडे नंदलाल छब छांई घटपट ॥
नंददास प्रभु प्यारी बिन देखे गोपी ग्वाल टारी न टरत यातें
निपट निकट आवे सोंधे की लपट ॥२६॥

(२७)

आय क्यों न देखो लाल अपनी प्यारी की छबि
चांदनी में पोडे यातें चंदहु रह्यो लजाय ।
मंडप पहोप माल नीलांबर अंबर
नासिका को देख उडुगन सकुचाय ॥

आये हे निकट लाल रीझ रहे ललचाय
वार वार देख देख मुसकी लेन बलाय।
नंददास प्रभु पिय अधरन वीरी लाय,
रसिक बिहारिन प्यारी चोंक परी मुसकाय ॥२७॥

(२८)

केलि करे प्यारी पिय पोढे लख चांदन में
नेह सो लग गये जोवन के जोस के।
अंगिया दरक गइ मानो प्रात देखवे को
चाँच काढि चकवाक काम तर रोस मे॥
आरस सों मोरी बाँह दोउ कुच गहे
पिय रति के खीलोना मानों ढांपि दीये ओस मे।
रूप के सरोवर में नंददास देख अली
चकइ के छोनां वेठे कंचन के कोस मे॥२८॥

(२९)

रेन रीझी हो प्यारे हरि को रास देख
याही तें अधिक वढ गई गेंन।
चल न सकत हरि रूप विमोही रही
एकटक आछे नक्षत्र नयेन॥
छबि सों छूटत मानो बिच बिच तारे हीरा के
आभूपण पर वार डारों जग एन।
चंदा हू थकित भयो देख के लालच
रह्यो ह्वै देख कें परम चेन॥

जो लों इच्छा भई तोलों नांचे हें गोपी गोपाल,
अद्भुत गति मोपें कही न परत बेन।
नंददास प्रभु को विलास रास देखवे कुं
मन्मथ हू को मन मथ्योरी मेन ॥२९

(३०)

खेलत रास रसिक रस नागर।
मंडित नव नागरी निकर वर रूप को आगर ॥
विकसत वन वनिता राजत जानों शरद अमल।
राका सुभग सरोवर मानों फूले हें कमल ॥
नवल किशोर सुंदर सांवल अंग कंचन तन व्रज बाला।
मानों कंचन मणि मरकत मणि वृंदावन पहेरी माला ॥
या छवि की उपमा कहिवे कों एसो कवि कोन पढयो हे।
नंददास प्रभु को कौतुक लख काम को काम वढयो हे ॥३०॥

(३१)

बड़े खिरक में धूमरि खेलत।
मोहन लाल खिलावत रंग भर गगन गरज घंटा ध्वनि पेलत ॥
उसर जात व्रजराज लाडिले धेनु डाढ जब मेलत।
नंददास प्रभु मुदित नंदरानी ही ही रस सागर में झेलत ॥३१॥

(३२)

कान्ह कुंवर के कर पल्लव पर मानों गोवर्द्धन नृत्य करें।
ज्यों ज्यों तान उठत मुरली की त्यों त्यों लालन अधर धरें ॥
मेघ मृदंगी मृदंग बजावत दामिनि दमक मानों दीप जरें।
ग्वाल ताल दे नीके गावत गायन के संग सुर जो भरें ॥

देत असीस सकल गोपीजन बरखा कों जल अमित झरें।
अति अद्भुत अवसर गिरिधर कों नंददास के दुःख हरें ॥३२॥

(३३)

गाजे गिरिराज आज गाय गोप जाके तर
नेक सी बानिक बने धरे भेख नटवर।
लियो है उठाय ब्रजराज के कुंवर कर
अरग थरग रह्यो मुरली की फूंक पर॥
बरसे प्रलय के पानी न जाने काहू पें बखानी
बज्र हू ते अति भारी टूटत है तर तर।
नागर के खग मृग चातक चकोर मोर
बूंद न काहू कें लागि भयो है कौतुक भर॥
प्रभु जु की प्रभुताई इंद्रहू की जड़ताई
मुनि हँसे हेर हेर हरि हँसे हर हर।
नंददास प्रभु गिरिधारी जू की हांसी खेल
इंद्र को गर्व गयो भये हैं दूर घर॥३३॥

(३४)

कैसे कैसे गाय चराइ गिरिधर।
गोरज मुखतें झार जसोदा लेत बलैयां फेर कर॥
कहां रहे तुम घाम छांह सध्य घन बरख्यो बल समेत सुंदर बर॥
नंददास प्रभु कहत जननी सों हम न डरे देखी बादर॥३४॥

(३५)

सजनी आनंद उर न समाऊं।
बरसाने वृषभानु लगन लिखी पठई है नंद गांऊं॥

धौरी धूमरी धेनू विविध रंग शोभित ठाऊं ठाऊं ।
भूषण मणि गण पार नाहिनें सो धन देख लुभाऊं ।।
नंददास लाल गिरधर की दुलहनि पर वल जाऊं ।।३५।।

(३६)

अरी चल दूलहे देखन जाय ।
सुंदर श्याम माधुरी मूरति अँखियां निरख सिराय ।।
जुरि आंई व्रजनारि नवेली मोहन दिसि मुसिक्याय ।
मोर बन्यो सिर कानन कुंडल मरुवटि मुखहिं सुहाय ।।
पहेरे जरकसी पट आभूषण, अंग अंग मन अरुभाय ।
तैसीये बनी बरात छबीली जगमग रंग चुचाय ।।
गोप सभा सरवर में फूले कमल परम भपटाय ।
नंददास गोपिन के दृग अलि लपटन कों अकुलाय ।।३६।।

(३७)

दूलह गिरिधर लाल छबीलो दुलहिन राधा गोरी जू ।
जिन देखत मन में जिय लाजत ऐसी बनी है यह जोरी ।।
रत्नजटि को बन्यो सेहरो उर मोतिन की माला ।
देखत वदन श्याम सुंदर को मोहि रही ब्रज बाला ।।
मदनमोहन राजत घोरा पर और बराती संगा ।
बाजत ढोल दमामा चहूं दिश ताल मृदंग उपंगा ।।
जाय जुरे वृषभान की पौरी उत तें सब मिल आए ।
टीको करी आरती उतारी मंडप में पधराए ।।
पढत वेद चहूं दिश विप्र जन भये सबन मन भाये ।
हथलेवा करि हरि राधासों मंगल चारु पढाये ।।

व्याह भयो मोहन को जवहीं यशोमनि देत बधाई ।
चिरंजीयो भूतल यह जोरी नंददास बलि जाई ।।३७।।

(३८)

लाल वने रंग भीने गिरिधर लाल वने रंग भीने ।। ध्रु० ।।
पिय के पाग केशरी सोहे । देखत रति पति को मन मोहे ।।
तापर येक चंद्रिका धारी । प्यारी जू अपने हाथ संवारी ।।
पिय के अरुण नयन मन भाये । प्यारी वहु विधि लाड लडाये ।।
पिय की पीक कपोल विराजे । अधरन अंजन रेखा छाजे ।।
पिय के उरसी मगरजी माला । वोलत शिथिल वचन नंद लाला ।।
छवि पर नंददास वलहारी । अंग अंग राचे कुंज विहारी ।।३८

(३९)

लाडिली न माने लाल आप पाउं धारो ।
जेसै हठ तजे प्यारी सो यतन विचारो ।।
वातें तो बनाय कही जेनी मति मेरी ।
एकहु न माने लाल एसी त्रिय तेरी ।।
अपनी वांप के काज सखी भेख कीनो ।
भूषन वसन साज वीना कर लीनो ।।
उततें आवत देख चक्रत निहारी ।
कोन गाम बसत हो रूप की उजारी ।।
गाम तो हे नंदगाम तहां की हों प्यारी ।
नाम तो हे श्यामा सखी तेरे हितकारी ।।
कर सों कर जोरे श्यामा निकट बैठाइ री ।
सप्त सुरन साज मिल सुलप वजाइ री ।।

रीझ के मोती माल उर पहरावे ।
एसोइ हमारो पिय सामरो बजावे ॥
जोइ चाहे प्यारी सोइ मांग लीजे ।
एसें मनमोहन सों मान नहीं कीजे ॥
मुख सों मुख जोर श्याम दरपन दिखावे ।
निरखि छबीली छबी प्रति बिंब दुरावे ॥
छिद्र तो उघर आयो हरि पीठ दीनी ।
नंददास प्रभु प्यारो आंको भर लीनी ॥३९॥

(४०)

श्री विट्ठल मंगल रूप निधान ।
कोटि अमृत सम हँस मृदु बोलन सब के जीवन प्रान ॥
करुणा सिंधु उदार कल्पतरु देत अभय पद दान ।
शरण आये की लाज चहूं दिश बाजे प्रकट निशान ।
तुमारे चरण कमल के मकरंद मन मधूकर लपटान ।
नंददास प्रभु द्वारें रटत हें रुचत नाहि कछु आन ॥४०॥

(४१)

भजो श्री वल्लभ सुत के चरणं ।
नंद कुमार भजन सुखदायक पतितन पावन करणं ॥
दूरि किये कलि कपट वेद विधि मत प्रचंड विस्तरणं ।
अति प्रताप महिमा समाज यश शोक ताप भय अघहरणं ॥
पुष्टि मर्यादा भजन रस सेवा निज जन पोषण भरणं ।
नंददास प्रभु प्रकट रूप धर श्री विट्ठलेश गिरिवर धरणं ॥४१॥

(४२)

भोर भये भोगी रस विलस भयो ठाडो ।
जागे जामिनीं जगाय भामिनि अंग अंग समाय
स्वास शिथिलनीं उर देत आलिंगन गाढो ।
घुमत रस मत्त गमन सुधेहु न डग पगत वचन
पगन छिनुं छिनुं चिन चांप मोजन मोजन मानो बाढो ॥
अति रस भरे रसिक राय शोभा वरनी न जाय
बलि बलि विहारी नंददास प्रेम रंग काढो ॥४२॥

(४३)

कान्ह अटा चढ चंग उडावत में अपने आंगनहू ते हेर्यो ।
लोचन चार भये नंदनंदन काम कटाच्छ कियो भटु मेरो ॥
किधों रही समझाय सखी री अटके न मानत यह मन मेरो ।
नंददास प्रभु कब धों मिलेंगे खींचत दोर किधों मन मेरो ॥४३।

(४४)

फुलन को मुकुट बन्यो फूलन को पिछोरा
तन शोभित अति प्यारो वर फूलन को शृंगार ।
कंठ फूल वागो फेंटा फूल फूल गादी गेंडुवा
फूल हँस बैठे हैं श्यामा श्याम शोभा को नहीं पार ॥
फुलन को आभूषण वसन विराजत
फूलन के फोंदा फूल उरहार ।
नंददास प्रभु फुल निरखत सुधि भूले ।
शुकदेव नारद शारद रटत वारंवार ॥४४॥

(४५)

फुलन के मेहेल वने फुलन वितान तने
फुलन के छाजे झरोखा फूलन के किंवार हे ।
फुलन की गादी गुंथी तकिया फुलन के
वैठे श्यामा श्याम शोभित अपार हें ।।
फूलन के वसन आभूषण विराजें
फुलन के फोंदा फुल उरहार हें ।
नंददास प्रभु फुले निरखत सुधि बुधि भूले
शुकदेव नारद शारद रटत वारंवार हें ।।४५।।

(४६)

फ़ुलनसों वेनी गुही फुलन की अंगिया
फुलन की सारी मानों फुली फुलवारी ।
फ़ुलन की दुलरी हमेल हार
फुलन की चोली चारु ओर गजरारी ।।
फ़ुलन के तरोंना कुंडल फुलन की किंकिणी सरस सँवारी ।
फूल महल में फुली सी राधा प्यारी फुले नंददास जाय बलहारी ।।४६।।

(४७)

छबीली राधे पूज लेती गन गोर ।
ललिता बिसाखा सब मिलि नीकसी आइ वृषभान की पोर ।।
सघन कुंज गहवर वन नीको मिल्यो नंद किशोर ।
नंददास प्रभु आये अचानक घेर लीयो चहुं ओर ।।४७।।

(४८)

लक्ष्मण घर बाजत आज बधाई ।
पूरण ब्रह्म प्रकट पुरुषोत्तम श्री वल्लभ सुखदाई ।।
नाचत तरुण वृद्ध और बालक उर आनंद न समाई ।
जय जय यश वंदीजन बोलत विप्रन वेद पढ़ाई ।।
हरद दूब अक्षत दधि कुंकुम आंगन कीच मचाई ।
वंदन माला मालिन बांधत मोतिन चौकु पुराई ।।
फूले द्विज वरदान देत हें पट भूषण पहराई ।
मिट गये द्वंद नंददास के मन वांछित फल पाई ।।४८।।

(४९)

चंदन भवन मध करत व्यारु परोस धरी हे कंचन थारी ।
हंस हंस जात देत मोहन कर बहु विंजन जसुमति महतारी ।।
चंदन अंग अंग लेप कीए तन लागत हे सुखकारी ।
नंददास चरन रज सेवक तन मन डारत वारी ।।४९।।

(५०)

अक्षय तृतीया अक्षय सुख निधि पिय को पीव चढावें चंदन ।
तब ही प्रीया सिंगारी नारी अरगजा घोरि सुघर नंद नंदन ।।
ले दरपन निरखे जु परस्पर रीझ रीझ रही जो वंदन ।
नंददास प्रभु पिय रस भीजे जुवतिन सुख विरह दुख कंदन ।।५०।।

(५१)

चंदन पहर नाव हरि बैठे संग वृषभान दुलारी हो ।
जमुना पुलीन शोभित तहां खेलत लाल विहारी हो ।।

त्रिविध पवन वहत सुखदायक सितल मंद सुगंध हो ।
कमल प्रकाश कुसुम वहु फुले जहां राजत नंद नंदा हो ।।
अक्षय तृतीया अक्षय लीला नंग राधिका प्यारी हो ।
करत विहार सव सखी सों नंददास बलहारी हो ।।५१।।

(५२)

वल वामन हो जग पावन करण ।
कही न परत शोभा नील मणिन की सी शोभा गगन गयो जब सुंदर चरण ।।
बन्यो है भेद अति उतते गंगा की धार धनी हे धरनि उज्ज्वल वरण ।
इतते पद की जोति मानों कालिंदी की धार चढ़ी हे अमरपुर पाप हरण ।।
रहे हें चकत चाहि सुर नर मुनिवर दुहूं दिश नेह आन किये वरण ।
नंददास जाके चरित्र दुरित दवन रंचक श्रवण मिटे जन्म मरण ।।५२।।

(५३)

देखो माई नंद नंदन रथ ही विराजे ।
संग सोहे वृषभान नंदनी देखत मन्मथ लाजे ।।
व्रज जन सव मिल रथ खेंचत हे शोभा अदभुत छावे ।
सीतल भोगधर करत आरती नंददास गुण गावे ।।५३।।

(५४)

बेठी अटा मानों चंद छटा सी सोच करत दृग वारन बोरे ।
जाय कहो कोउ मेरे भैया सों इते भूपति काहेन जोरे ।।
नंद नंदन व्रज चंद विराजे ते देखे ते ते गोरे ।
नंददास प्रभु सजलताई सीतलताई हार काम न आवत औरे ।।५४।।

(५५)

घुमड रहे बादर सगरी निशा के अहो महेरि लालें दीजे जगाय ।
वर्षा रितु कहुं वरसें अचानक बालक जाय डराय ॥
चिरैयन के चुंह चहान जसोदा कर अपुनो निरवरि घर काज ।
दधि मंथन बेठि लावो दुध दही घास वटत ब्रजराज ॥
बछरा छोर बलभद्र जगाउं दुहि दुहि लावत हें सब गाय ।
नंददास लाल जगाय तिहि छिन लीनो अंक जसोदा माय ॥५५॥

(५६)

आंगन उजारे बैठ करोहो कलेउ लाल भवन अंधेरो हे रे दोउ भैया ।
घुमड़ी घन घटा आइ चहुं दिश नें छाइ हसत खडे खडे दोउ धैया ॥
माखन मिश्री ओर ओटयो पय प्यावत मथ मथ दुधकी धैया ।
एसो सुख देख नंददास प्रभु की पुन पुन लेत वलैया ॥५६॥

(५७)

जहां तहां बोलत मोर सुहाये ।
श्रवण रमण भवन वृंदावन घोर घोर घन आये ॥
नेन्ही नेन्ही बूंदन वरषन लाग्यो व्रज मंडल में छाये ।
नंददास प्रभु संग सखा लिये कुंजन मुरलि वजाये ॥५७॥

(५८)

नीकसी ठाडी भई री चढ नवल धवल महेल रंगीली आली मनमाझ ।
तेसी उनये तेसीये बुंदन तेसीये कुसुंभी सारी तेसीये फुली हे साज ॥
कोउ प्रवीन सो वीन वजावत कोउ स्वर झीने झनकावत झांझ ।
नंददास लटकत पिय प्यारी छबी रची विरंची मानो निपुणता भई बाँझ॥५८॥

(५९)

नयो नेह नयो मेह नई भूमि हरियारी नवल दूल्हो प्यारो नवल दुल्हैया ।
नवल चातक मोर कोकिल करत रोर नवल युगल भोर नवल उलैया ॥
नवल कसुंभी सारी पेहेरें श्रीराधा प्यारी ओढनी के अंग संग सरस सुलैया ।
नंददास वलहारी छवि पर वारि डारी नवल ही पाग वनी नवल कुल्हैया ॥५९॥

(६०)

आगम गहेर गहेर गरज सुन औचक वाल सलोंनी ।
प्यारी के अंक में दुर रही एसें जेसें केहरि कंदर मंदिर ध्वनि सुन
मृगी अंक मृग छोंनी ॥
नेंक न धीरज धरे हीयो थरथर करे सोचत मन ही मन जेसें मुख मोनी ।
नंददास प्रभु बेग चलो क्यों न भई जो कहा आगें होनी ॥६०॥

(६१)

आयो आगम नरेश देश देश में आनंद भयो
मन्मथ अपनी सहाय कुं वुलायो ।
मोरन की टेर सुन कोकिला कुलाहल
तेसोई दादुर हिलमिल सुर गायो ॥
चढयो घन मत्त हाथी पवन महावत साथी
अंकुश वंकुश दे दे चपला चलायो ।
दामिनी ध्वजा पताका फरहरात सोभा बाढी
गरज गरज धों धों दमामा बजायो ॥
आगें आगें धाय धाय वादर वर्षत आय
व्यारन की वहुकन ठोर ठोर छिरकायो ।

हरी हरी भूमि पर बूदन की शोभा बाढी
वरण रंग बिछोना बिछायो ॥
बांधेहे विरही चोर कीनीहे जतन रोर
संजोगी सावन मों मिल अति सचुपायो ।
नंददास प्रभु नंदनंद को आज्ञाकारी
अति सुखकारी व्रजवासी मन भायो ॥६१॥

(६२)

रंग मेहेल रंग राग तहां बेठे दूल्हे लाल तू चल चतुर रंगीली राधे ।
अति विचित्र कियो साज तो मों रंग रहेगो आज
तेमेंई दादुर मोर पपैया फूले फूल द्रुम बाग ॥
नव सत अंग साजे पेहेर कसुंभी सारी
ता पर रीझ लाल बीच बांच साध दाग ।
दूती के वचन सुन उठ चलि पिय पे
यह छबि निरख गाये नंददास बड भाग ॥६२॥

(६३)

अपने हाथ पातन को छतना कोउ ढांप डला पर दीजे हो ।
सुन बलराम श्याम जित चली हों तित आगे ह्वै लीजे हो ॥
पवन झकोर बुंदे लागी टपकन अब अवार क्यों कीजे हो ।
नंददास प्रभु फिर न स्वाद कछु जो व्यंजन रस भीजे हो ॥६३॥

(६४)

श्याम चल कुंजन में आये दोर ।
ऊँचे चढि टेरत ग्वालन को आवो सबे मेरि ओर ॥

गायन टेर दइ वलदाउन चोंकि चमकि आइ इक ठोर ।
नंददास प्रभु भोजन करवे को वेठी सखा मंडली जोर ॥६४॥

(६५)

आई जु श्याम घटा घन घोर
चहुं दिश ते वरखत आवत वड़ी वड़ी बुंदन ।
वोहो प्रकार वींजन पठये नाना विध संवार
वेठे हो फेलाय के से लागे हो अव दोना पातर गुंदन ॥
प्रवल प्रकाश आकाश भये आय मील्यो
चमचमात वीज लगत डरपावन उडगन ।
नंददास प्रभु संकेत पत वडवान दीये
लाल डला भाजन भर आतुर के लागे मुंदन ॥६५॥

(६६)

चहुं दीश टपकन लागी बुंदे ।
वहां छारन विंजन भीजेंगे द्वार पिछोर मुंदे ॥
भोजन करत शीश धर छतना याही सुख हित गुंदे ।
वहे सुचेत नंददास प्रभु कोन कीच अब खुंदे ॥६६॥

(६७)

मोहन जेंमत छाक ग्वाल मंडली मांह ।
लुमझुम रही देखी राधा सब कदंब की छांह ॥
व्यंजन देत निहारे कर कर कोउ लेत कोउ करत जु नांह ।
नंददास आस जुंठन की फुले अंग न समाह ॥६७॥

(६८)

भोजन भयो लाल नीकी विधि सों सदन कुंज की मांह ।
गरज गरज घन बरस्यो प्रबल अति कछु हम जान्यो नांह ।।
का अचवन अब देखो ब्रज शोभा कदंब खंड वन मांह ।
नंददास प्रभु तुम चिरजीयो हम नित्य जुठन खांह ।।६८।।

(६९)

दूल्हे दुलहिन सुरंग हिंडोरे झूले प्रथम समागम अहो गंठ जोरे
चरण खंभ भुज करिमयार डांडी चारू कमलकर रमक हुलसे दोउ ओरे ।।
सुभग सेज पटुली मुख वाढचो मरुवा बेलन प्राची ओरे ।
नंददास प्रभु रस वरखत जहां नवघन दामिनि के अनुहोरे ।।६९।।

(७०)

झुलत प्रीतम संग जान न परत दीन जामीनी ।
गोपी सब चहुं ओर झुलावत थोरे थोरे रस बरखत मानों घन दामीनी ।।
नवल मच्यो नेहेरा सोहत शिश सेहेरा कसोटी वसन
प्रीतम संग कनक कामीनी ।
सब हरत पिय प्यारी जहां नंददास वारो तहां
गरव गोपाल संग श्यामा गजगामीनी ।।७०।।

(७१)

झुलावत पचरंग डोरी ब्रज वधु ।
नंद नंदन मुख अवलोकित त्रीय संग राधिका गोरी ।।
गुलाबी सारी कंचुकी उपर गुलाबी सींगर कीसोरी ।
गुलाबी लाल उपरना लाल अंग चमकत दामिनी ओर ।।

गुलावी भुम छाय रहो रंगना बरखत बुंदन थोरी ।
नंददास नंद नंदन संग क्रीडत गोपी जन लखी कोरी ॥७१॥

(७२)

गुलावी कुंजन छबि छाई झुलत दोउ ।
गुलावी फूल वीकसित द्रुम गुलाबी लता उरझाई ॥
गुलावी बसन उपरना पाघ अरु केकी पीछ सुहाई ।
गुलावी माल उर पर लहिरति गुलावी बदन झुक आई ॥
गुलावी अरुन मुख दरपन नीहारत परस्पर मुसकाई ।
नंददास जुवती सब वारत तन मन धनि सरसाई ॥७२॥

(७३)

हिंडोरें झूलत बंसी बाला ।
मधुबन सघन. कदंब की डारें झुलत झुकत गोपाला ॥
कंचन खंभ सुभग चहूं डांडी पटली परम रसाला ।
श्वेत बिछोना बिछायो तापर बैठे मदन गोपाला ॥
झुलन को आइ व्रज बनिता बोलत बचन रसाला ।
नंददास नंदनंदन मुरली सुन मग्न होत व्रज बाला ॥७३॥

(७४)

झूलत राधा मोहन कालिंदी कें कूल ।
सघन लता सुहावनी चहुं दिश फुले फुल ॥
सखी जुरी चहुं दिश ते कमल नयन की ओर ।
बोलत बचन अमृत मय नंददास चित चोर ॥७४॥

(७५)

माई आज तो हिंडोरें झूलें छैयां कदम की ।
गोपी सब ठाडी मानों चित्र के सदन की ॥
देखत रंगीले नयन बोलत मधुरे बेन
मोहे सब कोटि काम छबीले बदन की ।
गावत मधुर ध्वनि मोहे सुर नर मुनि
शंकर से महायोगी तारी छूटी तिनकी ॥
त्रिविध समीर जहां बंसीवट झूलें तहां
मंद मंद गावें सखी राधा के रवन की ।
नंददास प्रभु जहां ललिता झुलावे तहां
भई मगन सिंधु शोभा देख स्याम घन की ॥७५॥

(७६)

माई झुलत नवल लाल झुलावत व्रज वाल
कालिंदी के तीर माई रच्यो हे हिंडोरनां ।
तेसेई बोले री मोर क्रीडा करें चहूं ओर
तेसोई मधुर ध्वनि लाग्यो घन घोरनां ॥
तेसेई फूले री फूल हरत मन के शूल
अलि गण गुंजें माई मन के सलोलनां ।
नंददास प्रभु प्यारी जोरी अद्‌भुत भारी
देखबोई कीजे जेसें चंद्र को चकोरनां ॥७६॥

(७७)

माई फूल को हिंडोरो बन्यो फूल रही यमुना ।
फूलन के खंभ दोउ डांडी चार फूलन की
फूलन बनी मयार फूल रहे वेलना ॥

तामें झुले नंदलाल सखी सब गावें ख्याल
बांये अंग राधा प्यारी फूल भई मगना ।
फूले पशु पंछी सब देखे ताप कटे तब
फूले सब ग्वाल कटे दुख द्वंद्रना ॥
फूले घन घटा घोर कोकिला करत रोर
छवि पर वार डारों कोटि अनंगना ।
फूले सब देव मुनि ब्रह्मा करें वेद ध्वनि
नंददास फूले तहां करे बहुरंगना ॥७७॥

(७८)

माई फूलन को हिंडोरो बन्यो फूल रही यमुना
फूलन के खंभ दोउ फूलन की डांडी चार
फूलन की चौकी बनी हीरा जगमगना ॥
फूले अति बंसीवट फूले हे यमुना तट
सब सखी मिल गावे मन भयो मगना ।
फूल सखी चहूँ ओरें झुलवत थोरें थोरें
नंददास फूले जहां मन भयो मगना ॥७८॥

(७९)

आली श्रावन की पून्यो हरि हरियारी भूमि सोहत पिया संग
झूलूंगी हो नवल हिंडोरे ।
बरसत मेह भटू लागत प्यारो मोहे सखी
आपुने प्रीतम कों हों प्रेम रंग बोरे ॥
पीत कुल्ही राजे चूंनरी पीत सारी ल्हेंगा
पीत कंचुकि सोहे तन गोरे ।

झोटन में लोटपोट झूलन दोउ रंग भरे
निरखी छवि नंददास बल तृन तोरे ॥७९॥

(८०)

राखी बांधत गर्ग श्याम कर।
हीरा रत्न बिच बिच मानिक बिच बिच मुक्तन भर॥
दक्षिणा देत नंद पायलागत असीस देत गुरुजन सब द्विजवर।
नंददास प्रभु जियो तहां लों ज्यों लों चंद सूरज मारुतधर॥८०॥

(८१)

सब अंग छींटें लागी नीको बन्यों बान।
गोरा अगर अरगजा छिरकत खेलत गोपी कान्ह॥
हाथ भरे कनक पिचकाई भरि भरि देत सुजान।
सुर नर मुनि जन कौतुक भूल जय जय जदुकुल भान॥
ताल पखावज बेन बांसुरी राग रागिनी तान।
नंददास बिमलावलि बंदित नहीं उपमा कों आन॥८१॥

(८२)

कुंज कुटीर मिलि यमुना तीर खेलत होरी रस भरे अहीर।
एक ओर बलवीर धीर हरि एक ओर युवतिन की भीर॥
केकी कीर कल गुन गंभीर पिक डफ मृदंग धुनि करत मंजीर।
पग मंजीर कर ले अबीर केसरि के नीर छिरकत हैं चीर॥
भये अधीर रतिपथ के तीर आनंद समीर परसत सरीर।
नंददास प्रभु पहरे हीर नग मिटत पीर गह्यो सुख को सीर॥८२॥

(८३)

तुम कौन के बस खेलो हो रंगीले हो हो होरियां।
अंजन अधरन पीक महावर नेंन रंगे रंग रोरियां॥
वारंवार जृभांत परस्पर निकसी आई सब चोरियां।
नंददास प्रभु उहांई वसो किन जहां वस वे गोरियां॥८३॥

(८४)

निकस कुंवर खेलन चले रंग हो हो होरी
मोहन नंद के लाल रंगन रंग हो हो हो होरी।
संग लीनें रंग भीनें ग्वाल बाल वे गुन रूप रसाल॥
कंचन माट भराय सोधें भरी हे कमोरी।
रत्न जटित पिचकाई करन अबीर भरे झोरी॥
सुर मंडल डफ झांझ ताल वाजत मधुर मृदंग।
तिन में परम सुहावनी महुवरी बासुरी चंग॥
खेलत खेल जब रंगीलो लाल गये वृषभान की पोरि।
जो हुती नवल किशोरी भोरि ते आई आगें दोरि॥
सुनि निकसी नव लाडिली श्रीराधा राज किशोरी।
ओलिन पोहोप पराग भरे रूप अनूपम गोरी॥
संग अली रंगरली सोहें करन कनक पिचकारी।
मोहन मन की मोहनी देत रंगीली गारी॥
तिनकों छिरकत छबीलो लाल राजत रूप गहेली।
मानों चंद सींचत सुधा अपने प्रेम की बेली॥
नवल वधून के रंगीले वदन अबीर घुमड में डोले।
छूटहि निसंक अरुण घन में हिमकरनि कर कलोले॥
इतने मांझ छिपि छबीली कुँवरि पकरे हें मोहन आन।
छवि सों परस्पर झक झकोरत कापें परति बखान॥

गुप्त प्रीति प्रगटित भई लाज तनक सी तोरी।
ज्यों मदमाते चोर भोर झलकत निकसी चोरी॥
सखियन सुख देखन के काज गांठ दुहुन की जोरी।
निरख बलैयां ले सबे छबि न बढ़ी कछु थोरी॥
कोउ छेल छबीले लालें छिरकत रंग अमोल।
कोउ कमल कर ले पराग परसत रुचिकर कपोल॥
बने हे पिया के कमल लोचन जब गहि आंजे अंजन।
जानों अकुलात कमल मंडल में फंदन फँदे युग खंजन॥
देखि विवस वृषभान घरनि हँसत हँसत तहां आई।
बरजी आन नवल वधू भुज भरि लिये कन्हाई॥
पोंछत मुख अपने अंचल पुनि पुनि लेत बलाय।
मुसकि मुसकि छोरत सुगाँठ छबि बरनी नहीं जाय॥
छोडन न देंहीं नवल वधू माँगे कुंवर पें फाग।
जो पें फगुवा दियो न जाय प्यारी राधा के पाय लाग॥
और कहां लगि बरनिये बढ्यों सुख सिंधु अपार।
प्रेम कलोल हलोलन में किनहूं रही न संभार॥
रंग रंगीली व्रज वधू रंगीले गिरिधर पीय।
यह रंग भीने नित बसो नंददास के हीय॥८४॥

(८५)

व्रज में खेले री धमार मोहन प्यारो री नंद को।
संग बनी रस ओपी गोपी कह्यो न परत कछू
बाढ्यो या सुख सिंधु उडुचंद को॥
बाजत ताल मृदंग किन्नरी उपर बाढ्यो सुख आनंद को।
नंददास प्रभु प्यारे कौतुक देखत और
शोभा गिरिधर मेन फंद को॥८५॥

(८६)

डोल झुलावत सब ब्रज सुंदरी झूलत मदन गोपाल ।
गावत फाग धमार हरख भर हलधर ओर सब ग्वाल ।।
फूलें कमल केतकी कुंजो गुंजत मधुप रसाल ।
चंदन बंदन चोवा छिरकत उडत अबीर गुलाल ।।
बाजत बेणु विषाण बांसुरी डफ मृदंग ओर ताल ।
नंददास प्रभु के संग विलसत पुण्य पुंज ब्रज बाल ।।८६।।

(८७)

पीतांबर काजर कहां लाग्यो हो ।। ललना कोन के पोंछे हें नयन ।।ध्रु०।।
कोन कें गेह नेह रस पागे वे गोरी कछु ओर ।
देहु बताय कान राखति हों एसे भये चित चोर ।।
अधरन अंजन लिलाट महावर राजत पीक कपोल ।
घूमि रहे रजनी जागे से दुरत न काम कलोल ।।
नख निसान राजत छतियन पर निरखो नयन निहार ।
झूम रहीं अलकें अलबेली पाग के पेंच संवार ।।
हम डरपे जसुदा के त्रासन नागर नंद किशोर ।
पाय परें फगुवा प्रभु देहो मुरली देहु अकोर ।।
धन्य धन्य गोकुल की गोपी जिन हरि लीने हराय ।
नंददास प्रभु किये कनोंडे हें छांडे नाच नचाय ।।८७।।

(८८)

बरसाने की सीम खेलत रंग रह्यो हे ।
छलबल बानिक बान ललिता नें लाल गह्यो हे ।।
सखा श्रीदामा आदि हलधर भाज गये हें ।
गही पिचकारी हाथ जुरी चहुं कोद भये हें ।।

कोउ न आवे पास उत बल बहुत भये हे ।
अधिक भई अंधियारी गगन गुलाल छयो हे ।।
ना मधि दमकत अंग व्रज जन रूप छटा री ।
मारी भरी सुरंग सोहे कनक किनारी ।।
जोरी बंदन धूर अबीर मिलाय लियो हे ।
छिरक छिरक घनश्याम सबे एक रंग कियो हे ।।
लपट परी विह बाल तरुन तमाले हेली ।
पोहोप लता सिरताज कोंधत उपर वेली ।।
करत मनोरथ घेर गिरिधर सुघर सलोनों ।
लाग्यो अरगजा गाल श्रीमुख लसत रिझोनों ।।
पाग उतारत आप श्री वृषभान कुमारी ।
केस खोल निरवार बेनी सरस संवारी ।।
झबी जराउ जोर अग्रनि ग्रथ संवारी ।
मांग भरी मोतिन की पटियन ही ले पारी ।।
सीस फूल सीमंत किशोरी आपुन दीनों ।
समझवार समझावन नयनन अंजन कीनों ।।
मृगमद आड सुदेस करी चंद्रावलि नीकी ।
चंद्रभगा ले बीच लगावत पिय को टीकी ।।
पहरावन झकझोर वेसर निरमोली हे ।
चारु छपेरी साज पचरंग उर चोली हे ।।
जेहर तेहर पाय बिछुवन छवि उपजायल ।
अनवट नूपुर चूरा रत्न खचित हे पायल ।।
नख सिख लों यह भात अभरन भीर भई हे ।
निरख निरख यह कांति व्रज आनंद मई हे ।।
बाजन लगे ढोल ओर डफ ताल मृदंगा ।
गोमुख किन्नरि झांझ बीच बिच मधुर उपंगा ।।

सहचरी भई आनंद गावत गारि सुहाई।
दिस दिस मोहन ओर चलत निकर पिचकाई ॥
एक सखी बीच आइ अरगजा डार गई हे।
देख पलक पर रेल पिय जु गारी दई हे ॥
ले ले अंचल आप पोंछत अंगुरिन दल सों।
मुठियन चलत गुलाल आगें पाछें छल सों ॥
तेई घातन मधु पाय प्रानपिया कों पोखत।
प्रेम विवशता हरि भर अकवारी झोखत ॥
हो हो होरी वोलत ललिता आंगन नाचत।
करे प्रेम की टोक चोख एको नहीं वांचत ॥
नंददास खिलवार खिलारी खेलनहारो।
भयो नेह मद माद टोल दुहुं दिस मतवारो ॥८८॥

(८९)

आज हरी खेलन फाग वनी।
इत गोरी रोरी भर भोरी उत गोकुल को धनी ॥
चोवा को ढोवा कर राख्यो केसर कीच घनी।
नंददास प्रभु संग होरी खेलत मुर मुर जात अनी ॥८९॥

(९०)

अरी होरी खेलन जैये सांवरे सलोने सों।
बडे बडे माट भराय केसर सों पिचकाइन छिरकैये ॥
खेलत खेलत रंग रह्यो अबीर गुलाल उडैये।
नंददास प्रभु होरी खेलत आनंद सिंधु वढैये ॥९०॥

(९१)

अरी एसी नव यामिनी देखें भामिनी तोहि क्यों भवनमुहाय ।
जहां व्रजवर नर नारिन के यूथ जुरे हें आय ॥
श्री नंदनंदन पुनि तहां आए रंगीले रसिक मणिराय ।
आली तिन में तु नहि देखी तब रहि गये नयना नाय ॥
तब इन उत तक मोहन पिय मोतन तक अरगाय ।
तव नयनन ही में कह्यो कहां में कह्यो ग्रीव ढुराय ॥
अब रंगीले कुंवर तोहि पैयां सैनन दई हो पठाय ।
तु न कर गहर नागरि त्रिय आन भलो बन्यो दाय ।
यह सुन नवल नवेली सहचरी मुसकी नयन दुराय ॥
इतनेइ परम निपुण सखी जिन प्यारी भुज भरि लई उठाय ।
गहि नव कंचुकी सोधें बोरी बीरी दई बनाय ॥
पुनि पटपीत पटोरन पोंछ कें आगें धरी समुहाय ।
चली नवसत सज स्वामिनी कामिनी सखी के अंस भुज लाय ॥
जानों कनक धातु परवत पर तडित लता चमकाय ।
नव गुण नवल रूप नव यौवन नवल नेह हुलसाय ॥
झूमक सारी प्यारी पहरे चलन ललित लरकाय ।
जनो नव रूप जोति जगमग सों पवन लगे झुकराय ॥
कमल फिरावत कर वर बाला माला उर सिरु नाय ।
ललितादिक सखियन में सुंदर शोभित हें यह भाय ॥
जानों नव कुमुदिन के मंडल में इंदु पगन चल्यो जाय ।
कबहूँ वदन उघारत पुन हँस लेत दुराय ॥
मंजुल मुकुर मरीचिन सी मानों छिन छिन छवि अधिकाय ।
पुनि एक लट जो छबीली की छवि सों वेसर रही अरुझाय ॥
जानों प्रीतम मन मीन की बडसी भख मुक्ता लटकाय ।
ओर एसें नव मत्त गयंदन मलकत वहां ढुराय ॥

शोभित श्रवणन स्वेद सुदित के मानों पटे चुचाय।
चंचल अंचल छोर विराजत नेंक चलत जब धाय॥
नीवी बंधन फुंदवा घंटा किंकिणी घन घघराय।
नूपुर उपर चुरा रूरा जनु शृंखल झनकाय॥
सखियन के कर कुसुम छरिन तें अगड बने चहुं धाय।
मदन महावत को बल नाहीं अंकुश देत डराय॥
सखियन में हितू विशेष विसाखा जानों तन की परछांय।
सो नंद नंदन नेरे जान कें सहज उठी कछु गाय॥
सबहिन जान्यों श्री राधा जू आंई भये चौगुने चाय।
जे हुती नवल किशोरी की साथिन ते दोरी समुहाय॥
तिन संग मोहन धाये आये जानों रंक महानिधि पाय।
प्रथम ही लाल जुहार कियो मृदु मुरली मांझ बजाय॥
इत तें कुटिल कटाक्षन पिय तन चितई मृदु मुसिकाय।
चाचर देन लगी व्रज वीथन रंगीलो रंग उपजाय॥
गावन लागी ग्वालिनि गारी सुंदर ललहीं लगाय।
राधा जू गारिन सुन सुन हस हस हरि तन हेर लजाय॥
ललन अबीर भरत गोरी ग्वालिनि प्राण पियाहि बचाय।
सो सुख पिय नयना पहचानें सो मन में न समाय॥
और जो प्रेम विवश रस को सुख कहत कह्यो नहि जाय।
यह सुख कहिवे कों सरस्वती की कोटिक सुमति हराय॥
शेष महेश सुरेश न जानें अज अजहूं पछिताय।
यह सुख रमा तनक नहीं पायो यद्यपि पलोटत पाय॥
श्री वृषभान सुता पद अंबुज जिन के सदा सहाय।
यह रस मगन रहत जे तिन पर नंददास बल जाय॥९१॥

(९२)

खेले नंद को नंदन होरी अपने रंगीले ब्रज में ॥ध्रु०॥
बने हें ग्वाल बाल संग जनु अनेक मेन।
आपन मदन मोहन सोहन कह कहूं छबि अेन ॥
उततें आई युवती बृंद चंद मुखी एक दाई।
चंचल तन की दमक जनु दामिनि पट झांई ॥
जुरे हें कंचन चोहटें अपने अपने टोल।
आनंद घन ज्यों गाजत राजत दुंदुभी ढोल ॥
सुर मंडल किन्नरी डफ बाजत रंग भीने।
बीच बीच बँसुरिया बस कीनेहे मन दीने ॥
बजत चट सों पटनार ग्वार गावत संग।
नाचत हें मधु मंगल संगीत बढ्यो हे अति रंग ॥
कुंकुम चंदन बंदन साख मृगमद मथि घोरी।
छबि सों छबीलो भरन डोलत बोलत हो हो होरी ॥
रंग रंग की छींटन भरी सोहत त्रिय नवेली।
बरन बरन फूलन मानों फूली आनंद बेली ॥
घुमड कर गुलाल कों तामें दुर दुर आवे।
भर भागत हरि कों भामिनि दामिनि सी छबि पावे ॥
घेर लिये हें नवल त्रियन सांवरे सिरमोर।
यह छबी सों भ्रमत जेसें कमल कोश भोंर ॥
पकरे हें छबि सों आन मोहन राधिका बरजोरी।
कही न परे प्रेम की छबि छाई झकझोरा झकझोरी ॥
व्हे ठाडे विवश सबे काहू न रही संभार।
छूटी हें छबि सों अलक लर टूटे हें मुक्ताहार ॥
क्यों ही लुकत लाज पें अति प्रेम की उरेंड।
नंददास निधि न रुकत वारू की मेड ॥९२॥

(९३)

राधा बनी रंग भरी रंग होरी खेलें अपने प्रीतम के संग ।
एक पहलें ही रगमगी पुनि भी रंग रंग ।।
रंग रंग की सहचरी बनी छबीली के साथ ।
पहरें विविध वसन रंग रंग के रंग भरे भाजन हाथ ।।
रंग रंग की कर पिचकाई शोभित एक समान ।
मानो मेंन शिव पें सज्यो शोभित रूप कमान ।।
काहू पें कुसुमन गूंथी छरी काहू पें नये नये नोर ।
काहू पें कुसुम गेंदुक चलें काहु पें न्यूतन मोर ।।
काहू पें अरगजा रंग को काहू पें केसर को रंग ।
कोउ गोरा मृगमद लियें होत भ्रमर जहां पंग ।।
तिन मे मुकुट मणि लाडिली सोहत अति सुकुमार ।
लटक चलत ज्यों पवन तें कोमल कंचन डार ।।
पिय कर पिचकाई देख कें त्रिय नयना छवि सों ढराय ।
खंजन मे मानो उडहि चलेंगे ढरक मीन व्है जांय ।।
छिरकत पिय जब त्रियन कों जो मन उपजे अनंद ।
मानों इंदु सुधाकर सींचत जों कुमुदिन को वृंद ।।
भीजे वसन तन तन लपटाने वरणत वरण्यो न जाय ।
उपमा देन न देत नयन राखे हाहा खाय ।।
रंग रंगीली राधिका रंग रंगीलो पीय ।
यह रंगभीने नित्य वसो नंददास के हीय ।।९३।।

(९४)

चली हें कुंवरि राधे खेलन होरी । पंकज पराग भर लीनें हे झोरी ।।
रंग रंगीली संग सोहें अनगण अली । सुफल करी हें सब गोकुल की गली ।।

सरस स्वर आछी मीठी ध्वनि। हर जो जार्यो मनोज जीयो जाहि सुनि॥
बाजे डफ ताल मृदंग सुहाये। मदन सदन मानो मंगल बधाये॥
सोहे मुख कछू कछू अंबरन दुराए। आधे आधे विधु मानो बदरन छाए॥
अबीर धूंधर मध्य राजे रंग भीनों। मानों डीठ डर सार सार ढांक लीनो॥
उतते आए हें मोहन भीने रंग रंगा। चरण पलोटत आवे अनंगा॥
रंगीली गलिन विच खेल मच्यो भारी। इत हरि उत वृषभान दुलारी॥
कनक यंत्रन मिल शोभा भई भारी। छकि सों छूटत मानो मेन फुलवारी॥
छिरकि छबीले आय प्यारी त्रिया गान। रंग बरसे मानो नौतन घन॥
त्रियन के अंग रंग कण गण सोहें। कंचन छरी जराय जरी छवि को हें॥
इतते रंग की धारें सांवरे को मेली। आतुर उलही मानो प्रेम नवेली॥
अबीर गुलाल मध्य मंडित गगन। मानो प्रेमरवि अब चाहत उगन॥
कामिनी वृंदन स्याम घेर लिये एसे। दामिनी निकर मानो नवघन जेसे॥
लपटी सांवरे अंग सोहे सब ऐसी। सिंगार कल्पतरु छविलता जैसी॥
हँसत हँसत चंद्रावलि उत गई। लाल सों कहत हों तिहारी दिहाभई॥
मुरली छिनाय लई छल सों किशोरी। तारीदेदे हँसीहे सब बोले हो हो होरी॥
राधा जु अधर धरी वांसुरी विराजी। ऐसी कबहू सांवरे पिय पें न वाजी॥
बंसीदेन मिस प्यारी राधिका बुलाये। हँसत हँसत लाल अकेले ही आये॥
गावत व्रज की वधू कीरति तिहारी। चिरजीयो प्यारो लाल अटल विहारी।
फगुवा कुँवर कान्ह बहुत जो दीनो। सब सखी प्रेम प्रीत माथे मान लीनों॥
नंददास यह सुख कहां लों बखाने। विधिहू कह्यो हे ऐसे जाने सोई जाने॥९४॥

(९५)

एक दिस वर व्रज बाला एक दिस मोहन मदन गोपाला।
चाचर देत परस्पर छबि जों कही न परत तिहिं काला॥
कुसुम धूर धूंधर मध्य चांदनी चंद किरण रही छाय।
तेसोहि बन्यो गुलाल गगन कछु वरणत वरण्यो न जाय॥

सुर मंडल डफ बीना भीना बाजत रस के एना ।
चाचर में चाचर सी चितवत छबीली त्रियन के नयना ।।
बन्यो हे चटक कठताल तार और मृदंग मुरज टंकार ।
तिन संग रंग रंगीली मुरली बीच अमृत की धार ।।
बढ्यो हे दुहुं दिश गुण बिनतान रसगान सुनत रसमूले ।
मंद मंद आवन उलटन मानो प्रेम हिंडोरे झूले ।।
लटक लटक आवत छबी पावत भावत नार नवेली ।
प्रेम पवन वश डोलत मानो रूप अनूपम बेली ।।
चारु चलन में मणिमय नूपुर किंकिणी कलरव राजे ।
मानो भेद गति पाछें आछें मधुर ध्वनि छाजे ।।
चमक चमक दशनावलि द्युति फिर बदरन मांझ समाई ।
दमक दमक दामिनी छबि पावत चंद्रन में दुर जाई ।।
अनेक भांत राग रागिणी अनुराग भरे उपजावें ।
सुन विथके शिव नारद तेहू पार न पावे ।।
रस कदंब में बोरी होरी नित उठ खेलन आवें ।
नंददास जाके भूरि भाग्य जे विमल विमल यश गावे ।।९५।।

नित्य कीर्त्तन

(९६)

आगे आगे भाज्यो जात भगीरथ को रथ पाछें पाछें आवत तरंग भरी गंग ।
झलमलात अति उज्वल जलजोति अब निरखत मानों सीसभर मोतिन मंग।।
जहां परे हें भूप कबके भस्म रूप ठोर ठोर जाग उठे होत सलिल संग ।
नंददास मानो अग्नि के यंत्र छूटे ऐसे सुरपुर चले धरे दिव्य अंग ।।१।।

(९७)

फूलन की माला हाथ फूलि सब सखी साथ
झांकत झरोखां ठाडी नंदनी जनक की।
देखत पिया की शोभा सीया के लोचन लोभा
एकटक ठाडी मानों पुतरी कनक की ॥
पितासों कहत बात कमल कोमल गात
राख हो प्रतिज्ञा शिव के धनक की।
नंददास हरि जान्यो तृण कर तोर्यो ताही
बांस के धनैया जेसे बालक के करकी ॥२॥

(९८)

ढीले ढीले पग धरत ढीली पाग ढरक रही
ढये सेहि फिरत ऐसें कोन पें जु ढहे हो।
गाढे तो हीय के पीय ऐसी गाढी कोन त्रीय
गाढे गाढे भुजन बीच गाढे कर गहे ॥
लाल लाल लोयन में उनीदे लाग लाग जात
सांची कहो प्राणपति में तो लाल लहे।
नंददास प्रभु पिय निश के उनींदे आये
भये प्रात कहो बात रात कहां रहे ॥३॥

(९९)

जागे हो रेन तुम सब नयना अरुण हमारे।
तुम कियो मधुपान घूमत हमारो मन काहेते जु नंद दुलारे ॥
उर नख चिन्ह तुम्हारें पीर हमारे कारण कोन पियारे।
नंददास प्रभु न्याय स्यामघन बरषे अनित जाय हम पर भूम भुमारे ॥४॥

(१००)

जानन लागे री लालन मिल बिछुरन की वेदन ।
दृग भर आये री में कही री कछुक तेरी प्रीति कि रीति ।
आनाकानी भई घुमराई में गये एते दिन ।।
नेह् कनावडे की रूप माधुरी अंग अंग लागी सरस हियो वेदन ।
नंददास प्रभु रसिक मुकुटमणि कर पर धर कपोल रहेरी
ध्यान धर ररकत ढरकत है री तिलक मृगमेदन ।।५।।

(१०१)

उपरना वाही के जु रह्यो ।
जाही के उर बसे श्यामघन निश को जो सुख रह्यो ।।
छबि तरंग अंग अंग दृग भेद न जात कह्यो ।
नंददास प्रभु चले सेनदे जव दावन दौर गह्यो ।।६।।

(१०२)

ए आज अरुन अरुन डोरे दृगन लाल के लागत हैं अति भले ।
बंदन भरे पगन अलि मानो कुंज दलन पर चले ।।
लाल की पगिया में न समात कुटिल अलक आलस झलमले ।
नंददास प्रभु पोहोपन मध्य मानों मधुप गुंज सोवत ते कलमले ।।७।।

(१०३)

लहेकन लागी वसंत वहार सखि त्यों त्यों वनवारी लाग्यो बहेकन ।
फूले पलास नखनाहार के से तेसें कानन लाग्यो महकेन ।।
कोकिल मोर शुक सारस हंस खंजन मीन भ्रमर अखियां देख अति ललकन ।
नंददास प्रभु प्यारी अगवानी गिरधर पिय को देखत भयो श्रमकन ।।८।।

(१०४)

नंदसदन गुरुजन की भीर तामे मोहन वदन न नीके देखन पाऊं।
बिन देखे जिय अकुलाय जाय दुख पाय यद्यपि वडरे छिन छिन उठ धाऊं ।।
ले चलि री सखी मोहि यमुना के तीर जहां होहिं बलवीर देख दृगन सिराऊं ।
नंददास प्यासे को पानी पिवाय ले जिवाय ले जीय की जानन हो
तोसों कहां लों जनाऊं ।।९।।

(१०५)

नंद गाम नीको लागत री ।
प्रात समे दधि मथत ग्वालिनी सुनत मधुर ध्वनि गाजत री ।।
धन्य गोपी धन्य ये ग्वाल जिनके मोहन उर लागत री ।
हलधर संग ग्वाल सब राजत गिरिधर ले ले दधि भागत री ।।
जहां वसत सुरदेव महामुनि एको पल नहीं त्यागत री ।
नंददास कों यह कृपाफल गिरिधर देखे मन जागत री ।।१०।।

(१०६)

माई री प्रात काल नंदलाल पाग बंधावत
बाल दिखावत दर्पण भाल रह्यो लसि ।
सुंदर नव करन बीच मंजु मुकुर की छबि रही फबि
मानों गहि आन्यो है युग कमलन शशि ।।
बिच बिच चित के चोर मोर चंद्र माथे दिये
तिन ढिग रत्न पेच बांधत है कस ।
नंददास ललितादिक ओट भये
अवलोकत अनुलित छवि कहि न जान फूल झरे हँस ।।११।।

(१०७)

सुंदर मुख पर वारों टोना। वेनी वारन की मृद बेना।
खंजन नयनन अंजन सोहे भ्रोंहन लोयन लोना ।।
तिरछी चितवन यो छवि लागे कंजपलन अलि छोंना।
जो छवि हे वृपभान सुता में सो छवि नाहिंन सोना।
नंददास अविचल यह जोरी राधा स्यामसलोना ।।१२।।

(१०८)

ये दोऊ नागर ढोटा माई कोन ग्रेम्प के बेटा।
इनकी बात कहा कहों तोसों गुणन वडे देखन के छोटा ।।
अग्रज अनुज सहोदर जोरी गौर स्याम ग्रथित सिर चोटा।
नंददास बल वल यह मूरति लीला ललित सब ही विध मोटा ।।१३।।

(१०९)

नंद भवन को भूषण माई।
यशोदा को लाल वीर हलधर को राधारवन सदा सुखदाई ।।
इंद्र को इंद्र देव देवन को ब्रह्म को ब्रह्म अधिक अधिकाई।
काल को काल ईश ईशन को वरण को वरण महावरदाई ।।
शिव को धन संतन को सर्वस्व महिमा वेद पुराणन गाई।
नंददास की जीवन गिरिधर गोकुलमंडन कुंवर कन्हाई ।।१४।।

(११०)

कोन लई कौन दई इंडुरिया गोपाल मेरी।
गो ग्वाल बाल सखा मांझ तुम ही हसत हो ।।

गहे पद सुधे रह्यो कौन लई कासों कही
लेन कौन देख्यो सखी कहा तुम वमन हो ॥
दई हे दुगय धरन द्योस में कहा चोर परत
ऐसी होय कबहु लाल कोंन पें रीसन हो ।
नंददास वसन वास व्रज में गिरिराज पास
टेढो फेंटा आड वंध कौन पें कसत हो ॥१५॥

(१११)

गोकुल की पनिहारी पनियां भरन चलीं
बड़े बड़े नयना तामें खुभ रह्यो कजरा ।
पहिरें कसूंभी सारी अंग अंग छवि भारी
गोरी गोरी वहियन में मोतिन के गजरा ॥
सखी संग लिये जात हस हस बूझत बात
तनहुं की सुधि भूली सीस धरें गगरा ।
नंददास बलहारी बीच मिले गिरिधारी
नयन की सेन में भूल गई डगरा ॥१६॥

(११२)

ए वाल आवत डगर डगरी ।
रतन जटीत पटकीयेरी ओट शीश विराजत तापर कनक गगरी ॥
भोंहरुर वीदीये छवी सो दसन वसन साजे शोभा राजत सगरी ।
नंददास नंदलाल रीझे पाछें चल आवत बोलत वचन अचगरी ॥१७

(११३)

पनियां भरन कैसे जाउंरी भटुरी ।
नट नागर वागर जो डोलत छवि सागर नागर जो नटुरी ॥

मोहे न संभार रहत सारी की, वेन संभारि पीत पटु री।
नंददास प्रभु कहत बने नां मेंहि लटु केंधों वेहि लटुरी ॥१८॥

(११४)

दंपनि रस भरे भोजन करत लाडिली लाल।
बींजनमधुरे चरपरे खाटे खारे रस धरे बनाय जसोदा जी भावत जोरी रसाल॥
पय ओदन अरु दार भात गुंजा मठरी जलेबी घेवर फेना रोटी
चंद्रकला रुचि सों जेंवत प्यारो मदन गोपाल।
नंददास प्रभु प्रिया प्रीतम परस्पर हसत कोर भरत ललीता
मनुहार करत छबी पर बल बल जात ॥१६॥

(११५)

चित्र सराहत चितवत मुर मुर गोपी वहुत सयानी।
टक झुक में झुक वदन निहारत अलक संवारत पलकन मारत जान गई नंदरानी॥
पर गये परदा ललित तिवारी कंचन थार जब आनी।
नंददास प्रभु भोजन घर में उरपर कर धर्यो वे उनते मुसकानी ॥२०॥

(११६)

खंभ की ओझल ठाढो सुवल प्रवीण सखा
कर में जटित डबा वीरा सों भर्यो जेंमत हें री मोहन॥
परदा परे तिवारी तीनो तामध्य, झलकत अंग अंग रंग सोहन।
जाही को देखत रानी ताही को उठत झुक
कोऊ नहीं पावत सभयो जोहन॥
नंददास प्रभु भोजन कर बैठे तव में
दई री सेन पान खाये आवन कह्यो री गोहन ॥२१॥

(११७)

डला भरह्यो लाल कैसे के उठावें, पठावो ग्वाल छाक ले आवे ।
गिन देखो गांठ न जानो कौन कौन की मेवा
वसन सुरंग हाहाकार पायन परकें पठावें ।।
आप व्रजरानी न विचारे मेरे डला पर
थार ओदन वेला न समावें ।
नंददास प्रेमी स्याम परस पद कही वात
काल्ह तें जु कावर भर किंकर बुलावें ।।२२।।

(११८)

सव व्रज गोपी रही तक ताक ।
कर कर गांठ लसत सवहिन कें वन को चलत जव छाक ।।
मधु मेवा पकवान मिठाई घर घर ते ले निकसीं थाक ।
नंददास प्रभु को यह भावत प्रेम प्रीति के पाक ।।२३।।

(११९)

उसीर महल में विराजे मंडल मध्य मोहन छाक खात ।
ओदन रोटी जंघा धरे लाल शाक पाक फल रसाल सीला पर गोरस के पात ।।
चहुं ओर मेघ ज्यों छूटत फुहारे फुही कवहु सुवल गोद हसि ढर जात ।
नंददास प्रभु स्याम ढाकतर आपुन
हसत हसावत ग्वालन सरस बनावत वात ।।२४।।

(१२०)

यमुना तट भोजन करत गोपाल ।
विविध भांत दे पठयो यशोमति व्यंजन वहोत रसाल ।।

ग्वाल मंडली मध्य विराजत हसत हसावत ग्वाल ।
कमलनयन मुसकाय मंद हस करत परस्पर ख्याल ।।
कोउ व्यार ढुरावत ठाडी कोउ गावत गीत रसाल ।
नंददास तहां यह सुख निरखत अंखियां होत निहाल ।।२५।।

(१२१)

जाको वेद रटत ब्रह्मा रटत शंभु रटत शेष रटत
नारद शुक व्यास रटत पावत नहीं पार री ।
ध्रुव जन प्रह्लाद रटत कुंती के कुंवर रटत
द्रुपद सुता रटत नाथ अनाथन प्रतिपाल री ।।
गणिका गज गीध रटत गौतम की नारि रटत
राजन की रमणी रटत सुतन दे दे प्यार री ।
नंददास श्री गोपाल गिरिवरधर रूप रसाल
यशोदा के कुंवर लाल राधा उर हार री ।।२६।।

(१२२)

सारंग नयनी री काहे को कियो एतो मान ।
गौरी गहेरु छांड मिल लालें मन क्रम वचन यातें होत कल्यान ।।
जिन हठ करे री तू नटनागर सों भैरों ही देव गान ।
मुरली तान कान्हरो गावत सुन ले री कान ।।
रंग रंगीली सुघर नायकी तू जिय मे अडान ।
नंददास केदारो करिके यों ही विहाय गयो मान ।।२७।।

(१२३)

आवत ही यमुना भर पानी ।
स्याम रूप काहू को ढोटा वाकी चितवन मेरी गेल भुलानी ।।

मोहन कह्यो तुमको या ब्रज हरे नांहि पहिचानी।
ठगी सी रही चेटक सों लाग्यो तव व्याकुल मुख फुरत न वानी ॥
जादिन तें चितये री मोतन तादिन तें हरि हाथ बिकानी।
नंददास प्रभु यो मन मिलियो ज्यों सागर में पानी ॥२८॥

(१२४)

यमुना तट नव निकुंज द्रुम नव दल पहोप पुंज
तहां रची नागर वर रावटी उसीर की।
कुंकुम घनसार घोर पंकज दल बोर बोर
चरचत चहुं ओर अवनी पंकज पाटीर की ॥
शोभित तन गौर स्याम सुखद सहज कुंजधाम
परसत सीतल सुगंध मंदगति समीर की।
नंददास पिय प्यारी निरख सखी ललिता ओट
श्रवन धुनि सुन किंकिणी मंजीर की ॥२९॥

(१२५)

रच्यो खसखानों आज अति तामें राजे
रावटी उसीर नीर छीरक छबीली।
लुटत फुहारे चार जल गुलाब भरि
अपार निरख थकित छवि जोवन खीली ॥
अरगजा चर्चित चंदमुखी चहुं ओर ठाडी
चतुर चमेली बेला राय बेली मालती कर सोहे।
श्वेत वसन अति सुवास वरनत छबि नंददास
निपट निकट कोटि मनमथ मोहे ॥३०॥

(१२६)

चंदन सुगंध अंग लगाय आय मेरे ग्रह हमही मग जोवत लाल तिहारो हे ।
ढीले ढीले पग धरत घाम के सताये लाल
बोलहु न आवे बैन कौन के वचन पारे हो ॥
वैठो लाल सीतल छांह श्रमहु को निवारन होय
सीतल जल जमुना को अनेक भांति पीजिये ।
नंददास प्रभु प्रिय हम तो दरस की प्यासी
ऐसी नीकी करो कृपा मोहि दरस दीजिये ॥३१॥

(१२७)

सुरंग दुरंग होत पाग कुरंग लाल केसें लोयन लोने ।
कपोल विलोलन में झलके कल कुंडल कानन कोने ॥
रंग रंगीले के अंग सबें नवरंग रंगे ऐसे पाछें भये न आगें होने ।
नंददास सखी मेरी कहां वचले काम के आये टटावक टोने ॥३२॥

(१२८)

हांके हटक हटक गाय ठठक ठठक रही
गोकुल की गली सब सांकरी ।
जारी अटारी झरोखन मोखन झांकत
दुर दुर ठोर ठोर तें परत कांकरी ॥
चंपकली कुंदकली बरखत रसभरी
तामें पुन देखियत लिखे हें आंकरी ।
नंददास प्रभु जहीं जहीं द्वारें ठाढे होत तहीं तहीं वचन मांगत
लटक लटक जात काहू सों हांकरी काहू सों नाकरी ॥३३॥

(१२९)

धरें टेढ़ी पाग टेढ़ी चंद्रिका टेढ़े त्रीभंगी लाल ।
कुंडल किरण मानों कोटि रवि उदय होत उर राजत वनमाल ॥
सांवरे वदन पीतांबर ओढे दजावत मुरली मधुर रसाल ।
नंददास वन तें व्रज आवत संग लिये व्रजवाल ॥३४॥

(१३०)

धरें वांकी पाग वांकी चंद्रिका वांके विहारीलाल ।
वांकी चाल चलत वांकी गति वांके वचन रसाल ॥
वांको तिलक वांकी भृगरेखा वांकी पहिरें गुंजमाल ।
गोवरधन अपने कर धरकें वांके भये हें गोपाल ॥
वांकी खोर सांकरी वांकी हम सूधी हे गिरिधर लाल ।
नंददास सूधें किन बोलो हे वरसाने की ग्वाल ॥३५॥

(१३१)

केलि कला कमनीय किशोर उभयरस पुंजन कुंजके नेरे ।
हास विनोद कियो वल आली केतो सुख होत है हेरे ॥
वेली के फूल प्रियाले पिय पर डारें को उपमा होत मन मेरे ।
नंददास मानों सांझ समय वगमाल तमाल कों जात वसेरे ॥३६॥

(१३२)

चंद्रमा नटवारी मानों सांझ समे वनतें व्रज़ आवत नृत्य करण ।
उडुगण मानो पहोप अंजुली अंबर अरुण वरण ॥
नंदीमुख सनमुख व्हे वामदेव मनावन विघ्न हरण ।
नंददास प्रभु गोपिन के हित वंसि धरी गिरिधरण ॥३७॥

(१३३)

देखन देत न बैरिन पलकें ।
निरखत वदन लाल गिरिधर को बीच परत मानों वज्र की सलकें ।।
बन तें जु आवत वेणु वजावत गोरज मंडित राजत अलकें ।
माथे मुकुट श्रवण मणि कुंडल ललित कपोलन झांई झलकें ।।
ऐसे मुख देखन कों सजनी कहा कियो यह पुत कमल कें ।
नंददास सब जडन की यह गति मीन मरत भायें नहिं जलकें ।।३८।।

(१३४)

ये आछी तनक कनक की दोहनी, सोहनी गढाय दे री मैया ।
जाय कहोंगो बाबा नंद सों आछे पाट की नोइ दुहन सीखोंगो गैयां ।।
मेरी दांई के ढोटा सब छोटे तेऊ सीखेरी करत बन घैया ।
नंददास कान्हहसत लोटत अरु भरत नयन जल यशुमति लेत बलैया ।।३६।।

(१३५)

घर नंदमहर के मिष ही मिष आवे गोकुल की नार ।
सुंदर वदन विन देखे कल न परत भुल्यो धाम काम आछो वदन निहार ।।
दीपक ले चली बाहिर वाट में वडो करडार फिर आय छबि सों बयार कों देत गार।
नंददास नंदलाल सों लागें हें नयन पलक की ओंट मानो वीते युग चार ।।४०।।

(१३६)

आज अटारी पर उसीर महल रचि दंपति व्यारु करत ।
खोवा मलाइ और बासोंधी पय हसि हसि घूंट भरत ।।
चहुं ओर खसखाने छूटत फुहारे फुही बींजना व्यार सीयरी मन कों हरत ।
नंददास प्रभु प्रिया प्रीतम परस्पर हसि हसि कोर लेत
सहचरी कनक डबा बीरा सों भरत ।।४१।।

(१३७)

वन ठन कहां चले ऐसी को मन भाई सांवरे से कुंवर कन्हाई ।
मुख सोहे जैसें दूज को चंदा छिप छिप देत दिखाई ।।
चले हीं जाऊ नेक ठाडे रहोगे किन एसी सीख सीखाई ।
नंददास प्रभु अब न बनेगी निकस जायगी ठकुराई ।।४२।।

(१३८)

लालन अनत रतिमान आयेहोजमेरेगेह रसीले नयन बेन तुतरात ।
अंजन अधर धरें पीक लीक सोहें तोहें काहे कों दुरात झूठी सोहें खात ।।
बातेंहु बनावत बातहु न आवत एते पर
रति के चिह्न दुरात तिरछी चितवत गात ।
नंददास प्रभु प्यारी के वचन सुन भुले नाम वही को निसर जात ।।४३।।

(१३९)

मेरे री बगर में आवत छबि सों कमल फिरावत ।
औरन सों बतरात मोतन चितवत चतुर परोसन देख देख मुसकात ।।
नयनन मनुहार करत बेनन समझावत नेह जनावत भोह चढावत ।
नंददास प्रभु सो स्नेह लोक लाज बाढ़ी केसें रे धीरज आवत ।।४४।।

(१४०)

भलें जु भलें आये मो मन भाये प्यारे रति के चिन्ह दुराये ।
सब रस दे आये अंजन लीक लाये अधरन रंग पाये कहां जाय ठगाये ।।
होंही जानत और कोई नहीं जानत घड छोल बतियां बनाय तुम लाये ।
नंददास प्रभु तुम बहु नायक हम गँवार तुम चतुर कहाये ।।४५।।

(१४१)

प्यारे पैया परन न दीनी ।
जोइ जोइ व्यथा हुती मेरे मन में छिन एक में दूर कीनी ।।
जो सोतिन मोसों अनख करत ही सोइ आनंद भीनी ।
नंददास प्रभु चतुर शिरोमणि प्रीत छाप कर लीनी ।।४६।।

(१४२)

आवरी बावरी उजरी पाग में मेल कें बांध्यो मंजुल चोटा ।
चंचल लोचन चारु मनोहर अबही गहि आन्यो हैं खंजन जोटा ।।
देखत रूप ठगोरी सी लागत नयनन सेन निमेष की ओटा ।
नंददास रतिराज कोटि वारों आज बन्यों ब्रजराज को ढोटा ।।४७।।

(१४३)

सिर सोने के सूतन सोहत पाग पेंचन ऊपर नग लगे ।
रतनारे भारे ढरारे नयनन देखत मूर्छित मेंन जगे ।।
मुख की मंजुलताई बरनी न जाई चंचलता देखि दूर भगे ।
नंददास नंदरानी छबी निरखत वार पीवत पानी जिन काहु की दृष्ट लगे ।।४८।।

(१४४)

चिबुक कूप मध्य पिय मन पर्यो अधर सुधारस आस ।
कुटिल अलक लटकत ऊपर काढन कों कंटक डार्यो बांध प्रेम के पास ।।
चंचल लोचन ऊपर ठाडे हैं अंचन कों मानो मधुर हास ।
नंददास प्रभु प्यारी छबि देखें बढिहें अधिक पियास ।।४९।।

(१४५)

जल कों गई सुघट नेह भर लाई परी है चटपटी दरस की।
इत मोहन गास उत गुरुजन त्रास
चित्र लिखी ठाढी नांम धरत सखी परस की ॥
टूटे हार फाटे चीर नयनन वहेत नीर
पनघट भई भीर सुध न करन की।
नंददास प्रभु सों ऐसी प्रीत गाढी
वाढी फेल परी चायन सरस की ॥५०॥

(१४६)

जर जाओ री लाज मेरें ऐसी कोन काज आवें
कमल नयन नीके देखन न दीनें।
वनतें आवत मारग में भेंट भई
सकुच रही इन लोगन के लीनें ॥
कोटि यतन कर रही री निहारवे कूं
अंचरा की ओट दे दे कोटि श्रम कीनें।
नंददास प्रभु प्यारी ता दिन तें मेरे नयना
उनहीं के अंग अंग रंग रस भीनें ॥५१॥

(१४७)

तेरी भोंह की मरोरन तें ललित त्रीभंगी भये
अंजन दे चितयो भये जू स्याम वाम।
तेरी मुसकान देख दामिनी सी कोंध जात
दीन ह्वे याचत प्यारी लेत राधे आधो नाम ॥

ज्यों ज्यों नचायो चाहो तैसे हरि नाचत वल
अव तो मया कीजे चलिये निकुंज धाम।
नंददास प्रभु वोलो तो वुलाय लाऊं
उनको तो कलप बीतें तेरी घरी याम ॥५२॥

(१४८)

स्याम सलूने गात हें काहु को ढोटा।
आई हूं देख खिरक मुख ठाढो न कछू कहेन की बात ॥
कमल फिरावत नयन नचावत मोतन मुर मुसकात।
छबि के वल जग जीति गर्व भर्यो मेन मानों इतरात ॥
नख सिख रूप अनूपरूप छबि कवि पें वरन्यो न जात।
नंददास चात्रक की चोंच पुट सब घन कैसे समात ॥५३॥

(१४९)

तेरे री नव जोवन के अंग रंग सें लागत परम सुहाए।
जगमग जगमग होत मनो मृदु कनक डंड पर ललित नग लगाये ॥
तामें तू कुंवरि कर उरजन की प्रीति निरख यातें मो मन भाये।
नंददास प्रभु प्यारी के अंतर ठोर दे वाहिर निकस आये ॥५४॥

(१५०)

बेसर कोन की अति नीकी।
होड परी प्रीतम अरु प्यारी अपने अपने जी की ॥
न्याय पर्यो ललिता के आगें कोन सरस कोन फीकी।
नंददास बिलग जिन मानों कछु एक सरस लली की ॥५५॥

(१५१)

बनी आज श्वेत पाग लाल सिर चलो सखी देखन जाय ।
उसीर महल में कुसुम रावटी छिरक्यो गुलाब नीर नैनन को फल पाय ॥
मंजुल चोटा ता मधि बांध्यो बने हे मदन रूप कदम की छांय ।
नंददासप्रभु प्रियाप्रीतम परस्पर कबहुक करत केलि
कबहुक हसि ढर जाय ॥५६॥

(१५२)

रुचिर चित्रसारी सघन कुंज के मधि कुसुम रावटी राजे ।
चंदन के चहुं ओर छवि छाय रही
फुलन के आभूखन सब फुलन सिंगार सब साजे ॥
सीयरे त्हेखाने में त्रिविध समीर सीयरी
चंदन के बाग मधि चंदन महल छाजे ।
नंददास प्रिया प्रितम नवल जोरी
विधना रची बनाय श्री व्रजराज विराजे ॥५७॥

(१५३)

अद्भुत बाग बन्यो नव निकुंज मध्य
विविध पक्षी तहां गुंजार करत री ।
उसीर महल रचि बैठे प्रिया प्रितम
चहुं ओर सहचरी होदन भरत री ॥
छूटत फुहारे फुही मेघ ज्यों बरखत
उमगि घटा नीकी मदन अनुसरत री ।
कदली खंभ लपटचो श्याम तमाल सों
नंददास प्रभु कोटि मेन परहरत री ॥५८॥

(१५४)

चढ वढ विडर गई अंग अंग मानवेली तेरें सयानी ।
हृदय आलवाल मध्य प्रकट भई री आली
प्रीति पाली नीके कर छिन छिन रूसबो भयो पानी ।।
कोन कोन अंगन तें निरवारो री आली
अलक तिलक नयन बेन भ्रोंह सो लपटानी ।
नंददास प्रभु प्यारी दूती के वचन सुन
छबीली राधे मंद मंद मुर मुसकानी ।।५९।।

(१५५)

ये मन मान मेरो कह्यो काहे को रुसानी
प्यारे स्याम सों सुधो क्यों न चितवे री मोतन ।
जे जे हुती सोंती तेरी तिनहु कों जीत होति सुघराई क्यों न
करत बडहंसि तेरी होति तू कर विचार नायका क्यों न होत तू नट ।।
जिन आडन पट दीजे री मेरी आली काफी के बचन सुनत
ललित कहै रस लैये जु कैसे के रिझैये ईन को मन ।
अरी धन ह्वे जु आशावरि रहिये तेरे उन आगे कैसे दिन भरो री
कहेत नंददास देशाख कहत बचन सुन कान्हर सो आय पायन
परे कर आभरन उठि अंक मिल माल वन ठन ।।६०।।

(१५६)

तुम पहिलें तो देखो आय मानिनी की शोभा लाल
पाछें तो मनाय लीजे प्यारे हो गोविंदा ।
कर पर धरे कपोल रहे री नैनन मूंद
कमल बिछाय मानों सोयो सुखचंदा ।।

खिपरी भौंह तापें भ्रमर बैठे अरबरात
इंदुतर आयो मकरंद अरविंदा।
नंददास प्रभु ऐसी काहे को रुसैये बल
जाको मुख देखे तें मिटत दुख द्वंदा ॥६१॥

(१५७)

तेरे री मनावे तें मान नीको लागत
जोलों रही आली तो लों लाल ले आऊं।
तेरी तो रुखाई प्यारी' ओर को हसनों
मोर मुख सोरेहू कला को पून्यो चंद वल जाऊं ॥
चल न सकत इत पग न परत उत
ऐसी शोभा फिर पाऊं कें न पाऊं।
नंददास द्वय दिश कठिन भई
देखवो करूं केधों लाल ले आऊं ॥६२॥

(१५८)

आपन चलिये लालन कीजिये न लाज।
मोसी जो तुम कोटिक पठावो प्यारी न मानत आज ॥
हों तो तिहारी आज्ञाकारी मोसों कहा कहेत महाराज।
नंददास प्रभु वडरे कहे गये आप काज महाकाज ॥६३॥

(१५९)

तूं न मानन देत आली री मन तेरो मानवे को करत।
पिय की आरत देख मेरे जिय दया होत तेरी दृष्टि देख देख डरत ॥
मो सों कहत कहा मेरो न दोष कछू
निपट हठीली धाय क्यों अंक भरत।

नंददास प्रभु दूती के वचन सुन
ऐसे अंग ढर्यो जेसे आंच के लगे ते राग ढरत ॥६४॥

(१६०)

काहे कुं तुम प्यारे सषी भेष कीनो ।
भूपण वसन साजे वीना कर लीनो ॥
मोतिन मांग गुही तुम कैसे हीं प्यारे ।
हम नहिं जाने पहचाने कोन के दुलारे ॥
रूंसवे को नेम नित्य प्यारी तुम लीनो ।
ताही के कारण हम सपी भेष कीनो ॥
सव सखी दुर दुर देखी कुंजन की गलियां ।
नंददास प्रभु प्यारे मान लीनी रलियां ॥६५॥

(१६१)

मान न घट्यो आली तेरो घट जु गई सब रेन ।
बोलन लागे तमचुर ठोर ठोर तू अजहूं न बोली री पिक बेन ॥
कमल कली विकसी तूं न नेक हसी कौन टेव परी मृगशावक नयन ।
नंददास प्रभु को नेह देख हांसी आवत वे बैठे हें रचि रचि सेन ॥६६॥

(१६२)

रेन तो घटन्ती जाती सुनरी सयानी बातें
मेरो कह्यो माने नाहीं तोहि न सुहात री ।
सुख के सुहाग भरी ऐंसी कैसी टेव परी
घटत ना मान तेरो दया न आत री ॥
जाके दरश कों सब जग तरसत
सोई तेरे रूप विन रह्यो न जात री ।

नंददास नंदलाल बैठे अतिशय बिहाल
मुरली की ध्वनि मुन तेरो नाम गात री ॥६७॥

(१६३)

प्यारी पग हरें हरें धर।
जैसें तेरे नूपुर न बाजही जागत ब्रज को लोग
नाहीं सुनायवे योग हाहा री हठीली नेक मेरो कह्यो कर ॥
जो लों वन वीथिन मांहि सघन कुंज की परछांहि
तो लों मुख ढांप चल कुंवर रसिक वर।
नंददास प्रभु प्यारी छिनहु न होय न्यारी
शरद उजियारी जामेंजेहोंकहुंरर ॥६८॥

(१६४)

आज आये मेरे धाम श्याम माई नागर नंद किशोर।
चंदा रे तू थिर ह्वो रहियो होंन न पावे भोर ॥
दादुर चकोर पपैया बोलो और बोलो वन के सव मोर।
नंददास प्रभु वे जिन बोलो वारो तमचर चोर ॥६९॥

(१६५)

चांपत चरण मोहनलाल।
पलका पोढी कुंवरि राधे सुंदरी नव वाल ॥
कवहुं कर गहि नयन मिलवत कवहुं छुवावत भाल।
नंददास प्रभु छवि निहारत प्रीत के प्रतिपाल ॥७०॥

(१६६)

पिय प्यारी के चरन पलोटत ।
ललितादिक वीजना ले आई ताही देख के घूंघट ओटत ।।
चंदन लेप करत दोउ अंगन आलिगन अधरन रस घोटत ।
नंददास स्याम स्यामा दोऊ पोढे नव निकुंज कालिंदी के तट ।।७१।।

(१६७)

कुसुम सेज पोढे दंपति करत हे रस वतियां ।
त्रिविध समीर सीयरी उसीर रावटी मध
खसखाने सींचे सुभग जुडावत हे पिय छतियां ।।
कपोल सों कपोल दीये भुज सों भुज भींढे
कुच उतंग पिय राजत हे भतियां ।
नंददास प्रभु कनक पर्यंक पर सव सुख विलस
केलि करत मोहन एक गत मतियां ।।७२।।

(१६८)

दंपति पोढेई पोढे रसवतियां करन लागे दोउ नयना लाग गये ।
सेज ऊजरी चंदा हु ते निर्मल तापर कमल छये ।।
फूकत दृग वृषभान नंदिनी झपत खुलत मुरझात नये ।
मानों कमल मध्य अलि सुत बैठे सांझ समय मानो सकुच गये ।।
आलस जान आप संग पोढी पिय हिये उर लाय लये ।
नंददास प्रभु मिली श्याम तमाल ढिंग कनक लता उल्हये ।।७३।।

(१६९)

चलिये कुँवर कान्ह सखी वेष कीजे ।
देखो चाहो लाडिली कों अबही देख लीजे ।।

ठाडी हें मंजन किये आंगन अपनें ।
देखि न सुनि न एसी संपति सपनें ॥
वडे वडे वार पाछें छूटे अति छाजें ।
मानहुं मकरध्वज चमर विराजें ॥
वदन सलिल कण जगमग जोती ।
मानों इंदु सुधा तामें अमीमय मोती ॥
आधो मोती हार चारु उर रह्यो लसी ।
कनक लता तें मानों उदय होत ससी ॥
पुन सुरसरी सम मोतिन के हारा ।
रोमावलि मिली मानों यमुना की धारा ॥
पीक झलकन सौहें सरस्वती ऐनी ।
परम पावन देखी मदन त्रवेनी ॥
अंचल उडन छवि कहिये कवन ।
रूप दीप शिखा मानों परसी पवन ॥
शिव मोहे जिन वह मोहनी जे कोई ।
प्यारी के पायंन आज आन परें सोई॥
नंददास और छवि कहां लों कहीजे ।
देखे ही बने हो लाल चल्योंहि चहीजे ॥७४॥

(१७०)

वाके तो नयन मने चाहें पें वे प्यारी नहीं मानत ।
दृगन ते रस की हासी ओहें करत उदासी वेनन आन आन वानत ॥
वो तो तिहारे रस रूप की अधीनताई दरपण ले दरवराय आपवश आनत ।
नंददास प्रभु जाके तन भेद भयो टूटेगो मानगढयों जानत ॥७५॥

(१७१)

दोरी दोरी आवत मोहि मनावत दाम खरच कछु मोल लई री।
अचरा पसार के मोहि खिजावत हों तेरे वावा की चेरी भई री ॥
जा री जा सखी भवन आपनें लख बातन की एक कही री।
नंददास वे क्यों नहीं आवत उनके पायन कछु मेंदी दई री ॥७६॥

(१७२)

पोढे माई प्रीतम प्यारी संग।
रंग महल की ललित तिबारी परदा परे सुरंग ॥
जगमगात पावक अंगीठी धरी रति रस रंग।
नंददास प्रभु प्यारी जीत हे मुदित अनंग ॥७७॥

(१७३)

बिलसत रंग महल रंग लाल।
रस रस की करत वतियां संग पोढी वाल ॥
खचित परदा परे चहुं दिश मुंदे झरोखा जाल।
जगमगात पावक अंगीठी गान तान रसाल ॥
नवल नारी निहारी प्रीतम व्हे रही उर माल।
नंददास प्रभु युगल छबि पर डारों सर्वस्व वार ॥७८॥

(१७४)

माई री लाल आए री मेरे ही महल तन मन धन सब वारों।
हों बल गई सखी आज की आवन पर पलकन सों मग झारों ॥
अति सुकुमार पद करन सरी कंकर गुन सब टारों।
नंददास प्रभु नंद नंदन सों ऐसी प्रीत नित धारों ॥७९॥

(१७५)

लाल संग रितुमानी में जानी कहे देत नैना रंग भोंए।
चंचल अंचल में न समात ईतरात रूप उदधि मानो मीन महावर धोए ।।
पलक पीक झगमगात द्रग मानिक मानों जराय लीये प्रेम पाट पोए।
नंददास प्रभु सुख के लोभ लालचि जानत हों निश नेक न सोए ।।८०।।

(१७६)

रुखरी मधुवन की मोहन संग निस दिन रहत खरी।
जबतें परस भयो मोहन को तबतें रहेत हरी ।।
सीतल जल जमुना को सींचत प्रफुलित द्रुम लता सगरी।
नंददास प्रभु के शरन जाए तें जीवन मुक्ति करी ।।८१।।

(१७७)

जो तुं दरपन ले निरख निरख हसत सो तो में जानी री माई।
के तेरे ईन रंगीलें नेंनन प्राण प्यारे कि माधुरी मुरत ताकी बझांई ।।
हों तो रही रीझ रीझ मो पें कछु कहे न आवे रुप को लोंनाई।
नंददास प्रभु की प्यारी अब कछु मोहि दिजींये जु देखो धों केसी बन आई ।।८२।

(१७८)

हों तो वार डारी तन मन धन लालन पर।
लाल सिर पाग ढरक रही रतन पेंच सिर सुभग संवारी ।।
भाल विशाल तिलक गोरोचन अलक सोहत घुघरारी।
नंददास प्रभु की छबि निरखत अखियां पलक न परत संवारी ।।८३।।

(१७९)

धन धन प्रभावती जिन जाई ग्रैसी बेटी
धन धन हो वृपभान पीता।
सुर धुननि की वानी सो तो तिहुं लोक जानी
उपज परी मानो कनक लता ॥
चरन पर गंगा वारों मुख पर शशि वारों
ग्रैसी त्रिभुवन में नाहिंन बनिता।
नंददास स्याम वस करवे को राधा जु के
तोलें नहिं सिंधु सुता ॥८४॥

(१८०)

कौन दान दानी को।
करन लगे नई रीति ग्रनोखे दुध दहीं को मही को ग्रजहु हम जानी को ॥
करत हो विचित्र चाल सुवल तोक पें चखाय काहु सों
कहत गाढ़ो जमायो काहु सों कहत पानी को।
नंददास ग्रासपास लटक रही कनक बेलि
मोंहन की ग्रमेठन में सबही ग्ररुझानी को ॥८५॥

(१८१)

मोहे बोलबो न चालबो बुलायवो न बोलवो
जसोदा जु तिहारे कान्ह ऐसी गारी दीनी।
दधि में लगायो दांन दिये बिन न देत जान
ऐसी ग्रटपटी बात तिहारे कान्ह कीनी ॥

खोर में मरोरी बांह मटुकी झटक लीनी
जानों कहा कीनी पाट इंडुरी नवीनी।
अकथ कहानी वरजो न मानी ब्रजपति
रानी में तिहारो कान कीनी ॥८६॥

(१८२)

लाल तुम मांगत दान कैसो।
छांडो बाट हम जेहें मोहन रोकत हों मग ऐसो ॥
दूध दही को दान सुन्यो कहीं देहो कहा कहो जु तैसी।
नंददास प्रभु गिरिधर सुत क्यों बोलत बोल अनेसी ॥८७॥

(१८३)

अरे तेरी याही में बन आई।
यह मारग तुम रोके रहेत हो छीन छीन दधि खाई ॥
तुम जानत हो घेरी हमने रही अपनी समदाई।
नंददास प्रभु तनक छाछ में निकस जात ठकुराई ॥८८॥

'ख' प्रति से प्राप्त पद

(१८४)

योगी रे बसो तो बसो गोबर्द्धन नगर बसो तो मथुरा धाम।
सरिता बसो तो बसो यमुना तट रसना रटो तो जपो कृष्ण नाम ॥
नंद के नंदन पति है हमारे पुष्ट लीला मारग है हे घनश्याम।
नंददास यदुनाथ आस एक चरण कमल लह्यो विश्राम ॥१॥

(१८५)

एरी तेरी सेज की मुसक्यान मोहन मोह लीनो ।
जाको यश रटत सुनि सजनी सो तेरे आधीनो ।।
और की संवार के घर किये रहत है आपुनपो तज दीनो ।
नंददास वाको चितवन में टोना सो कछु कीनो ।।२।।

(१८६)

तू तो नेक कान दे सुंदर बांसुरी में वजावे तुव नाम ।
पुनि पुनि राधे राधे प्राणेश्वरी वह गावै घनश्याम ।।
तुव तन परसी जो पन जात ताकों उठ परिरंभन सुख को धाम ।
नंददास एसे पिय सों क्यों रूठिएरी वल पूरिए मधुरिपु काम ।।३।।

(१८७)

आज मेरे धाम आए री नागर नंदकिशोर ।
धन दिवस धन रात री सजनी धन भाग सखी मोर ।।
मंगल गावो चौक पुरावो वंदनवार धावो पौर ।
नंददास प्रभु संग रस वस कर जागत करहूं भोर ।।४।।

(१८८)

एरी इन बांसुरिया माई मेरो सरवस चोरायो
हरि तो चोरायो हतो अकेलो चीर ।
अरुन बसन अरु नयन श्रवण सुख लोक लाज कुल धरम धीर ।।
अधर सुधा सर्व्वस जु हमारो ताहे निधरक पीवत रह गंभीर ।
नंददास प्रभु को हियो कहा कहूं यह प्रेम बीर ।।५।।

(१८६)

राम कृष्ण कहिए निशि भोर।
वे अवधेश धनुष धरे वे व्रज जीवन माखन चोर ।।
उनके छत्र चमर सिंहासन भरत शत्रुहन लक्ष्मन जोर।
उनके लकुट मुकट पीताम्बर गायन के संग नंदकिशोर ।।
उन सागर में शिला तराई उन राख्यो गिरधर नख कोर।
नंददास प्रभु प्रपंच तजि भजिये जैसे निरत चन्द्रु चकोर ।।६।।

(१६०)

भक्त पर करि कृपा यमुना ऐसी।
छांड़ि निज धाम विश्राम भूतल कियो न प्रकट लीला दिखाई जो तैसी ।।
परम परमार्थ करण है पवनि को रूप अद्‌भुत देत आप जैसी।
नंददास जो जानि दृढ़ चरण गहै एक रसना कहा कहूं वैसी ।।७।।

(१६१)

नेह कारण यमुना प्रथम आई।
भक्त की चित्त वृत्ति सब जानहीं ताहिते अति ही आतुर जो धाई ।।
जैसी जाके मन हती मन इच्छा ताहि तैसी साध जो पुजाई।
नंददास प्रभु नाथ ताहि पर रीझत यमुना जू के गुण जो गाई ।।८।।

(१६२)

यमुने यमुने यमुने जो गावो।
शेष सहस्र मुख गावत निश दिन पार नहीं पावत ताहि पावो ।।
सकल सुख देनहार ताते करो उच्चार कहत हों बार बार भूलि जिनि जावो।
नंददास की आशा यमुना पूरण करी ताते कहूं घरी घरी चित्त लावो ।।९।।

(१९३)

भाग्य सौभाग्य यमुना जो दे री।
बात लौकिक तजे पुष्टि यमुना भजे लाल गिरिधरण को ताहि वर मिले री ॥
भगवदी संग करि बात उनकी ले सदा सानिद्धच रहे केलि मे री।
नंददास जो जाहि वल्लभ कृपा करे ताके यमुने सदा वश जो रहे री ॥१०॥

(१९४)

जगावति अपने सुत को रानी।
उठो मेरे लाल मनोहर सुंदर कहि कहि मधुरी वानी ॥
माखन मिश्री और मिठाई दूध मलाई आनी।
छगन मगन तुम करहु कलेऊ मेरे सब सुखदानी ॥
जननी-वचन सुनि तुरत उठे हरि कहत बात तुतरानी।
नंददास कीन्हों बलिहारी यशुमति मन हर्षानी ॥११॥

(१९५)

यमुना पुलिन सुभग वृंदावन नवल लाल गोवर्द्धनधारी।
नवल निकुंज नवल कुसुमित दल नवल नवल वृषभानु दुलारी ॥
नवल हास नव नव छवि क्रीड़त नवल विलास करत सुखकारी।
नवल श्री विट्ठलनाथ कृपाबल नंददास निरखत बलिहारी ॥१२॥

(१९६)

चंचल ले चली री चितचोर।
मोहन को मन यों वश कर लियो ज्यों चकरी संग डोर ॥
जो लों न देखत तव मूर्ति तो लों पलक न लागत निमिष न ओर।
नंददास प्रभु प्रेम मगन भये नागर नंदकिशोर ॥१३॥

(१९७)

प्रात समय श्री वल्लभ सुत को पुण्य पवित्र विमल यश गाऊं।
सुंदर शुभग वदन गिरिधर को निरखि निरखि दृग दृगन सिराऊं।
मोहन मधुर वचन श्रीमुख के श्रवण सुनि सुनि हृदय बसाऊं।
तन मन प्राण निवेदि वेद विधि यह अपुनपो हों सुभल कराऊं॥
रहों सदा चरणन के आगे महाप्रसाद उच्छिष्ट पाऊं।
नंददास यह मागत हों श्री वल्लभकुल को दास कहाऊं॥१४॥

(१९८)

आलस उनीदे नयन लाल तिहारे कहां तुम रैन बिताए।
पीक कपोल देखियत है प्रिय अधरनि अंजन लखाए॥
जावक भाल उर बिन गुण माल हृदय नख चिन्ह दिखाए।
नंददास प्रभु बोल निबाहे भोर होत उठि धाए॥१५॥

(१९९)

नंदराय जू के द्वारे भोरहि उठि पहाउ।
निरवधि आनंद सूरति निरखि नैन सिराउ॥
उज्वल तन थोरी थोंदि राता अम्बर सोहे।
अरुण घनतें निकसि पूरण चंद की छवि को है॥
ब्रह्म घनीभूत पूत कर अंगुरिया लायो।
मंद मंद चलन सिखवति लोचन फल पायो॥
रिद्धि सिद्धि निद्धि सहित रमा टहल करति फिरे।
अर्थ धर्म काम मोक्ष भीख भिखारिन परे॥
नंद जू कहत कहा मागत हों टेरि सुनाउ।
नंददास नंदलाल को नेकु उत्तीरन पाउ॥१६॥

'अ' प्रति से प्राप्त पद

(२००)

बोली मदन गुपाल लाल सुनि मानिनी ।
जिनि करि इतौ सयान अहो सुनि मानिनी ।
आयो सरस वसंत समय । सु० । काहू को रहिहै न मान । अहो ॥
उतर घरनि कें घर चल्यौ । सु० । सुंदर दिनमनि पीय । अहो ॥
छांडियै कछु इक मान जानि । सु० । दछिन वि×छन तीय । अहो ॥
मलय पवन की आजु ही । सु० । ह्वै गई ताती वासु । अहो ॥
जनु दक्षिण दिस विरहिनी । सु० । लीनी विरह उसासु । अहो ॥
वह सुनि कानन कांन दै । सु० । केकी की कुहकानि । अहो ॥
आनक मनों रितुराज कौ । सु० । सिर पर वाज्यौ आनि । अहो ॥
जिहिं डर वृल्लिन मान छांडि । सु० । उलहीं है आनकपटि । अहो ॥
नाइक द्रुमनि के कंठ सों । सु० । कैसी गई है लपटि । अहो ॥
काम भई रजनी भई । सु० । गई रवि मंडल छाइ । अहो ॥
थिर चर तिय सव रहसि कें । सु० । मिली पियनि सों जाइ । अहो ॥
ठोर ठोर मिलि मधुप पुंज । सु० । गुंजत सौरभ छाइ । अहो ॥
मनों विहरति छवि मधु वधू । सु० । नूपुर वाज पाइ । अहो ॥
मिलि कूजहिं कल कोकिला । सु० । कोमल कंठ सुजात । अहो ॥
अटनि चढी मानों मधु वधु । सु० । करति परसपर वात । अहो ॥
और विहंगम रंग भरे । सु० । करत जु कानन रौरि । अहो ॥
मनों मनमथ कुंजर छुऔ । सु० । पर्‍यौ मधु नगरी सोर । अहो ॥
त्रिगुन पवन चंचल तुरंग । सु० । चढ्यौ रतिराज विदेह । अहो ॥
उडी जु पोहप पराग तहां । सु० । वढी मनो षुर षेह । अहो ॥
षग वंदीजन वदत विरद । सु० । मदन जहां सिरमौर । अहो ॥

निनि मै कपोती कहनि यहै। सु०। एकै तू नहिं और। अहो॥
कुसुम सरासन कर धरै। सु०। विषम विष भरे बांन। अहो॥
को सहिहै तीछन परे। सु०। चडे चंद पर सांन। अहो॥
वृंदावन मिलि रम्य भयौ। सु०। नव कुसुमाकर चारु। अहो॥
ज्यौं कुच मंडल जुवति कें। सु०। मंडित मंजुल हार। अहो॥
तरुनि मुकुट मनि बाल तू। सु०। लाल रसिक मनि राय। अहो॥
कीजै सफल वसंत समैं। सु०। पहलैं पिय सों जाइ। अहो॥
मिलहु न लाल गुपाल कौं। सु०। छुवत तिहारे पाइ। अहो॥
मांन छांडि मोहन मिली। नंददास वलि जाइ॥१॥

(२०१)

बराजोरी होरी मचावै री।
अरी मैरी चूंनरि झटके सावरो बराजोरी॥
ग चा (?) क्रप्न कन्हैया कर गहि लींनी जु व ना अै दस्त चलावे।
सोहनी सुरति मोहनी मुरति रंग भरी धुम मचावै।
नंददास प्रभु तुम वह नायक हिलिमिलि कंठ लगावै री॥२॥

'इ' प्रति से प्राप्त पद

(२०२)

सखि नव नंद नंदन रुचिर रूप। नवल नागरी गुन अनूप।
नव नेह नइ रु चि न विलास। नवरूप मो ह र मंद हास।
नव पीत वसन पहरे त्रिभंग। नीलांवर सारी गौर अंग।
नव पुस्पित वल्लि कुंज धाम। नव वृंदावन सुष अभिराम।

नव नूत मंजरी अति विलास (विसाल ?) नव पल्लव दल मानो प्रवाल।
नव कोकिल कूजति अति सुहाइ। तहां नव मलया तिविधि वाइ।
तहां नव मंडली सी आसपास। तहां नव सुप निरषत नंददास ॥१॥

'ई' प्रति से प्राप्त पद

(२०३)

कन्हैया माई पनघट वाट रोके रहतु।
कवहूं धाई मेरो अंचल गहें कवही नेन जोरि आंन की आंन कहतु।
सखिय मनाय लाई आपुही आपु आई एतो हठ सठ मेरो कोंन धो सहेगो।
नंददास क्यों समाय एक गांव को वसिवो सखी एसोधौ कैसें निबहेगो ॥१॥

(२०४)

नाचत रस रंग भरी निज भुज हरि अंग धरी
तरनि तनया तीर बनी गोप बधू मंडली।
कूंजित मंजीर नूपुर कटि तटि मनि मेखला
कर वलय मध्य बाजत धुनि मुरलिका भली ॥
श्रमित स्वेद विंदुका मुखारविंद पर विराजे
सिथिल कुसुम ग्रंथित कंचन विथुरीत अलकावली।
नंददास रास विलास रिझवत मुख मधुर हास
गिरिवरधर रूप देखि मनसा चली ॥२॥

(२०५)

आली री मंद मंद मुरली धुनि बाजत नृत्यत कुंवर कन्हैया।
तेसीए सरद चांदनी निर्मल तेसी एक वनी है दुल्हैया ॥

चंदन की खोर किये उर बनमाल हिये कंचन की बेलि मानौं उल्हैया ।
नंददास प्रभु की छवि नि(र)खन हूं करत बल्हैया ॥३॥

(२०६)

रास में रसिक दोऊ नांचत आनंद भरि
तताथिना तत ततथेई थेई गति बोले ।
अंग अंग विचित्र किए लाल काछनी सुदेस
कुंडल झलकत कपोल सीस मुकट डोले ॥
जुवति जूथ निर्त्त करत स्याम ग्रीव भुजा धरे
स्यामा गीत रसनांहि सम तोले ।
नंददास पिय प्यारी की छवि पर
त्रिभुवन की सोभा वारों बिनु मोले ॥४॥

(२०७)

वृंदावन रास रच्यो बनवारी ।
वेणु वीणा नुपुर धुनि मिलवत बजत एक कर तारी ॥
बनि ठनि रसिक रसाल लाल निधि मांथे मुकुट संवारी ।
श्रवणनि कुंडल उर पीतांबर गहे रे माल मुकता री ॥
षोड(स) साजि सिंगार आभूषन नवल राधिका प्यारी ।
लेति उरप धुल लेति सुलप गति घुघरुन की छवि न्यारी ॥
सुख सागर नागर अति दंपति भक्तन के हितकारी ।
बिहसि बिहसि विहरत रंग भीने निरखि मदन गयो वारी ॥
लीला ललित अपार लाल की बरनें को कवि हारी ।
सिंघासन आरति करि बैठे नंददास बलिहारी ॥५॥

(२०८)

बरसाने ते दौरि नारि एक नंद भवन में आई जू ।
आजु सखी मंगल में मंगल कीरति कन्या जाई जू ।।
सुनि जसुमति मन हरप भयो अति बोलि लई व्रजबाला जू ।
मुक्ता मणिमाला भूपण वर मढई साज रसाला जू ।।
चली गज गामिनि साथन हाथन कंचन थार सुहाये जू ।
डह डहें मुख छवि छाजत राजत उपमा अधिक विराजे जू ।।
हार सुढार उरन पर सोहत निरखि सची छवि लाजे जू ।।
××××××××× लाजन कोटिक मेंना जू ।
कंजन पर खेलत मानों खंजन अंजन रंजित नेंना जू ।।
कुंडल मंडित नेंन अतिराजत उपमा अधिक विराजे जू ।
हार सुढार उरन पर सोहत निरखि सची छवि लाजे जू ।।
गावत गीत करत जग पावन भामिनि मंदिर आई जू ।
आनंद के आंगन मानों आनंद सानंद बटत वधाई जू ।।
देखि मुदित वृषभान भये अति भेंट रोच सो लीनी जू ।
गदगद कंठ सवनि सों बोलत वीथिनि पावन कीनी जू ।।
कीरति ढिग निरखि सुठि कन्या धन्या अधिक अपारा जू ।
कौतिक में कौतिक रस भीने बरखत सीसन धारा जू ।।
सव जग धाम फुनि जाने सो सुधाम जाने जू ।
नंददास सुख को सुखसागर प्रकटे हें बरसाने जू ।।६।।

(२०९)

चलिहें भरत गिरिधरन लाल कों बनि बनि अनगन गोपी ।
उवटि उवटनो नवल चपल तन मनहु दामिनी ओपी ।।
पहिरे विविध वसन संग भूषण करनि कनक पिचकारी ।
चंचल वंक वडे डी अँषियां मनहु मृगी गतवारी ।।

छिरकत चली गली गोकुल की कहि न परे छवि भारी ।
उडि उडि केसर बूका वंदन रंगि गये अटा अटारी ॥
सखनि सहित सजि सांवरे सुंदर अति आतुर के आये ।
मानों अंबुज वनवास विवस ह्वै अलि लंपट उठि धाये ॥
पहिले कान्ह कुवर मनमोहन पिचका उन पर मेली ।
मानहु सोम सुधा करि सींची नवल प्रेम की वेली ॥
दुरि मुरि भरनि बचावनि छवि सों आवनि उलटनि सोहें ।
घुमड्यो अवीर गुलाल गगन में जो देखे सो मोहें ॥
हरि कर पिचका निरखि त्रियन के नेंना छवि सों ढराहीं ।
खंजन से उडि चले मनहुं पुनि ढरकि मीन ह्वै जाहीं ॥
पिय के अंग त्रियनि के लोचन लपटे छवि लोभा ।
मानहु हरि कमलनि करि पूजे भई हे अनोपम सोभा ॥
विच विच छूटत कटाछ कुटिल सर उचटि उलटि कहुं लागी ।
मुरछित पर्‍यो तहां मेन महाभट रति भुज भरि ले भागी ॥
ओर कहां लों कहि आवे छवि जो कछु बढी तिहि काला ।
नंददास प्रभु सब सुख बरषत ब्रजजन पर नंदलाला ॥७॥

(२१०)

रथ चढि चलत श्री गिरधर लाल ।
वाम भाग कीरत जू की कन्या सोहत परम रसाल ॥
रचि पचि रचि रच्यो विश्वकर्मा तुरंग अर्द्धरंग भाल ।
ता रथ कों खेचति ब्रज सुंदरी चल नव नव गति चाल ॥
अपने घर पधराइ भोग धरि इहि विधि सब ब्रज बाल ।
नंददास आरती उतारत निरखत होत निहाल ॥८॥

(२११)

अखिया मेरी लालन संग अकी ।
वह मूरति मो चित में चुभि रही छूटत नहीं मो झटकी ॥
भोह मरोरि डारि पिक वानी पिय हिय एसो घटकी ।
नंददास प्रभु की प्यारी लाज तजि डरी चलि निकट की ॥६॥

(२१२)

घोरि घन मन मोहें सोहें भूमि हरियारी
बरषे थोरे थोरे बूदे रंग भरी ।
रंग भरी बूदन में रंग भरे मोर मधुर सुर गावे ।
गुंजे अलिगन कूजे कोकिल मूर्छे मदन जगावे ।
तहां रच्यो नंद नंदन हिंडोरो मजु कुंज के धोरे ।
हेम को रुचिर हिडोरो जाहि नव नग लागे ।
वलिक वरनि न जाइ देखि सवे अनुरागे ।

छंद

देखि सबे अनुरागे नव नग लागे अरु उज्वल गज मोती ।
ससि ते सहज गुण एक एक लगि रहे जगमग जोती ।
ऊपर सुरंग वितान विराजे मानो उनयो घन प्रेम को ।
वलि न दे परमानंद बरषे रुचिर हिडोरो×म को ॥
झूले मदन गोपाल कहि न परति तन सोभा ।
संग बनि वर बाल जानो रूप की गोभा ।
रूप की गोभा अद्भुत सोभा कहत नहीं कछु आवे ।
ठोर ठोर प्रतिबिंब झलमले चखन को चोध जनावे ॥
जुगल किसोर माई सुरंग हिंडोरो निरखि जन फूले ।
वलि नंद संग वनी वृपभान वाला मदन गोपाल झूले ॥

सोहे झूल की फूल में जनमें नन झलके।
अरुझे नेंन कटाछें अरु कुंडल की ललकें ॥
कुंडल झलकें अरुझी अलकें मंद हंसनि चित चोरे।
रंगनि लपटे अरु सुप दपटे परिमल पवन झकोरे।
छवीली दूरनि हंसि चूरत परस्पर कोटि मदन मन मोहे।
वलि नंददास जीवन व्रज की दोऊ झूल फूल में सोहें ॥१०॥

(२१३)

प्यारी झूलति नवल लाल के संग। ध्रुव।
सावन सुहावन हरित भूमि वारि नर आनंद।
विचित्र भांति सों कामिनी वहु किए सिंगार सुछंद।
वनि केलि करती कंत मन की मुरों अलकें फंद।
सारी कसूंभी सवुज अंगिया लाल तोई वंद।
ताहां उमगी घहराय वरखे रमे दादुर मोर।
शीतल मंद पवन झकोरें पंछी करें अति सोर ॥
चंद वदनी हुलसि गावे नील मधुर सुर घोर।
श्याम वादर दामिनी दुति श्याम श्यामा जोर ॥
चहुं ओर सखी मिलि जूथनि अपने अपने सुभाय।
हंसति किलकति मान मोहति लेति तान बनाय ॥
कर कमल तारी देति झुकि मुरि उमगि चोप झुलाय।
गहि लपकि लागति कंठ भामिनि लेति पिय उर लाय ॥
अगर चंदन व(न्यो) (हिं)डोरो लखि रह्यो चकि मेन।
रचि हेरत न हिंडोर पाइन कर चढन सुख देन ॥
नंददास कहा कहूं उपाय ×× अनंग की सेन।
प्रभु की लीला सोइ (जाने) निरमल नेंन ॥११॥

(२१४)

हिंडोरे झूले नवल लाल गिरिधारी ।
बेठी अंस पर भुज दे अरु वृषभान दुलारी ॥
कंचन के द्वे खंभ मनोहर डांडी सरस सिंगारी ।
बिविध भांत के बने फोंदना विद्रुम भोमि संवारी ॥
करत विलास हास मन भावन रसिक राधिका प्यारी ।
दरपन में मुख निरखि मनोहर दे(त परस्पर गा)री ॥
ललितादिक × × × गावति नारी सुढारी ।
(यह) छबि निरखि निरखि सचु पावति नंददास बलिहारी ॥१२॥

(२१५)

आजु झूली सुरंग हिंडोरे प्यारी पिय के संग ।
गौर तन बनि सुरंग चूनरी पीत बसन सोहें सुभग सांवरे अंग ॥
तैसेई बादर ऊलि आए तैसोई गावत ललितादिक भीने रंग ।
नंददास प्रभु प्यारी सी छबि पर वारों कोटि अनंग ॥१३॥

(२१६)

रंगीले हिंडोरे झूले रंग भरे अति ।
नंद कुवर वृषभांन कुवरि बरषि छबीली भांति झूली रति पति ।
श्याम बरन पिय गौर बरन त्रिय झलमलाति झाई अंग अंग अति ।
छिनु छिनु बाढे छबि कोउ केसें कहें कवि तिनके छिलन ले किये हेंमरति ।
गुण रूप छां बाढी तेई ढिग ढिग ठाढी गावति झुलावति सुमंद मंद गति ।
नंददास प्रभु दृष्टि ड(र)ति त्रिलोकी तरुणी वारति आरति ॥१४॥

'ऊ' प्रति से प्राप्त पद

(२१७)

प्रात समें पंछी बोलत हैं, छाँडौ हरि ! अंचल घर जाऊँ ।
ऐसी करौ जो कोउ न बूझै निस-ई-निस बहुरचौ फिर आऊँ ।
हठ करें होइ उजियारौ पंथ में, गमन समें लोगन की लाज ।
तुम तौ अपने भमन विराजौ, मोहि कठिन लोगन सों काज ।
चतुराई चतुरन से सीखौ, पर नारिन सों नाहिंन जोर ।
नेह बिना कोउ पास न आवै, तनक विचारौ नंदकिसोर ।
रसिक रसीले रस की ठानों बिरस किऐं कछु रहै न स्वाद ।
नंददास प्रभु दुरजन बैरी, विना विचारें मिथ्याँ वाद ॥१॥

(२१८)

तुम कब तें सीखे हो लालन या लगन कों जानन ।
सोबत नाहिं रैन दिन लगी रहै आसरें, कबहूँ हँस बोलत नहिं आनन ।
ध्यान धरत पुनि अंक भरत हौ, गाइ उठत कभों वाके गुन गामन।
साँची कहत हों वदन विलोक्यौ भामिनी—
भेद जनायौ, कटाच्छन, नंददास पाँइन परे त्रिन लै पानन ॥२॥

(२१९)

स्याम अचानक आए सजनी, फिर पाछें कहुँ भागे ।
चोंक परी सपने में देखे विमल दसन तन त्यागे ।
जरौ नेह यह नैना खुल गए , पाए न ढिंग, दुख पागे ।
नंददास बिरहिन कैसे जीऐं, पंच बान उर लागे ॥३॥

(२२०)

उँनींदी आँखें लागत प्यारी, कजरारी कोर वारी।
सगरी रैन जगी पिअ के सँग ताते भईं रतनारी ।।
घरी घरी, पल पल झपकत मानों करखत कंज पँवारी ।
नंददास प्यारी छवि निरखत मोहे कुंज विहारी ।।४।।

(२२१)

भलें भोर आए नैना लाल।
अपनों पटपीत छांड नीलाम्वर लै विलसे,
उर लाइ लई रसिक रसीली वाल ।।
रति–जै–पत्र लिखित दीनों उर, सोहत विन गुन माल ।
नंददास प्रभु साँची कहिए, फिरि फिरि प्यारे हमारे नँदलाल ।।५।।

(२२२)

तमचुर अबलन कों दुखदाई।
बिछुरत जनम भरें तोहि बीतै, हों नाकें वहु आई।
हाइ दई कहा कीजिऐ, एक न बोल उपाइ।
अरध रात कूकन लगै, सोवत देत उठाइ ।।
सुख सोवत नर नारि नगर में, अपने अपने धाम।
क़ाम बियोगिनि बिरह के अरथ करन बिस्राम ।।
लिपटि पिआ के अंग सों, करत दुक्ख को नास।
तमचुर पापी बोल तहँ, करत सुक्ख कौ ह्रास ।।
छतियाँ सों छतियाँ मिली, अधर अधर रस लेत।
नींद भरे नैना नऐ, यै बोल बोल दुख देत ।।
सीत समें सोवत पिआ, मन ही मन अकुलात।
प्यारी के संजोग में, धुन सुन ग्रीव डुलात ।।

लोक लाज डर मौन कें, मान पिता की कौन।
मो मैहलन ते उठि चले, भोर भयौ जिग्र ग्राँन॥
बहुत कही पिग्र रैन है, करत जु तमचुर रोर।
गाइ दुहन समयौ भयौ, रही रैन ग्रब थोर॥
नैंन मूंद, कर जोर कें, बिनवों ग्रोली ग्रोट।
ग्रवलन की यह टेर है, परियो तमचुर चोट॥
तमचुर तू मर जाइयो, बिधना को कर दोस।
सीत काल सिर पर छयौ, कातिक, मगसिर, पोस॥
गोपी जन मन कलप करि, छिन न वियोग सुहाइ।
दाँत चबामें, का करें, मन मन देव मनाइ॥
कोकिल ग्रौर पपीहरा, बरु बोल्यौ बन मोर।
नंददास क्यों बाज न बोलै, कहियतु है चितचोर॥६॥

(२२३)

ठाढ़ौ री खिरक माई कोन को किसोर।
सांवरे बरन, मन हरन, बंसीधरन, काम करन कैसी मति जोर॥
पवन परसि जात चपल होत देखि पिग्ररे पट कौ चटकीलौ छोर।
सुभ साँवरी छोटी घटा तें निकसि ग्राई,
वे छबीली छटा कों जैसा छबीलौ ग्रोर॥
पूँछति पाँहुनी ग्वारि हाहा हो मोरी
कहा नाउँ को है चित वित चोर।
नंददास जाहि चाहि चक चौंधी ग्राइ जाइ,
भूल्यौ री भमन-गमन भूल्यौ रजनी भोर॥७॥

(२२४)

लाल सिर पाग लहैरिया सोहै।
तापर सुभग चंद्रिका राजत निरख सखी मन मोहै॥

नैसौई चीर सु बन्यौ लैहैरिया पैहरे राधा प्यारी।
नैसौई घन उमड्यौ चहुँ दिस तें नंददास बलिहारी ॥८॥

(२२५)

पनिश्राँ न जाउँ-री श्राली, नंद नँदन मेरी—
मटकी पटकि कें हों झटकी।
ठीक दुपैहरी में श्रटकी कुंजन लों,
कोऊ न जानें मो घट की॥
कहा-री करों कछु बस नहिं मेरौ,
नटनागर सों श्रटकी।
नंददास प्रभु की छबि निरखत,
सुधि न रही पनघट की ॥९॥

(२२६)

पिछौरा केसर रंग रँगायौ।
मेघ-गँभीर-स्याम-तन सुंदर, लागत परम सुहायौ॥
रोकै श्राइ घाट जमुना के गोपी जन मन भायौ।
भरि गागरि नागरि के सिर धर, कुच कर कमल फिरायौ॥
श्रागें चलत कछुक मिस करकें, बातन रस बरखायौ।
नंददास ब्रजबास सदाँ बसि, नेह नयौ दरसायौ ॥१०॥

(२२७)

जेंमत हैं-री मोहन, जिन जाश्रौ तिवारी।
सिंघ पौरि तें फिर फिर श्रावत, बरजीं हों सौ बारी॥
रोहिनि श्राइ निकसि ठाढ़ी भईं दै दै श्रोट मुख-सारी।
तुम तरुनी जोवन मद माँती, देखीं देखन हारी॥

ोउ कछु कहति, कोऊ कछु गावति, कोऊ बजावति तारी ।
ंददास प्रभु भोजन-घर में, अब हीं बैठे थारी ॥११॥

(२२८)

ापन लाग्यौ तरनि परत अत घाँम भैया, कहूँ छाँह सीतल किन देखौ ।
ोजन कों भई अवार, लागी है भूँख भारी, मेरी ओर तुम पेखौ ॥
ार की छैयाँ दुपहैर की बिरियाँ, गैयाँ सिमिटि इहाँ आवै ।
ंददास प्रभु कहत सखन सौं, यहै ठौर मेरे जिय भावै ॥१२॥

(२२९)

ग्रहो हरि भोजन कीजै, आई छाक इक बार ।
ै बैठी छकिहारी कदमतर , रूप रसिक सुकुमार ॥
उँमगी घटा, घटा चहुँ दिस ते, लागीं परन फुहार ।
उलटि चली तकि तीर ग्वालिनी, करति नमनि बलिहार ॥
कर, कर ऊँची बाँह बुलावत, चल आए सब ग्वार ।
नंददास प्रभु जो मंडली, बैठे नंदकुमार ॥१३॥

(२३०)

आज बृंदा बिपिन कुंज अदभुत नई ।
परम सीतल सुखद, स्याम सोभित तहाँ,
माधुरी मधुर अति पीत फूलन छई ॥
बिबिध कदली खंभ झूमका झुक रहे,
मधुप गुंजार, सुर कोकिला धुनि ठई ।
तहँ राजत श्री वृषभाँनु की लाड़िली मनों—,
घनस्याम ढिँग उलही सोभा नई ॥

तरनि तनया तीर धीर समीर जहाँ
लखि ब्रज वधू अति हरखित भई।
नंददासनि नाथ और छवि को कहै,
निरखि सोभा नैन पंगु गति ह्वै गई ॥१४॥

(२३१)

प्यारी, तेरे लोयन-लोंने जिन मोहे स्याम-सलोने।
रस के आल-वाल रँगीले बिसाल, ऐसे पाछें भए न आगें होने ॥
रूप रिझोंने जब मुसकि चलत कोंने, काम-केहरी टटाबकटोने।
नंददास नंद-नंदन के नैना तोसे नेंक नाहिँने होंने ॥१५॥

(२३२)

गोधन धूरि में हरि आवत, कैसे नीके लागत मोर मुकट की ढरकन।
मुरली बजावत, कमल फिरावत, मनों गयंद की मलकन ॥
नैन कमल मकराकृत कुंडल, ज्यों घन में-री मीन चढ़ि किलकन।
नंददास प्रभु की छवि निरखत, नेंक न लागें पलकन ॥१६॥

(२३३)

मो सों क्यौं बोले रे नँद के लाल, तेरौ कहा लियें जात।
छाँड़ दै अंचल न कर गैहरु, जानत हों तेरे मन की बात ॥
बन ते आवत कमल फिरावत, ता पर गावत तान रसाल।
नंददास सूधें किन बोलै मैं बरसाँने की बाल ॥१७॥

(२३४)

ऊसीर के मैहैल ब्यारू करत दोऊ भैया।
बिंजन मधुरे, खाटे, खारे, परसत रोहिनि मैया ॥

कर मनुहार जिमावत सुत कों, परिपूरन कर प्रेम अवैया ।
नंददास ऊपर पै पीवौ, बीरी लेहु कन्हैया ॥१८॥

(२३५)

ब्यारू करत भाँमते जिअके ।
खट रस बिंजन मीठे खारे, अंचल ब्यार करत प्रिअ पिअ के ॥
कबहुँक कौर देति श्री मुख में ताप समोवत अपने हिअ के ।
नंददास प्रभु रंग मैहैल में प्रान पिआरी अपने पिअ के ॥१९॥

(२३६)

आली री सघन कुंज पुहुप पुंज उसीर की रावटी,
तामधि राजत पीतम प्यारी ।
कंचन थार साजि लाँई व्रज वाम,
जिमावत प्रान प्रिअहिं गूँथत हार निवारी ॥
कोऊ बिंजना कर गहें, कोऊ परसत पिअ कों,
कोऊ अरगजा घसि लावत , फलन की कंचुकि सारी ।
जेंमत स्यामा स्याम, देखि लजाने कोट काम,
नंददास तहाँ पै जाइ बलिहारी ॥२०॥

(२३७)

ब्यारू करत बलराम स्याम जैसी घटा स्याम सुख स्याम देखत मन ।
पलक ओट अकुलात, आरत अत तज न सकत एकौ घरी पल छन ॥
लाखन अभिलाख लाख छक छकि भूरि भाग, धनि धनि कहैं गोपीजन ।
नंददास प्रभु के ऐसे सुख ऊपर वार फेरों अपनो-री तन मन धन ॥२१॥

(२३८)

अधरन रँग राखौ अरुन अत प्रेम-प्रीति के पान हरित तन बीरा ।
ये सुख-रास ब्रज-वास लाल-सँग, नित गौ चारन नित वन क्रीरा ।।
यै वरखा रित सुभग हरित अत, बृंदावन जमुना के तीरा ।
नंददास प्रभु ब्रजवासिंन हँस गोपी जन दियौ झुकि झुकि वीरा ।।२२।।

(२३९)

चटकाव-री पावरी पगन, झगन, पैहैर निकसे नंदलाल पिआ ।
कटि तट पट चटकीलौ रँगीलौ, छबीलौ, चपल काम-रस बिलोवत हिया ।।
जब मुसिकाइ चितए री मो-तन निठुर, मुरझन, झपकन,
मन पलकन मनु पवन कलावत प्रान दिआ ।
नंददास प्रभु ता दिन ते मेरी गति-हों जानौं कै जाने मो जिआ ।।२३।।

(२४०)

सैन दै बुलावौ लाल, वैठी है—झरोखें बाल, वन ठन कें छिप री ।
सिंघ द्वार ठाढ़े ललन रसिक बर किऍं बिचित्र भेख, अंग रहे दिप री ।
रूप रिझवार ब्रजराज कौ कुँमर आली,
द्रिग अँकबार भर लिए पलक न झिप री ।
नंददास दोऊ ओर प्रेम की झकोरनि में प्रीत की ललित गत,
चित चितेरे ने लई कठिन लिप री ।।२४।।

(२४१)

प्यारी तेरे मुख-सम करिबे कों चंदा वहु तपयौ ।
उड़गन कौ ईस पुनि औषधीस भयौ ईस सीस लों गयौ ।।

मुधा मै सरीर कियौ, बाँट बाँट मुरन दियौ,
मर मर कें फेरि जियौ तन धर कें नयौ।
नंददास प्रभु प्यारी, तदपि न कछु अरथ सर्यौ,
फेरि जाइ समुद्र पर्यौ, विधि बूड़न न दयौ ॥२५॥

(२४२)

आली तेरौ वदन चंद देखत, बस भए कुंजविहारी।
उसीर मैहैल में तो मग निखन (निरखत?) वारंबार सँभारी
तो विन रहि न सकत नवल प्रान प्यारौ,
ऐसी निठुराई तू मुनि री कुमारी।
नंददास प्रभु प्यारी रूप गुन उजियारी,
ऐसे ब्रजाधीस सो मांन करत, तू चल लाज निवारी ॥२६॥

(२४३)

सुनति खसानी दूती, चलि पीतम पै गई है लजाइ।
वे तौ नहिं माननति, कोट जतनन किऐं,
हों पचिहारी बहौत मनाइ॥
आपु ही मँनाइ लीजै, मो सों ऐसें कही,
सुनौ अब कहा कीजै लाल दूसरौ उपाइ।
नंददास प्रभु ऐसी सुन आपुहीं पधारे,
तव पौढे अपनी प्यारी कों उर लाइ ॥२७॥

'ए' प्रति से प्राप्त पद

(२४४)

जितें जितें माई सभा अथाई भर द्विज वेठें वरसोंडी पात।
विजें दसहरा परसन कों सब प्रमुदित मन अकुलात॥

लीयें गोद गिरधर को राजत व्रजराज मन फूलि न समात ।
कनक थाल मंगल समाज सों एक आवत एक जात ।।
आगें ढेंर लाग्यों हें धन कों देंत नंद क्योहू न अघात ।
गाइक चहु दिस गान करत हें जोरि जोरि व्रज वात ।।
परदा परें झरोषा रिझवत वाल लाल मुसिकात ।
नंददास प्रभू कहा कहू कुवर छवि झलकि रह्यों सब गात ।।१।।

(२४५)

माई वावरी सो जों वासुरी सो लरें ।
जेंसी जाकी प्रीति तेंसी तुम्हारें कहा हें
याही तें गिरधारी लाल अधर लें लें धरें ।
जो ही लो मधु पीवत रहें तों ही लों
जीवत रहें नेकु विछुरे तें मुरझि धर परें ।।
नंददास प्रभू जाकी एसी प्रीति
ताकी आली रस भर को करें ।।२।।

(२४६)

मुरली रस वाजें राजें जोवन घन आली अति आनंद अरगजी धुनि ।
जब तें तनक भनक परी कान तब तें मोहिं सब बिसरचौं
जों न पत्याई तो री तुही धो सुनि ।।
जो ही लों तू सीष देंत ही तो ही लों ना सुनी री मोहन की मीठी तान
याही में अधर मधुर की पुट आई पुनि ।
नंददास प्रभू एसी तरूनी कों धीरज धरें
सुनि धुनि मुनिन कें हीयें गयें धुनि ।।३।।

(२८७)

तेरें री बदन कमल पर नंद नंदन आली मुरली नाद करत गुंजार ।
ललित त्रभंगी तेरे रोम रोम रमि रहे करि गये उर हार ॥
जिनकी चरन रज ब्रह्मादिक दुर्ल्लभ सो अब पाइन परत मुरारि ।
नंददास प्रभु कमलापति बस करिवें कों किन हू न पायों पार ॥४॥

(२८८)

आली री सामरी मूरति तेरें जीय में बसति
काहे को दुराव करत न दुरत ।
नेंनन बेंनं प्रगट देंपियत धाम धरीनिधि
जेंसें लिलाट लसत ॥
मुप की रुपाई तों छिपाई न छिपत आछें
आनन कों जोति ससि जोति हरति ।
नंददास प्रभू प्यारी एसी सकुच कोंन की बलि
जाको मुप देंपें उर को तिमर नसत ॥५॥

(घ) सुदामा चरित

जदुवर एकु सुदामा नामा, पुरी द्वारिका ढिग विसरामा ।
जामें वसै जु अलि-पति एसैं, सरवर में सरसीरुह जैसें ।
परम अकिंचन कछु नहिं चहै, जथा लाभ संतोषित रहै ।
दीन, कृष्णचरननि रति सरसे, इहि संसार बयार न परसे ।
जानैं जिय सब विषय-बगर सों, देखन कों गंधर्व-नगर सों ।
अह-ममता सपनों सों लागै, माया सन सपनों सों जागै ।

नेहि न देह, गेह सन कबहूँ, उपसम चिंतन समता सबहूँ।
सखा आपुने श्री जदुनाथा, गुरु-कुल पढ़े एक ही साथा।
तातैं निसा-अनी न बिचारै, विपयन दीन देह प्रति-पारै।
तातैं दुरवलता तनु ताकैं, नाँहिन कछूक दरिद्रता जाकैं।
तिय ताकी पतिवरता अहै, पति ही तोख्यौं, पोख्यौं चहै।
जानत सब सेवा के धरमैं, और विभूति नहीं कछु घर मैं।
निपटहि लटचौं देख कै गातैं, कहन लगी कंत सौं वातैं।
इत तैं निकट जदुपुरी आँही, तनक चाह ह्वै आओ ताँही।
जहाँ प्रभु-कमला-कंत पियारे, तुम जु कहत, है सखा हमारे।
कीजै दरस, अरस नहिं कीजै, जीवन सकल सफल करि लीजै।
बिप्र कहत, नहि घर कछु साजा, तिन्हैं मिलन मोहि आवत लाजा।
तीय कहै वे त्रिभुवन-स्वामी, अखिल लोक के अंतरजामी।
रीझति देरि कछू नहिं आनैं, केवल प्रीति रीति पहिचानैं।
कहत जदपि, जदुपति है ऐसे, चक्र-पानि प्रभु परसहु कैसे।
तव तिय उठी चलत पिय जाने, गाँगि मूँठि द्वै चिरवा आने।
चीर लपेटि सु पिय पकराए, नीकैं लिऐं सु द्विज उठि धाए।
दृष्टि परी जदुपुरी सुहाई, जगमगात छबि बरनि न जाई।
बन उपबन फल फूल सुहाई, सब रितु रहति समान सुछाई।
सरवर की छबि वरनि न जाई, मलिन होत सु मलिनता आई।
ऊँचे कनक-भवन जगमगहीं, चखन माँहि चकचौंधा लगहीं।
लगे जु नग जगमग रहे ऐंना, मानहु सरस भवन के नैना।
ता पर चपल पताका चमकै, विनु घन जनु दामिनि सी दमकै।
सुंदर सुथरी डगर जो पुर की, चोवा, चंदन, बंदन बुरकी।
हाथी, हय, रथ गहै सुसंबर, निकसि न सकत अटनि तनु अंबर।
महा विभूति कछु सुधि नहिं परहीं, झमझम द्विज वर मग अनुसरहीं।
पहुँचे पौरि, रोंरि तहँ छवि की, बरनि न सकै महा-मति कवि की।

जहँ संकर नारद मुनि ठाढ़े, औ सुर-पति, नरपति अति बाढ़े।
समय स्याम कों नाहिन अबहीं, रोकैं रहति पौरिया सब हीं।
ठाडों भयो द्वारि पै द्विज-बर, एकु पौरिया आइ गह्यौं कर।
लै गयों जहँ रुकमिनि कों मंदिर, बैठे तहँ जदुनायक सुन्दर।
चँवर चारु ढोरत है ठाढ़ी, पिय मुख निरखति अति रति बाढ़ी।
जदपि सहस-दस दासी आहीं, प्रेम-बिवस रस देति न काहीं।
दृष्टि परे द्विज बर तहँ जबही, अरबराइ हरि दौरे तबही।
भले मिले, कहि अति मृदु बानी, भैंटति भरि आए दृग पानी।
अपुने आसन द्विज बैठारे, निज कर-कंजनि चरन पखारे।
पोंछत रुचिकर पग जग-नायक, अपुने पियरे पट सुखदायक।
चरन माँहि पट अटक रहत जब, रमा सुन्दरी मुसकि परत तब।
सुन्दर भोजन बिबिधि प्रकारी, आनि धरे भरि कंचन थारी।
जो सपने कबहूँ नहिं दरसे, श्रीपति ललना निज कर परसे।
ताहि पाइ द्विज सुख नहिं मान्यों, परमानंद कंद रस सान्यों।
लै बैठे पुनि श्री जदुनाथा, सुधि कीनी गुरुकुल की गाथा।
अहो मित्र! जब ईंधन आनन, गुरु पतनी पठए तब कानन।
तौरत ईंधन घन घिरि आए, अमित जोरि सों जल बरसाए।
बरसत बरसत पर गई रजनी, किनहु नगर की डगर सु न जनी।
भूले फिरे रैन तहँ सगरी, तऊ न गुरु की पाई नगरी।
भयो प्रभात तब गुरु पै आए, धरि ईंधन तहँ शीस नवाए।
वे दिन भले हुते अहो तब तों, बट गयों ठौर ठौर चित अब तों।
भली भई फिरि मिलहे तुमकों, भाभी कछू दियों हैं हमकों।
चिरवा छोरि चीर तै लीने, भर मूँठी निज-मुख में दीने।
तिसरी बेरु बहुरि मन कीने, तब उठि रमा! रमन गहि लीने।
करत बात पौढ़े द्विज राती, खान पान करि नाना भाँती।
प्रात होत निज धाम सिधारे, रहे नाँहि बहुतक पचि हारे।

करत चबाव जात निज घर कों, मन में कहत कहा कहों हर कों।
पुनि पुनि कहैं अति ही भल कीनों, जो हरि हमकों कछु नहिं दीनों।
राखि लयों, अपुनों करि जान्यौं, परम अनुग्रह इतनों हम मान्यौं।
सब मद तैं धन मद दुखदाइक, नहि पायों भये पुन्न सहायक।
अँधरों करै, बधिर पुनि करहीं, उतपथ चलन विचार न टरहीं।
दिन न चैन निसि नींद न परहीं, मोद मुदित मन अति सुख भरहीं।
मन सौं करत बात चलि आए, चकित भए निज ठौर न पाए।
कहन लगे इहि भवन कौन के, ऐसे है वहाँ रमा-रमन के।
अब लौं इहाँ हुतो नहि ऐसौं, अबहीं इहाँ भयौ है जैसौं।
कहन लगे पुनि संभ्रम पायों, कै हौं बहुरि द्वारिका आयों।
देखति इन्है सुसेवक धाए, अमरनि तैं वे अधिक सुहाए।
अटा चढ़ी अवलोकत तिरीया, टिकत धाम बाम दिय भरिया।
आतुर तिय, लखि पिया सु चमकी, जनु सुमेर तैं दामिनि दमकी।
मुदित वदन छवि कौन बखानैं, अवनी उतरति उड़पति जानैं।
सहस अली लिऐं संग सुन्दरी, उडगनमध राजत ज्यौं चन्दरी।
करि आरति निज भवन सुलीने, सबै मनोरथ पूरन कीने।
बहु विभूति हरि द्विज कों दीनी, दया भक्ति पतनी सुभ कीनी।
ऐसैं जो कोऊ हरि कों भजै, हरि उदारता तैं सुख सजैं।
दीनन कौं बरदायक नित ही, रहत अधीन भक्त के हित ही।
चरित स्याम कों इहि है ऐसों, वरन्यौं नंद जथामति जैसौं।
दसम सकंध बिमल सुख बानी, सुनत परीछित अति रति मानी।
परम चरित्र सुदामा नित सुनि, हृदय कमल में राखों गुनि गुनि।
नंददास की कृति संपूरन, भक्ति मुक्ति पावै सोई तूरन।

(ङ) नासिकेत पुराण (उद्धरण)

(१)

"××× बानारसी विषैं रह्यौ है। सो एक दिन सग्व नगरा का अस्त्री विरहा पांचै को दिन नाग की बंवई पूजिवे कूं चली है। जव पुंडरीक नाग एक ब्राह्मन की कंन्या कूं पूछित भयौ। तुम कहां जात हौ। जब कन्या बोली है। गुसांई जी नाग पूजिवे कुं जात है। जब पुंडरीक नाग बोल्यौ है। अहो ब्रह्म कन्या हुं तोसु एक गुझ की वात कहूं। जौ तो कहूं नै कहे तौव हूं कहूं नाही। तदि ब्राह्मन की कन्या कह्यौ। गुसाई जी हूं। कहूं तुम्हारी वारता कहूं तौ मो कुं मोहहै। मेरौ वडौ भागि जु तुम मो कुं आपना गुझ की वात कहत हौ। त (दि ?) पुंडरीक बोल्यौ है। पुंडरीक उवाच। तू हमारी दासी है अरु बहुत प्यारी है। तेरे घर हूं नाग की देही धरै हूं आऊंगौ। तू डरपै मति। घर ही विपै नाग होइ तौ बाबी काहे कू जइयै। पुंडरीक नाग ब्राह्मान के घर आयौ है। अपनौ सरूप नाग कौ धरयौ है। मस्तिक मनी है। अरु कमल कौ पौहोय है। अरु सुरह गाइ कौ पोज है। जब वह कंन्या। नाग की पूजा करी है। विधि संजुगति करी है। तब वाही की माता देपि के अचरज भई है। हे देव कहा बनायौ है। नाग कौ सरुप देपी जब वह कन्या पूजि करि परक्रमा करी आपनी माता सुं कह्यौ। यह नाग मेरो भरतार है। तब माता कह्यौ यह तौ नाग है। तूं मनिप देह है। तोहिर याहि जोगि नाही। जब कन्या कह्यौ यह औतार है तू जानै नाही। मनिप रूप भी धारै। अरु नाग रूप भी धारै तब पुंडरीक ए वचन सुनि करि मन मै सोच करत भयौ। कहतौ भयौ आपनी वात अस्त्री कू कहिये नाहि। अस्त्री कुं सराप है। राजा जुधिष्टिर नै दीयौ है। जा समए करन मारयौ है। तब कौंता नै सराप दीयौ है। तब यही ब्राह्मनी आपना भरतार सुं कही। जा विधि पूजा

की कंन्या की सब कही। सो ब्राह्मन सुरग वानी पंडित हौ कंन्या पुंडरीक नाग कुं परनारी। जब सारी कामी मै घर घर वारता भई। अरु पुंडरीक नाग प्रगट भयौ। तब यह वात चली चली राजा की जग्य विषै गई। जब राजा जनमेजय वोल्यौ है। अैसौ कोइ होय पुंडरीक नाग कूं जगि मै लावै। जब राजा कौ मंत्री सुवधिक नाम वोल्यौ है। महाराज लावै समरथ और तो कोई नाहि। गरुड जी आवै तौ नाग कूं जगि मै लावै। जब गरुड़ की अस्तुति करी है जी अरु वेद मंत्र कौ उचार कीनौ है। जब गरुड़ देवता प्रसन्न भयौ है। गरुड़ कौ वेग अैसौ है। मन को वेग ताते दस गुनौ है। गरुड का वेग चलतु है। जब गरुड़ जी आए है। जब पुंडरीक की कालदृष्टि सौ मन मै डरप्यौ है। तव राजा की जगि में गरुड आयौ है। राजा गरुड की पूजा करी है। अरु सब वारता कही हैगी। जब गरुड नै आग्या दई है। कह्यौ गरुड जौ पुंडरीक नाग बानारसी विषै आयौ है। सो तुम जाय कै पुंडरीक नाग कूं जगि लावौ जब गरुड जी बानारसी मै आयौ है। मन मै विचार करत भयौ। अरु सोच करत भयौ है। मन मै कह्यौ वानारसी को उपारो तो दोषारथी कहुंउ पीछे महादेव जी सराप दैही। तब पीछे विचारि करि छोटी देह चिरीया की धारी है। अरु पनहट विषै आयौ है। जब वा नाग की अस्त्री पानी कूं आई है। अरु जब वातैं एक अस्त्री बोली है। बाई तुम्हारौ भरतार सरप की देह धरि। अरु मनिप की भी देह धारै। अैसौ हम काहू कौ भरतार देष्यो नही। जब अैसे बचन गरुड जी सुन्यौ। तव नाग की अस्त्री अपने घर कुं आवत भई जब घरा उपर गरुड जी चढि बैठ्यौ है। एते मै नाग पतिनी घर आई है। नाग की दिष्टि चिरा परयौ तब पुंडरीक नाग तारी दीन्ही है। जब गरुड बोल्यौ कहौ पंचायन संष मो ऊपर बाजत है। अरु मेरो पराक्रम तैं त्रिलोकी का जीव कांपत है। अरु मेरी पांप का वेग ते हाथी उडत है। जब पुंडरीक कह्यौ तु कौन है। जब गरुड जी बोले है कहत है। हूं तो कूं लेवे कु आयौ हूँ। जब पुंडरीक डरप्यौ है। अरु सोच

करन भयो है। जब गरुड जी पुंडरीक नै अस्त्री सहित लै चल्यौ गुना मही दीन अस्त भयौ है। जब विश्राम कियौ है जब गरुड जी बोल्यौ है। अहो पुंडरीक कोई कथा श्री रांम चरचा कहौ। कालिह तुम्हारो काल है। जब पुंडरीक भय कंपन भयौ है। अरु बोल्यो है। गुसांई जी आपनै गुभ्फ की बात अस्त्री को कहियै नही। तब ब्राह्मन की कन्या। नागपतिनी बौहौत पढि हीं। अर सुग्वान हीं। कन्या ब्राह्मन की नागपतिनी मन मै कह्यौ। गरुड जी आपना सुग्व सु पुंडरीक गुर कीयौ है। अबै नाग पतिनी गुर धरम की कथा कहत भई है। अर ग्यान की चार्क्त (चर्चा ?) कही हैगी। गरुड जी अश्लोक करि कै कहत है। श्लोक। एकाक्षर प्रदानारं यो गुरुं नाभिमन्यते। श्वांनजन्म शतंगत्वा चाडोलेष्वभिजायते॥ वारता। जब गरुड जी कहत है मेरे तुम गुरु हो। तुम बचन करि मन माँहि सोचु मति करौ। निरभै रहौ। तुम जग्य मै ब्राह्मन कौ सरुप धरि करि वेद कौ उचार कीजियौ राजा तुम कु छोडैगो। अर हूं मापी भखंगो। अर तब एक ब्राह्मन राजा कौ जग्यमुनि जगि कुं चाल्यौ है। भूपौ महाराज की आसा करि राजा पै चाल्यो है। दोनो एक नगर मै भिछा करत भए है। भिछा काहू नै घाली नाही तब ए दोनौं के प्रान छूटन लागै। अस्त्री पुरीप के अंन बिना। तब एक हाथी के थान महावत के पास आए है। जब महावत हस्ती का जूठा चना दीना है। तब दोनौ झूठे चना चाब्यौ है। उबरचौ सो ब्राह्मनी गाँठि बांधि लाई है। अैसे मै प्रात भयौ है। ए दोनौ जगि कुं चले है। तब अस्त्री पुरीप क बचन कहत है महाराज एतौ रास चना है। जब ब्राह्मन बोल्यौ है चना डारि देह ए चना चबाय नरक कुं प्रापति होत है। ए महाकुधान है। जब अस्त्री बोली है गुसांई कालि तौ नरक गया नही आज कैसे नरक जात है। जब ब्राह्मन बोल्यौ है। अपघाती महापापी। जो आपनौ प्रान घात करीयै तौ वज्र पापी कहियै। अगति कू प्रापति करीयै। ताते कालि चना चाबे हें..."

(२)

"नासकेत उवाच। अर नासकेत कहत हैं। समस्त रषीसुरन सू कहत है। गुसांई जी हूं बार बार कहा कहूं पै जम की त्रास वहौत दृप्टि देखी है। सो मेरा रोम रोम उभै होत है। रिषि पूछत है। अहो नासकेत पापी पाप करता कौन कौन कही। नासकेत कहत है। पापीन के ए लछिन है। पर द्रवि कौ वाछित। पर अस्त्री कौ वंछित। पर निंद्रा के करन हारे। अर यौहीं परायौ वुरौ करत है। अर पाप करते पाछौ देपै नाहीं। अरु विना अपराध करहू सेती द्रोह करत है। अर झूठी साखी भरत है। अर अंतर पापी होत है। अर अछिर कौ बकता बिषैं कमावत है। असे सी पापातमा। महा उग्र सासना। भांति भांति के नरक बिषै लै लै त्रास देत है। अरु बिस्वासघाती अरु कृतघनी। अरु गुरु द्रोही। अरु गौ द्रोही। अर अस्त्री घाती वालघाती। असे असे बज्र पापीन कू जमदूत नरक के मंदिर विषै डारि डारि देत है। अर ऊपर महा वज्र मार मुगदर की देत है। अरु वज्र आगि लोह की तिनकरि महामार करत है। अर ह्वा हाहाकार होतु हैं। अरु वज्र पापी कौन कौन अगिन दाहक। अरु बिष दाहक। अरु गुर मात पिता के मारिवे वारे। अर पुन्य करत अगिले कुं वरजत हैं। अर पतिग्रह छेत्र बिषै लेत है। अर बज्र दान लेत है। अरु सदा अस्त भाषत है अर निरदई है। अर कुंसंगी अरु असुची। अरु दिवस बिषै अस्त्री भोग करत है। अरु आन मारगी अरु अस्नान बिना भोजन करत है। अरु गुर मंत्र बिना पानी पीवत है। अर पराई व्रत के हरन हार। अरु वाट के बिघनी। अरु वेद सास्त्र धर्म नेम नै मानत नाही। असे असे पुरिष महा नरक के मंदिर मै लै लै जमदूत त्रास। बज्रमान देत है। अर जे प्रानी अहो राषत है। अरु जो दान करत है। जगि होम करता कथा माही। परमेसुर कौ कीरतन करत भोजन मैं। इतनी ठौर जो बिघन करत है। ते पुरिष जडरूप जोनि बार बार। वृछ की जोनि

पावन है। ताकूं वार वार काटन हैं। नासकेन उवाच। नासकेत सर्व रिषी सुरनै कहत हैं। गुसांई जी सुकानी जीव सुभ आचार। सुभ कर्म के करिबे वारे। ववेकि पुरिप मैं। दिव्य दिव्य विमान चढि चढि सुर्ग कूं जान है। अर कैसे देपे हैं। जिनके आगै अनेक वाजित्र वाजन देपे है। अर नाना प्रकार के। पौहोपन की बर्षा होन है। अर अपछरा नृत्य करत है। सुकनी जीव है। सो सुर्ग विषै विलास करत करन देपे है। सुकती जीव कौन कौन कहीयै। प्रथम तौ नाम विपैं रहत होत है। ऐसे प्रानी सुर्ग विषै जात देपे है। जीव कैसे जानीयै। एक ब्रह्म विपै ध्यान करत है। सो ध्यान कौन कौन कहीयै। भक्ति योग तपस्या। अहो राति ब्रह्म सौं ल्यौ लगावत है। जो महापुरिप है। तत्त्व के जानन हारे सुमिरन नाभि कमल त्रिपै। सासा सुमिरन ल्यौ लगावत है। सो ऐसे महापुरिप परम पद कूं प्रापनि होन हैं। अर जो सुकनी जीव है। तिनकौ शुभ करम। जु धर्म्म नेम के जानिवे हारे। सुर्ग लोक कुं प्रापनि होत है। सुकनी जीव कौन कहीयैं। नासकेन कहत है। तिनके सेवा श्री परमेसुर की। अर अगिन होत्र होत है। तिनके वेद उचार होत हैं। अर गुरदेव साध की। ब्राह्मन भगति आराधन करत है। ऐसे जीव सुकती हैं। तिनकूं सुर्ग विषै देवता आदर करत है। अर जे परमारथ करत है। अर जे पराई पीर विपै जाय परत है। अर वेद शास्त्र की सत्य मानत है। अर नित्य अस्नान करत है। अर माता पीता को मानत है। अर धर्म नैम तीर्थ व्रत आदि करत है। ऐसे प्रानीन कुं। सुर्ग विपै देवता आदर करत है। नासकेत हाथ जोरि नमस्कार करत है। कहत हैं धन्य मेरे पीता कूं। धन्य मेरी माता कूं। तिनकरि हू उनपनि भयौ। अर मोकूं सासना देत है। पिता मो कूं श्राप दीयौ हो। तौ हूं कृतार्थ भयौ। अरु आप निष्ट सुर्ग लोक देप्यौ। नर्क कुंड देपे अर मै नाना प्रकार की सासना देषी। अर मै धर्मराज की पुरी विपै। वडे वडे ग्यान सुनत भयौ। नासकेत कहत है। गुसांई जी तुम मेरे सर्व पिता समान हौ। मेरे तुम गुरु हौ।

गुसाईं जी मो कूं पिता सराप न देनो तौ। तुम्हारौ दरसन कहां होनौ। ए बचन कहि करि। समस्त रिषीसुर नै डंडौत परिक्रमा करत भयौ। अरु सबही कौ दासातन कीयौं। जब रिषीसुर समस्त है करि नासकेत कुं आसीर्वचन कह्यौ है। रषीसुर सर्व आपनै आपनै आश्रम ठीकानै जाइ प्रापति भये। अर आपनै मन विषै ब्रह्म सुं ल्यौ लगावत भये। अब नासकेत तपस्या कुं जात भयौ। अैसे नासकेत की उतपंनि भिन भिन राजा जनमेजय कौ सुर्ग के बिमान आये है। अर सर्पन कौ दोष दूरि भयौ है। अर सर्व पाप दूरि भए है। अर कृतार्थ भयौ है। बैसंपायन रिषि कहत है। एक समै नारद अरु जम सूं संवाद भयौ है। नारद रिषी जम कूं पूछत है। ए पापातमा जीव हैं। पाप के करता महावज्र पापी महा सो क्यौं करि तिरेगे। जदि नारद कूं जम कहत है। गुसांईं जी जो महा पापी जीव है। अर दुष्ट तिनकी बुधी है। अैसे पापी नाम सु तिरेगी। अर जो प्रानि नासकेत पुरान पढे हैगे। अरु सुनेगे सो गति कूं प्रापति होहिगे अर जम कहत है नारद कुं। जहा नाम कौ उचार होत है। अर जहां नासकेत पुरान की कथा होत है। तहा हमारी पौहोच नाही होत है। अर जहा परमेश्वर की पूजा करत है। सेवा करत है। अर जाकै गीता सहस्र नाम बेद धुनि होत है। अरु जाकै सत्ति बचन होतु है। तहां महारी पहुच नाहीं। इतनौ संवाद नारद सूं जम करत भयौ। यह नासकेत पुरान कैसो है। या पुरान सुने ते महागति कुं प्रापति होतु है। राजा जनमेंजय सुनत पुरान। गति कूं प्रापति भयौ है। जब सबरी कथा संपूरन भई है। जदि राजा जनमेंजय बैसंपायन रिषि की पूजा करी है। बहुत अस्तुति करी है अरु बहौत दासातन कीयौ है। जब राजा नै रिषि आसीरवाद कीयौ है। सुभ बचन कीयौ है। अैसे बचन कहे है। राजा कौ सरब पाप दूरि भयौ है॥ इति श्री नासकेत महा पुराने रिषि नासकेत संवादे अष्टादशोध्याय: ॥१८॥

यह कथा रिषि राजा जनमेंजय नैं सहंसकृती करि कही हैं। अर भाषा करी स्वामी नंददास अपनै सिष्य सूं कहि है। इति श्री नासकेत कथा संपूरण ॥शुभं॥"

(३)

"॥श्री राम जी॥ श्री गणेशायनमः ॥ अथ नासकेत पुराण लिष्यते ॥ आदि सहंसकृत महाभाषा करि विस्तरी छै ॥ नासकेत पुराण भाषा करि नंददास जी आपण सिष्य नै कहत है। सो याह कथा कैसी है ॥ या कथा सहंसकृत पुराण वैसंपायन रिषि राजा परीछित को पुत्र जनमेजय कौ कथा कही है ॥ और जनमेजय या कथा सुणी परम गति कौं प्रापति भयौ है। और सर्व पाप कटे हैं। और स्वामी नंददास जी आपण मित्रनैं भाषा करि कहतु है। सिष्य पूछत है गुसाइ जी मेरै अभिलाषा नासकेत पुराण सुणिवा की ईछा बहौत है मोनैं भाषा वारता कहौ। सहंसकृत मै समझौ नही। अबै नंददास जी कहत है सिष्य कौ और वैसंपायनि रिषि राजा जनमेजय कौं कही है। रिषि कहत है राजा परीछित कौ सराप भयौ है पहोप की कली मांहि तछिक सरपि डस्यो सींगी रिषि का पुत्र कौ सराप भयौ है सम्यक रषिसुर कौ जब राजा जनमेजय पिता का बैर निमति जग्य रच्यो है सरप होमि वाकै नित्य जग्य को आरंभ कीयौ है। जग्य पुर कै विषै रच्यो है और बेद मंत्र की सकति तै सरप आवत भयौ है तब तापो नाग भाग्यौ है जाय करि झुगर को सरूप धरचौ है नाग की भी देह धरै अर सरप की भी देह धरै। सरप है सो विष को जीव है नौकुली नाग है और सेस नाग भागे है सो इन्द्र के सरनै जाय रह्यो है जीह समय प्रथी को भार कूरम ही धरचौ है। जै विराम्हण यती कहै इंद्राय स्वाहा तौ इंद्र आदि अगनि मै आय परहि ॥ पणि बेद मंत्र इतनू लिगया। और पुंडरीक नाग भागो है। सो वाराणसी विषै जाय परचौ है। और पुंडरीक नर देही धरी है ॥ और महाबुधिवान है और बेदांत अंग सहत पढयो और सरब वारता मैं परबीण है। इह प्रकार पुंडरीक नाग वाराणसी विषै रह्यौ है। एक दिन सरब नगरी की असत्री विरहा पाचै कौ दिन नाग की बंबइ पूजिवा चली है तब पुंडरीक नाग एक ब्राह्मण की कन्या.... ।"

२ प्रक्षिप्त सामग्री

(क) 'मानमंजरी' के प्रक्षिप्त दोहे

'अ' प्रति से उद्धृत

खरग

गोकुल गोथल घोष ब्रज खरग कहत पुनि नाम ।
तहँ नित प्रति बिहरत प्रभू कोटि काम अभिराम ।।१।।

गोप

बल्लब गोदुह गोप पुनि कहि अभीर गोपाल ।
गोसंख्वक बरनत सुमति चरवाहे नर जाल ।।२।।

तरकस

उपासंग तूनीर पुनि इषुधी तून निषंग ।
भाथ मनो मनमत्थ की पिंडुरी भरी सुरंग ।।३।।

श्री क्रस्न

बिघन हरन सब सुख करन सुंदर रस के धाम ।
प्रथम मंगलाचरन हित श्री नँद नंदन नाम ।।४।।
क्रस्न बिस्नु वावन बिमल वासुदेव भगवंत ।
बिस्वरूप परमातमा कमलाकांत अनंत ।।५।।
श्रीधर गिरिधर मुरलिधर पीताम्बर नँद नंद ।
हरि मुकुन्द गोबिन्द प्रभु पावन परमानंद ।।६।।
रिखीकेस जगदीस कह गोपालक जोगीस ।
मोहन मधु-अरि मुष्टि-अरि दामोदर जदु-ईस ।।७।।

माधव वनमाली कहत वलभाई जसमाल ।
है मुकुन्द पारथ सखा गरुडधुज जो त्रिसाल ॥८॥

अँगुली

अँगुली कर पल्लव करज करसापा पंचाप ।
नखनप कोनी कर्ष अपि अरु पुनि कहीअै काप ॥९॥

आँगन

आँगन चातुर अजर कहु वरनत सुकवि प्रवीन ।
जसुदा आँगन मध्य प्रभु माँगत माखन दीन ॥१०॥

ऊँच

उपर उर्ध उत्तान नभ वनी वितान सुवानि ।
चंद उयो ऊँचो मनो ऊपर राखो तानि ॥११॥

कपोल

गंड कपोल सुगाल तें क ऽरुहं तों करई तीय ।
स्याम जु लट छूटी मनो लखि सकात मो हीय ॥१२॥

जग्य

सप्ततन्त्र मख जग्य कृत वैसन्धर कह जाग ।
बड़ भागिन तव तूप या जग्य पूर्ख बड़ भाग ॥१३॥

जाल

कहत जाल आनाय पुनि मीन-निरोधा सोय ।
कोसन की उनमान ते कह कोबिद सब कोय ॥१४॥

ढिल्या

कहत कुवेनी सकल कहि बमसा धारी ताह ।
ढिल्या कोविद बरनहीं कविता महँ निरबाह ॥१५॥

तरकिया

मुखी खुली कंचन मई जटित लाल मनि हीर ।
जिमि निज रूप कमल कली देखियत ससि के तीर ॥१६॥

दीप्ति

भास तेज अरु रुचि त्वखा दीप्ति जु अर्चि प्रकास ।
भा अरु प्रभा जु दीप्ति के नाम करहु विश्वास ॥१७॥

वखतर

दनसन कह तिशरान पुनि वखतर दसन जो नाम ।
वद्म मरम-रच्छक कवच तनुत्रान औ धाम ॥१८॥

राहु

सिंहकेय स्वभान तनु राड (हु ?) विधुंतुद भाइ ।
बन्दन चन्द सुभृम मनहु राहु रह्यो ढिग आइ ॥१९॥

रूखे वचन

उदासीन काहल परुष तुछ अस्ति अस्थील ।
ग्राव वचन तें क्यों कहै जिनके सुंदर सील ॥२०॥

लेषन

लेषन रदनी मिस मुषी कंठी कलम कहाय ।
लिषत लिषत कै हाथ की किलक लूष ह्वै जाय ॥२१॥

सीस

उत्तमांग कं सीश सिर मोती मांग सु ढार ।
राह दुवा करि उदित मनु सोहत चंद लिलार ॥२२॥

(ख) 'अनेकार्थमंजरी' के प्रक्षिप्त दोहे

'अ' प्रति से उद्धृत

सब्द एक नाना अरथ, मोतिन कैसी दाम ।
जो नर करिहैं कंठ यह, ह्वैहैं छबि को धाम ॥१॥

अनमिष

अनमिष कहिये देवता, अनमिष मीन कहंत।
अनमिष काल कराल यह, जाको कहुं न अंत ॥२॥

अहि

अहि बासर अहि राहु पुनि, अहि इक दानव नाम।
अहि काली सिर पर नचै, नटवर वपु घनस्याम ॥३॥

कांतार

कांतार कानन कह्यो, पुनि कारन कांतार।
कांतार दुरभिच्छ पुनि, स्तुति कहिये कांतार ॥४॥

काष्ट

काष्टा काल विशेष इक, काष्ट दिशा जो आठ।
काष्ट वहुरि वासुंधरा, वुद्धहीन नर काठ ॥५॥

कुंत

कुंत सलिल औ कुंत कुस, कुंत अनल नभ काल।
कुंत कहत कवि कमल सों, कुंत जु खड्ग कराल ॥६॥

कुंतल

सूत्रधार कुंतल कह्यौ, कुंतल कपटी वेस।
खड्ग पानि कुंतल बहुरि, कुंतल कहिये केस ॥७॥

कुथ

कुथ कंथा कुथ कीट पुनि, दर्भ बहुरि कुथ होइ।
प्रातस्नाई बिप्र कुथ, कुथ करि कंवल होइ ॥८॥

कृस्ना

कृस्ना कालिंदी नदी, कृस्ना पीपलि होइ।
कृस्ना बहुरचौ द्रोपदी, हरि रखि अंबर गोइ ॥९॥

केतुकी

केतुकि नभ केतुकि कुसुम, केतुकि सूरज चंद ।
केतुकि कहत मनोज सों, केतुकि बहुरो छंद ।।१०।।

खर्जूर

गर्भ जरा खर्जूर है, बहुरि रजत खर्जूर ।
छुद्र जाति खर्जूर पुनि, अरु ताली खर्जूर ।।११।।

गुरु

गुरु नृप गुरु माता पिता, गुरु जो परो हित छंद ।
गुरु वीफै गुरु ऊँख रस, सबके गुरु गोबिंद ।।१२।।

गौरी

गौरी अप्रसूता तिया, गौरी हरदी होइ ।
गौरी गिरिजा सुंदरी, शिव अर्धंगी सोइ ।।१३।।

चक्र

चक्र चरन रथ चक्र गन, चक्र देस पुनि होइ ।
चक्रवाक खग चक्र पुनि, चक्र सुदरसन सोइ ।।१४।।

छन

छन उत्सव छन नेम पुनि, छन मुहूर्त कहियंत ।
छन यह समय न पाइये, भजि ले मन भगवंत ।।१५।।

छुद्रा

बेस्या नटी कटी हरी, मधुमाखी अरु लाख ।
इनकों कवि छूद्रा कहत, छुद्रा कहिये दाख ।।१६।।

तंत्र

तंत्र शास्त्र सुख तंत्र पुनि, सिद्ध औषधी तंत्र ।
तंत्र कहत संतान कों, सिद्ध मंत्र पुनि तंत्र ।।१७।।

द्रोन

द्रोन महिप दिस द्रोन पुनि, द्रोन कहैं गुरु कोन ।
द्रोन काक अरु द्रोन गिरि, कुरु आचारज द्रोन ॥१८॥

नंदन

नंदन चंदन को कहत, नंदन कहिये तात ।
नंदन वन पुनि इंद्र को, नँदनंदन विख्यात ॥१९॥

नेत्र

नेत्र नयन पुनि नेत्र पट, मृग मद नेत्र कहंत ।
नेत्र ज्ञान जब जगमगै, तब सूझै भगवंत ॥२०॥

परिघ

परिघ पवन जल रथ नदी, परिघ सूर ससि सेष ।
परिघ वज्र पर्वत परिघ, परिघ जो सस्त्र विशेष ॥२१॥

पलास

हरित वर्न पालास पुनि, राछस बहुरि पलास ।
द्रुम दल सकल पलास है, बहुरो ढाख पलास ॥२२॥

पुण्डरीक

पुंडरीक सायक कहै, पुंडरीक आकास ।
पुंडरीक पुनि कमल जहं, कमला को नित वास ॥२३॥

बला

बला सैन्य बसुधा बला, बला औषधी होइ ।
बला चंचला लच्छिमी, जेहि जाचे सब कोइ ॥२४॥

बलि

बलि पूजा बलि असुर पुनि, बलि तिय को मधि भाग ।
बलि कहिये पुनि लच्छिमी, जाके सदा सुहाग ॥२५॥

वारुनी

गजगति कहिये वारुनी, सुरा वारुनी नांउ।
पच्छिम दिसि पुनि वारुनी, वरुन वसै जेहि गांउ ॥२६॥

मान

मान कहावै पूजिबो, गर्ब कह्यो पुनि मान।
नाप दंड कों मान कहि, जेहि नापे परिमान ॥२७॥

सित

सित रूपा सित जन्न पुनि, सित पर लोय कहंत।
सित तीछन सित शुक्र पुनि, सित उज्वल भगवंत ॥२८॥

सिव

सिव हर सिव वसु सुक्र सिव, सिव कहिये कल्यान।
सिव सुखदायक सबन के, हरि ईस्वर भगवान ॥२९॥

सीता

सीता निधि सीता क्षमा, सीता गंगा होइ।
सीता कृषि की देवता, जेहि जीवै सब कोइ ॥३०॥

सुधा

सुधा दुग्ध बिजुरी सुधा, सुधा धवल जो धाम।
सुधा बधू धात्री सुधा, सुधा अमृत को नाम ॥३१॥

सुभा

सुभा सुधा सोभा सुभा, सुभा सुभग वरनारि।
बहुरों सुभा हरीतकी, उदर रोग की धारि ॥३२॥

स्यामा

स्यामा जुवती रज बिना, स्यामा रजनी होइ।
स्यामा प्यारी को कहैं, स्यामा रति पुनि सोइ ॥३३॥

हरिद्रा

कहत हरिद्रा बन थली, निसा हरिद्रा होइ।
बहुरि हरिद्रा मंगली, हरद हरिद्रा सोइ ॥३४॥

हार

हार मुक्त को फूल को, हार छेत्र बिस्तार।
हार बिरह कों बोलिबो, मारग कहियत हार ॥३५॥

चंपक

चंपक त्रिष वित्तान तन, रितु वसंत छवि चीर।
ये सारंग सब परम पद, परम रंग रघुवीर ॥३६॥

चित्र

चित्र कहत रवि अमीर सों, चित्र जो प्रीतम होइ।
चित्र कहत आचार्य कों, चित्र लिखत जो लोइ ॥३७॥

जुवती

जुवती बनिता पवन पी, घन तड़ि ताड़ सबूज।
पावक त्रिन घन धनुश निसि, मृग संग्राम अरूज ॥३८॥

३ पाठांतर

रूपमंजरी

७ इंदु—चंद (क) ।

८ जु कछू. . . . झाँई—जो कछू मानस रस की झांई (क) (ख) (ग) (ङ); इसके पहले 'ङ' ने यह अस्पष्ट पंक्ति दी है—इहन कह इहा अस इहां ग्रैसै, जैसी ये वस्तु प्रकासक जैसै ।

९ फटिक माँझ—झटक माहि (क) (ख) ।

१० बूँद—उदक (क) ।

११ सो कुरूप. . . . दुरावै—सो एक रूप ढिंग वदन दुरावे (क), ग्रवर जु एकु हि वदन विरावै (ख) ।

१८ हौं तिहि. . . . चहै—ते बल जो यह चलयो चहे (क) (ख) ।

२१ निरवारि पियै जो—निरवारे जोई (क) (ख) ; इहि मग. . . . सो—यह मग प्रभु पद पावे सोई (क) (ख) ।

२२ खोज. . . . सोई—खोज कर पावे सोई (क) ।

२५ सरसुति—रसिकन (क) (ख) (ग) (घ) ।

२६ ग्रति—रस (क) (ख), जस (घ) ।

२९ जौ—जे (ङ) ; फिरि—सुनि (क) (ख) ।

३० स्मित—सुमति (क), सुहत (ग) ।

३८ सठ कठपुतरी संग गह सोये को फल ताहि (ग) ।

४० का कहि—कह करि (ख) ।

४१ सु बास—सुपास (ङ) ।

४५ विमल—व्योम (क) (ख) ।

४६ फूलत ती फुलवारी—फूलन फूलन वारी (क)।
४७ उन ही फूल मालन छवि भरी (क) (ख) (ग)।
४६ अस—यह (क)।
५१ का कहियै....निकाई—कहा कहिये यह सार निकाई (क) (ख); छाई—पाई (क) (ख)।
५३ राजीव, कुसेसे—राजीवकु जैसे (क) (ख)।
५६ जनु ननकारति—जानेन कारत (क), जनु ना करति (ख)।
५६ धर्मधीर तहँ कर—धर्मधीर करत (क), धर्महि राज करत (ख), धर्मधीर तिह कर (ग)।
६२ सर आवहि....दुआरा—सुनि आवे सव राज दुवारा (क)।
६३ नित—दिन (ङ)।
६६ शोभित ऐसे वेश सुकुमारी, हिम गिरिवर जनु ही मतवारी (क)।
६७ भूषन पाई—भूषण ताई (क)।
६८ औनी—रोनी (क) (ग)।
७१ दीप न....साँझ—उदय न वारे सांज (क)।
७४ ब्याल...बखानैं—बार बार सम वाल बखाने (क) (ग)।
७६ छूटी—छुट्टी; काम-कलभ....उगी—काम कला जानो दुतिया उगी (क)।
६३ कुरूप—कुपूत (क) (ख) (ग)।
६४ मूरख....अहित—मूरख हित अहि हेत (क)।
६५ इस के बाद 'क' ने यह पंक्ति दी है—

काह करे रूप अनूप कोई, मुख पर श्वेत कुष्ठ जो होई।

१०० पुर—पर (क); बन—तब (क), तर (ख)।
१०७ इंदुबदनि....पावै—इंदु बदन तब देखन पावे (क) (ख)।
१०८ पौंछे—पाछे (क)।
११३ बरनौं....छय-कारा—वरणो जगपती को अविकार (क)।

११४ ती कौ—नीको (क) (ख) (ग)।

११७ ताही--पाई (क) (ख); आही—आई (क) (ख)।

११८ साँपिनि आही—सर्पनि सुहाई (ङ)।

११९ भाल भाग-मनि—बाल भाल मणि (क)।

१२३ चहनि-चलनि—चलत चहत (क)।

१२५ खंजन भजे—खंजन लजे (क); कंज लजे—कंज लई (ग)।

१२९ मधि—रस (क) (ग); अरुन पाट....पवारी—अरुण पाट जनु परी पनारी (क)।

१३० लसत जु हँसत—दमकत लसत (क); दाड़िम—दामिनि (क) (ख)।

१३२ छबि—मध्य (क)।

१३४ कराहीं—कहाँही (ग); अस क्यौं....नाहीं—अस क्यों कहे कित बुद्धी नाहीं (क)।

१३५ इह—ये (क) (ङ)।

१३७ परसन बाढ़यौ—परसन बैठो (क) (ग); नभसि—बिहसि (ग)।

१३९ दै—ह्वै (क)।

१४० सम माने—सनमाने (ङ); परमाने—परवाने (ङ)।

१४१ तब कही—तब की (ङ), तब गहि (ग); विवि—विच (ग)।

१४७ अरुन होत सो—अस न होत जो (क)।

१५० जे गाई—जिगाई (क)।

१५१ जस—सी (क)।

१५४ तन—तिन (ग)।

१५५ छिति—छवि (ग)।

१५८ मिले—सु मिल (ङ); सुठौन—सुठौर (ग)।

१६४ मूसति मन....करतारै—मो मति को कर सत करतारै (क), कर मीडै भरि भरि सितकारै (ख)।

१६९ कोऊ कहै—को कहुं कहे (क), का कहुं अहै (ख)।

१७१ देखत—देखन (क)।

१७३ बसै—बनै (क)।

१८३ सो सूच्छम....पैयै—सो सुख में तव ही लखि पावै (क)।

१८४ ये तौ वर—ये तव (क) (ख), ये तौब (ङ)।

१८६ करता हू के तुम—करता के तुम हीं (क)।

१८९ तिय—तो (क) (ख)।

१९४ सखिहि घुरि—सखी दुर (क)।

२०५ सखिन बूझनी—सखी यों बूझन (क); गोद लुठि—दूर दुर (क)।

२०६ कछु—को (क)।

२०९ ठाँउ—गाम (क) (ख)।

२१२ रूखन—रूपन (क)।

२१५ बान अस बाने—तान अस ताने (ग)।

२१६ बेली—वेलि की (ङ)।

२१८ इक—जनु (ङ)।

२२९ लगि—सुनि (क)।

२३५ पैयत—पाई (ङ); या—हे (क); सपन—प्रेम (क)।

२३६ काके—काहे (ङ)।

२४० हू—सो (क) (ग)।

२४१ इक....अली—इक हुती कुवरि उखा मेरी आली (ग)।

२४६ बूझि बूझि—पूछि पूछि (क)।

२५६ मरकत रस....कीनौ—मरकत मणि निचोय रस लीनो (क)।

२५७ टटावक—टटवारक (क), टटवारिक (ख)।

२६१ कहत जु मो मति—कहती तौ मति (ङ)।

२६६ सबै—और (क) (ख)।

२६७ आनँद भरी—आनंद सहित (क)।
२६६ यह—वह (ग), इह (ङ)।
२७१ तौ वह—तोऊ वे (क)।
२७३ पिय सौं मिलि—से पिय मिल (क)।
२७४ तामैं—तातैं (ङ)।
२८१ तब—तौ (ङ)।
२८२ तन—तप (ङ)।
२८६ ठकुराइत....ताकी—सुरपति रवनी कोंन वराकी (क) (ख)।
२६२ प्रीतम....परसि—प्रीतम रवि की किरन लगि (क) (ख); जागि—लागि (ङ); तन—तिहि (ङ)।
२६३ हिय में सपने—जिय में अपने (क); अपने—सपने (क)।
२६५ अपनौ आलय—अपनों आपे (ग)।
२६८ मंद हिलौर—मंदहि डोर (ङ)।
३१० खाइ—लाज (ख)।
३११ ढारा—तारा (क); मन की....ढारा—मन की गति पे हीये अधारा (ग)।
३१५ पै—की (क) (ख); विरियाँ—बरिआ (ङ); तृपति न आवै—तपत ह्वै आवे (क)।
३२६ सु निकट न—सु निकटहिं (क)।
३२७ बूझै—मूझै (ङ)।
३२८ उड़त....जिमि—अर्नव नाव विहंग जिम (ङ)।
३३० रेनु—रैंन (ङ)।
३३१ पावस—आगम (क) (ख)।
३३५ छटन छोह—छटन सों भय (क)।
३३६ छोर—छोरि (क) (ङ)।
३४४ दहै रे—दहरे (ङ); रहै रे—रहिरे (ङ)।

३४५ सो तौ. . .ये ही—सु तौ सठ चातक पातक ये ही (ङ) ।

३४८ ऐ परि. . . .जौ—ऐ परि याकों नेम मुनीजे (क) (ख) ; लाड़िली. . . .रहै तौ—लाडिली लागि अचरज गहीजे (क), अचरज लाड़िली लागि गहीजे (ख) ; लागि—लाड (ङ) ।

३४९ जब कब तब घन स्वातिन बरसै, तब भलै जाय चंचु जल परसै (ङ) ।

३५२ सुपनहि—सपन ही (ङ) ।

३५४ घन—जल (क) ; सुधि नहिं—समझ न (क) ।

३५५ अभ्यास—अभ्यस (ङ) ।

३६४ जबहि. . . .जानी—जबई सरद उवानी जानी (ङ) ।

३६८ पत्रन—रचि रचि (क) (ख) ।

३७१ बिहाला—बिशाला (क) (ख) ।

३७३ कहूँ—कहां (क) ।

३७५ सब इकसार—कमल की सार (ङ) ।

३७८ टूटहि तार कि—टूट तारक (क) (ख) ।

३८५ खंडन—खडनि (ख) ; माई—माहीं (क) ; जरा आनि . . . .जुराई—जरचा आहि कित लेहि जराही (क) ।

३९० अलि—अति (ङ); साँवरे. . .चहै—साँवरे उदर धर सोयो चहै (क) ।

४०० चुंबक—चुभत (क) ; यह—हैं (ङ) ।

४०२ तू क्यौंहुँ—तू कहू (ङ) ।

४०६ पुन सहचरी को वचन उचारा, बोली मुग्धा सुधा की धारा (क) (ख) ।

४१० जग—होय (क) ।

४१५ फाग. . . .आयौ—फाग मानो यह पटिया आयो (क) ।

४१७ होरी. . . .माई—होरी खेलन खेल उमाही (ङ) ।

४१८ नवीन—नव नवल (क) ; हौं—हो (ङ) ।

४२४ जानौं. . . .रहसि—जनु रति व्याहन रहस भरि (ङ) ।
४३२ सखी तन कुँवरी ताहि क्षण चहे, मन मन वूझे अरु इम कहे (क) ।
४३५ दुरि—हँसि (क) (ख) ।
४३७ है—वल (क) (ख) ।
४४२ कहहि—कहें (क) ।
४४४ माई—जाई (ङ) ; तव भलैं. . . .दिषराई—तब भली दृष्टि देखे दिखराई (क) ।
४४५ ऐ परि—तापर (क) ; जाकी बलि ये—तहाँ की बलि यह (क) ।
४४८ सो सखि मुख—जो सखी सुख (क) ; सुनि—सुनी (ङ) ।
४४९ किहि विध राखें क्यों रहे, रुई लपेटी आगि (क) ।
४५७ घैर—गहर (क), तहँ तै (ख) ; घर हू—गर हूँ (क) ।
४६३ बहेर तर—बहेरत उत (क), बहिरत उत (ख) ।
४६५ नाथ—राज (क) (ख) ।
४६६ इक पहिले यौं—एक पहलिये (ङ) ।
४६८ वहुरि. . . .लई—बहुरि नारि नौहरि सी लई (ङ) ।
४७० किन आनौ—किहि आनै (ङ) ।
४७६ सुभायौ—सुहायौ (ङ) ।
४८१ अँग न लगाऊँ—अंग न लाऊं (क) (ख) ।
४८४ कोउ तीर न जाई—न तीर ह्वै जाई (ङ) ।
४८५ जनु हिय घुरि—जननी दुर (क), जननी ढिग (ख) ; याही—इनही (क) ।
४८९ ता मैं—जा में (क) (ख) ।
४९० नह—नख (ख) ; नह रे—नहुरै (ङ) ।
४९४ छट—छूर (क) ।
४९५ तर—रहत (क), रहति (ख) ।
४९६ एक राउ—राउ बसंत (ख) ।

५०६ क्यौं....विना—चढ़े जाइ सिय प्यारे विना (ङ)।
५०८ चहै—लहै (ङ)।
५१७ दास विधाना—दान विधाना (क)।
५१८ मु करहि री माई—मो करो उपाई (क)।
५१९ डसनि—वसन (क)।
५२० चंदन....उगवाई—चंदन पर चंदन चरचाई (क) (ख)।
५२३ भोई—गोई (ङ)।
५२६ बूड़ि—झूंड (ङ)।
५३७ सखि—हेत (क); लपटनि—लपटन (क)।
५४६ रु—× (ङ); कौं यह—के इक (ङ)।
५५० उरसि रमाला—उर सरि माला (ग)।
५५१ भोजन भूख मिले जिम अहे, ए पर इन तव परत न कहे (क)।
५५२ अंकुर—अंतर (ङ)।
५५५ कौं मनौं—पीय पै (क) (ङ); पिय की—मानो (क) (ङ)।
इसके पश्चात् 'ङ' में यह छंद पाया जाता है—
गुणि गण गुणाण गणियं मद्दा मगा विहंग मारे हा।
तिय रस पेम पमाणं जाणं जीयणं जपियं जीहा॥
५५७ सियरे—सीतल (ङ)।
५५९ लीने....बिसाला—लेति उसास दुसास बिशाला (क)।
५६५ हरि प्रीतम—प्रीतम के (क) (ग)।
५६८ तैं—ते (ङ); हौनौं—औनौ (ङ)।
५६९–५८० इन पंक्तियों के स्थान पर 'ख' ने निम्नांकित पद्यांश दिया है—

सब ही सोभित परम उदारा। प्रिया मिली नव प्रेम अधारा॥
मधुरि मधुरि धुनि नूपुर बाजैं। घुमरि नैंन रस-भरे बिराजैं॥
रागहि मग ह्वै पिय पै जाइ। कोउ जानै इहि बैठी गाइ॥

औरै प्रेम के लच्छिन कहै। तेऊ तरुनि सु-तन में लहै॥
तिनके नाम भेद हौं कहों। जा तैं रस परिपाटी लहों॥
उत्तम-सँग उत्तम-छवि पावै। मध्यम-सँग मध्यम दिखरावै॥

जैसैं सुन्दर-मुकुर में, मुख पानिप अधिकाइ।
बुरे मुकुर में सुकर तें, भलेई सुपानिप जाइ॥

लीला छवि-विलास संभ्रमा। मोटाइत, कुटमित क्रम क्रमा॥
ललित, विहित, बिब्बोक किल किंचित। स्थाई सखी सु-पिय-हिय संचित॥
जब रंचकि पिय अंतर होई। अति अंतर सहि सकति न सोई॥
पीतम कों सखि भेष बनावै। पीतम ज्यौं हँसि चलि छबि पावै॥
प्रेम बिबसि पिय-मुख ही रहै। ताकौं कबि लीला छवि कहैं॥
पिय सुमिरै, तन तोरि जँभाई। मोट्टाइत-छवि की अधिकाई॥
बरनति बैठि रहसि की वातैं। ए ललना की रहसि सुघातैं॥
पिय सौं नव हित गरवित होइ। सो बिबोक-छवि कहियै सोइ॥
इक दिन मुदित सेज पै सोई। सुन्दर स्याम पिया रस भोई॥
भोर भएं जो सहचरि लहै। सूनी-सेज कुँवरि नहि अहै॥
सोच भरी सहचरि कहै दई। कुँवरि इहाँ तैं किहिं ठा गई॥
ढूढति भवन, भवन चित्रसारी। फिरिफिरि ढूढि फिरी फुलवारी॥
इहि का करी सुजान-पियारी। मो कों कित छोड़ी करि न्यारी॥
जल तैं बिछुरि मीन जस होई। दुखित भई अस सहचरि सोई॥

तिय-दुख सखि करतल भयों, रूपमंजरी हीन।
जल तैं बिछुरित मीन जस, होत सुदेखी दीन॥

थकि आसन बैठी सहचरी। रूपमंजरी उर मैं धरी॥
तजत भई तृन सम तन सोई। ज्यों जीरन पट त्यागत कोई॥
ज्यों रबि औ रबि की गरमाई। किरन माँझ ह्वै रबि पै जाई॥
सखी जबै वृंदाबन ढिग गई। विपिन विलोक चकित अति भई॥
धरनी चिंता मनि मन हरै। बंछित अन बंछित सब अरै॥

सब ऋतु बसनि बसंत सम जहाँ । पात पुगनन हांनि नहिं तहाँ ।।
कुसुम धूरि धूँधरि तहाँ रहै । सीतल, सुभग, पवन जहँ वहै ।।
गुंजन पुंज-भँवर छवि-छाजैं । ठौर ठौर जनु बीनहि बाजैं ।।
सुधि न रही एही छवि गोहन । राग मई कै प्रेम मई वन ।।
निकट वहैं जमुना सुख दैनी । कनक-किनारी रतन निसैनी ।।
जो रस कहियै प्रेम उदारा । सो सब बहनि कलिंदी धारा ।।

जो मुख होंहि अनंत सखि, रसना ताहि अनंत ।
वृन्दावन गुन कथन कों, तोऊँ न पहुँचै अंत ।।

नव वृन्दावन कुंजन छाँहीं । देखी जीवन-मूरि सुठाँहीं ।।
सहस सखिन सँग तहँ अति सोहैं । रमा, उमा की हू छवि को है ।।
न्दुमती प्रनाम नव कीन्हों । वे हू हँसि करि कर गहि लीन्हों ।।
कहनि मुसकि तू नों में लखी । रूपमंजरी की जनु सखी ।।
इन्दुमती जब इहि कछु सुनी । उपजि परी सिरधा सत-गुनी ।।
का कहियै तव भाग बड़ाई । जानैं तू बृन्दावन आई ।।

इहि वन दुरलभ आइबों, इन्दुमती सुनि बात ।
जाकी रंचक रज-गरज, अज से मर, पचि जात ।।

पूँछति अति आतुर सहचरी । किन है देव ! रूप-मंजरी ।।
तब इकु दीनी अपनी अली । सो लिवाइ लै तिहि ठाँ चली ।।
परचों पुहुप-इकु तहँ तैं लीनों । वह लै इन्दुमती कर दीनों ।।
ताहि सूँघि सखि अतिसुख लह्यौं । सो रस मो पै जात न कह्यौं ।।
तब क्रम क्रम वह सखी सुहाई । विहँसि रास मंडल में लाई ।।
मृदु कंचन मनिमय तहँ धरनी । मनहरनी छवि परत न वरनी ।।
जगमग जगमग अस कछु करै । दिवस कै रजनी समझ ना परै ।।
प्रेम-सई इकु ढिग तहँ केला । तापै अति रस चक्र सुमेला ।।
ठाढ़ी तहाँ नवल ब्रज बाला । मूरति धरैं मनोहर माला ।।
ठाड़े नंद-सुवन तिन माँहीं । दै बृषभानु सुता गलबाँहीं ।।

कहति सखी सन मृदु मुसिक्याई । देख्यों इन्दुमती ह्व आई ॥
कुँवरि अनूप रूपमंजरी । इन्दुमती ताकी सहचरी ॥
सुरस सुभाइ, भाइ अनुसरी । नंददास इहि लीला करी ॥
जो कोउ सुनै गुनै मन धरै । सो सहजहि मोहन बस करै ॥
जो प्रभु पद-पंकज की धूली । नित वाँछित कमलासन सूली ॥
जो रज ब्रज बृंदावन माँहीं । सो बैकुंठहि-लोक में नाहीं ॥
जो अधिकारी होइ सु पावै । बिनु अधिकारी भऐं न आवै ॥
जदपि दूरि तैं दूरि प्रभु, निगम कहति है ताहि ।
तदपि प्रेम, मन, बच गहैं, निपट निकट हैं आहि ॥

बिरहमंजरी

१ उच्छलन कौं—उछलत इक (ग), उछलन इकु (ङ) (च)।
इस दोहे के पहले 'च' ने निम्नलिखित पद्यांश दिया है—

चलन कह्यो पिय प्रात ही श्रवन सुनी तिय बात ।
बिरह बिहंगम बिषम बिष छाय गयौ सब गात ॥
पीय पयानौं जिय सुन्यौं मुखहु न आवत बोल ।
बीरी तौ अधरन रही पियरे परे कपोल ॥
अति ब्याकुल मुरझाय कैं बढी लहरि असरार ।
परी कनक के दंड लौं पट भूषन न सँभार ॥
चरन पलोटत लाल ज त न न बोरौ जीव ।
मिली अंक नैंनन भरि देखे कब आये तुम पीय ॥

३ रस-कंद—सुखकंद (क) (ङ)।
८ प्रसंन्न भये किधौ सुन्दर स्याम, सदा बसौ ब्रन्दावन धाम (छ);
भई—करी (घ), भए (च)।
९ याके—वाके (क); नंद—चंद (ग); कारन—करनौं (च)।

१६ चकित होत—थकित भए (च) ।

१७ नव—वन (ङ) ; विहरति—विरहत (ग) (च) ; विहरनि..
..अवाधा—विहरति पिय सँग रूप अगाधा (क) ।

१८ कछु इक....आई—कछु इक लहर प्रेम की आई (क), कछु
जु प्रेम लहरी कोऊ आई (ङ)।

२७ के—को (ङ) (च) ; रची—रचे (घ), परै (च) ।

३० पलक—अल्प (क) (ग) ।

३३ तनक प्रान—प्राण मात्र (क) ।

३५ विती—भती (क) (छ), तिती (घ) (च) ।

३८ मिले हे—मिलैंगे (ग) ।

३९ हिय—इक (क) (घ) (च) ।

५५ तिहिं—तिनि (ङ) ।

५९ पाँचवान—पाँच प्राण (क) ।

६१ नीर तैं—तीर में (क) ।

७९ चंदन चरचत जिनकौं सियरे, तिनकौं नंद सुवन पद नियरे (च) ।

८१ मो दुख तन—मो दुखित न (क) ।

८३ विपिन—त्रियन (क) ।

८९ कह्यौ—करै (क), रटै (च) ।

९३ बदरा बने—बदर बनैत (छ) ।

९४ जैसैं—अलि (छ) ।

९७ परौरत—मरोरति (ख) ; वाहि—जाहि (क) ।

९९ आये नहिं....भवन—आये नहि कारन कवन (च) ।

१०० सभी पोथियों ने "मदन की ढाला" पाठ दिया है। केवल 'क'
तथा 'ख' में इसके स्थान पर "मदन के व्याला" पाठ पाया जाता है।

१०५ पिय के—तियनि के (क) ।

११३ घन हर—घन अरु (क) (ख) ।

१२० जव—वय (क) ।

१२१ झर—डर (छ) ।

१३६ जैसैं....सुहाइ—जेसें वलि वलि उनही सुहाइ (क) ।

१३७ वेलि—वलित (छ) ; बेलि, मल्लिका—मल्लि वल्लिका (ग) ।

१३८ उहै—भयौ (क) ।

१४२ ता करि—ता सुर (च) ।

१४६ जोग वनि—योग जोवन (क) ।

१५६ सोये—सूने (छ) ।

१६७ सदन—सुवन (ग) ।

१७० लै—लौं (ग), ज्यौं (च) ।

१७१ जात नहिं—जान विन (क), जान मनि (छ) ।

१७८ पवन—अगिनि (क) (घ) ।

१८० मास मास—महा मास (क); कदन—बिरह (च), दिवस (छ);

१८१ लपटि कै—पलटि कै (ग) ।

१८२ न खेलौ—न खेलहि (ग) (ङ) ।

१८३ कोउक....आइहै—पिय तुमहीं पें आय हें (क) ।

१८७ घरिक—घरीक (क), घरी इक (छ) ; वात....अटपटी—प्रेम की रीति निपट अटपटी (क), उपजी बिरह प्रीति अटपटी (च) ।

१९२ निसि—भाल (छ) ।

१९४ आलस....नैंन—सालस रस भरे चंचल नयन (क) ।

२००–२०१ और भांत व्रज को बिरह, वने न काहू अंग ।
पूरनता हरि बृंद की, परत तास में भंग ॥ (क) ।

रसमंजरी

३ कछुक—कछू (ग) ; संसार—संसारा (क) (ख) ; आधार—आधारा (क) (ख) ।

५ वरनौ—वरनें (क), करनौ (घ)।

७ वरैं—वह्रैं (ग) ; सब तामैं—सब तिन में (क) (ख) (घ), सविता मैं (ग) ; रैं—रहै (ग)।

८ तुम तैं....सोहै—तुम्हरी माया सब जग मोहै (ग)।

१३ रति समेत—रति सु समैं (ग)।

१४ जानै—जानैं (ग) (घ) ; प्रेम न तत्व—प्रेम तत्व न (ग) ; पिछानै—पिछानैं (ग) (घ)।

१६ मधुलिह—मधुप (क)।

१६ देख्यौ—चाह्यौ (ग)।

२० अब—नव (ग), तव (ङ) ; मोहव—मोहित (क) (ख) (ङ)।

२३ ता कहुँ कर—ताहि कलह (क), ताही करि (ङ)।

२७ इस के स्थान पर 'ग' ने यह दोहा दिया है—

तू सुनि लै रस मंजरी, भरी प्रेंम प्रमोद।
वुद्ध जनम अलिगन रसिक, सरसे सरद विनोद॥

२८ अनुसारि कै—अनुसार के (क) (ख) (ग)।

३१ पुनि—वहुरि (क) (ख)।

३२ पुनि—सब (ग)।

३३ मुग्धा....गनी—तहां मुग्ध दुविधा करि गनी (ग) ; उत्तर उत्तर ज्यौं—ज्यौं उत्तर उत्तर (क) (ख) (ङ)।

३५ लाज....संकुरै—मिल्यो न पिय हिय परसति डरै (ग) ; इस पंक्ति के वाद 'ग' ने यह पंक्ति दी है—आखैं आफार सम सूधी, वंक विलोकनि मैं नहिं लूधी।

३६ भूषन....ताकी—भोरी निपट अवस्था ताकी (ग)।

३७ पंकज—कर (ग) ; सेज—सैंन (ग)।

३८ वह—उर (क) (ख)।

४५ प्रेम भाउ—भाव प्रेम (क) (ख)।

४६ अनुरागी—अनुरँगी (ग) ; मुसकि. . . .लागी—मुसकि सखी कूँ चाहन लागी (क) ।

४७ नवल—सु नव (ग) ।

४९ मुक्ता फल—मुक्ता मैं (ग); इस के बाद 'ग' ने निम्नांकित अतिरिक्त पंक्तियाँ दी हैं—

वचन सुधा समुद्र की लहरी, उपजति लागी अति रस गहरी।
क्रिया मनोहर हिया मनोहर, कछू कछु ऊचे भये पयोधर।
पिय समीप जब पौढै बाल, का कहिये छबि निपट रसाल।

५१ उरज. . . .करै—उर जुग मद्धि बांधि इक करै (ग) ; बाँधि इक—बांधी एक (क) ।

५५ सौं—को (क) ।

५६ डरति—अरति (ख) (ग) ; होइ—कोय (घ) ।

६१ इस के बाद 'ग' ने ये अतिरिक्त पंक्तियाँ दी हैं—

नवला निकसति तीर जब, नीर चुवत वर चीर।
जनु असुवनि रोवत वसन, तन बिछुरन की पीर।।
जिमिजिमिविविकुचउच्च छबिलहैं, तिमि तिमि नैंन बंकता गहैं।
ज्यौं कोपिय सुन पर उद्दो चाहि, कुटिल होइ न सकै तन ताहि।
अज हूँ उरज उतंग सु नाहि, मेर श्रिंग छबि फिरि फिरि जाहि।

६३ इक ठाँ बिबि—इकठे भये (क), इकठे भय (घ) ।

६८ मोहन—सोहन (घ) ।

६९ ग्रहन—रहत (क) (ख) ; रम्यौ . . . .संग—रम्यो चहे नव रस नव रंग (क) ।

७१ छूट हिय हार विहार सब, सूंध्यो करे कच हार (क) ।

७२ मध्या—मध्यम (क) ; परी सु—परिमल (क) ; अधार—अपार (ग) ।

७३ तिहि—जिय (क) ।

७४ कलाप—कलानि (क) ; चहै—वहै (ग) ।

७७ रस ऐनी—गज गवनी (ग), रस रैनी (घ); मो....दैनी —सा रस वोढ़ा प्रौढ़ा रवनी (ग) ।

८३ पल्लव—कमल (ग) ।

८५ भ्रमत—वसत (क), जगत (घ) ; श्रमित—भ्रमित (क) ।

९१ मिलि—वनि (घ) ।

९२ अविंग कहै—व्यंग करै (क) ; रिस—रस (क) (ग) ।

९३–९५ विंगि अविंगि वचन रिस सानैं, कहै पीय सौं सागस जानैं। रवाकंत अहो कंत पियारे, मोहन सोहन नाथ हमारे। नव अनुराग चतुर नंदलाला, नव किसोर चित चोर रसाला (ग) ।

९६ जोई—जो है (ग) ; सोई—सो है (ग) ।

९८ अनुनय—विनय जु (घ) ।

९९ सुधा सी—सुधा की (क) ; रूप की—रूप सी (घ) ।

१०० सेज न....भोरी—सेज नवसि लाज जिय थोरी (क), सेज मांन लजसि क्यों भोरी (घ) ।

१०१ भ्रकुटि....लहियै—सखि तन कोप करति ज्यौं लहियै (ग) । स के बाद 'ग' ने यह पंक्ति दी है—सुंदर पिय कौहु सागस जानि, कनखै अनखै भोंहनि तानि ।

१०४ पुनि....निवारै—पुनि पंकज लै कोपु निवारै (ख) (ग) ।

१०६ रसीले—सलोने (क), रसीलौ (ग) ।

१०८ रिस-रस—रस रिस (क) (ग) ।

१०९ इहि....लहियै—कछु प्रन दिढ़ कछु अदिढ़ लहीये (घ) ।

११७ इक जहां—है तहां (घ) ।

११८ पय—रस (घ) ; मारग—सारंग (ग) ।

१२० लच्छन....पाई—लक्षण चिह्न कर जो लखि पाई (क) ।

१३१ निज—सव (क) (ख) (घ) ।

१३३ पौढ़ि—सोइ (क) ।

१३४ जामिनि—भामिनी (क) ।

१३५ पिय विनु पति विरहानल दहै, कछूक कहै कछू नहि कहै (ग)।

१३७ सोइ—लेय (क), तेई (घ) ; कटि—पट (क)। इसके वाद 'ग' ने यह पंक्ति दी है—चंदन तन चितयौ नहि जाइ, आगि रुचै पै वह न सुहाइ।

१३८ इसके वाद 'ग' ने यह पंक्ति दी है—भली करहि जौ न दिन माही, प्रांन पियारे आँवें नाही।

१४२ कर—मुर (क) ।

१४७ परकिय बिरहिनि—वाल बिरहिनी (क)।

१४८ सखि जव—सासु जु (ग) (घ)।

१५१ मिटै—बुझै (घ)। 'ग' ने इस दोहे के स्थान पर निम्नांकित पद्यांश दिया है—

उघरि पिया कौं बिरहु जनावै, भीतर कहइ कि क व द वुलावै।
मरिच मेलि लोचन जल नावै, द्वार देस ठाढी दिखरावै।
इहि परकार जुवति जो लहिये, सो सामांन्य प्रोषितपतिका कहिये।
रसाभास जस जान्यौं जाइ, सो सामांन्य प्रोषितपतिका लहिये।
अरु या करि समुझे ए लोइ, प्रेंम बिडंव करौ जिनि कोइ।
नंद निपट कपटहि तजै, तन मन बिरही होइ।
उहि रस भीनें बिरह बिनु, पियहि न पावै कोइ॥

१५६ ते प्रीतम ....चहै—प्रीतम तें पूछों नहिं चहै (ख)।

१५८ कछुवै नहिं—कछु बैन न (घ)।

१६० दुरावै—भिलावै (घ)।

१६१ इहि प्रकार तिया प्रीति जनावै, सा मध्या खंडिता कहावै (घ)।

१६५ ढकहु छती नख—कहुं कहुं नख क्षत (क)।

१६६ ऐ परि—ऊपर (क)।

१६८ गर—कर (घ) ; गंडनि श्रम-कन—गंडन श्रम के कण (क) ।
१७० दूती....तरेरै—दूती तन करि नैनन तारै (घ) ।
१७७ जो—जव (घ) ।
१७६ घुरि—धरि (क) ।
१८५ मैं—मो (घ) ।
१८७ अली अदिष्ट—अलिक दृष्ट (क) (ख) ।
१८६ गरुये गुर—गुरु वे जे (क) ।
१६० नीति....बिरराई—त्यों त्यों सहचरी सों चिर राई (क) (ख) ।
१६१ सम—सरि (घ) ।
१६२ अपमाने—अनमाने (घ) ; विकूलयै—प्रतिकूलहि (क) (ख) ।
१६४ काउ—काय (क) (ख) ।
१६७ आरति करि—अरति कंप (घ) ; जुड़ाई—जनाई (क) (ख) ।
१६८ सु है—वहै (क) (ख) ।
१६६ अज हूँ—पिय जु (घ) ।
२०० मन ही मन—मन ई मन (घ) ; मूझै—सूझै (क), खूझै (ख) ।
२०५ परचौ—परे (क); घूम....सयानी—घूमति फिरै कछु कहति न आनी (ख) ।
२०८ वहिन—मनहि (क) (ख) ।
२१२ वारिद....लियौ—वारिद वाहिर रहिबो लियो (क) ।
२१३ दिढ़—इम (क) (ख) ।
२१७ परै—लरै (क) ।
२२३ लहै—चहै (घ) ।
२३५ इसके वाद 'क' ने यह पंक्ति दी है—दूती कुसुम बीजना बीजै, ता पर सतर ओह कर खीजे ।
२३७ सज्जन सघन बन मांझ तहां, गुरु गहेबर बन बेलि (क) (ख) ।
२४२ दीप सँवारि—दीपहि बारि (घ) ।

२५३ सास कौं स्वावै—स्वास कूं खावे (क), अलसान दिखावै (ख)।

२६२ कहत....वार—कहत सुभग धन वन की बार (क), कहति सुभग धन वनहि वहार (ख)।

२६५ जाहि—ताहि (घ)।

२७३ जिमि—तिहि (घ)।

२७५ काकौ—की को (घ)।

२७६ मंजु कुंज—कुंज सदन (घ)।

२८० सुकुमारा—सुकुमारी (ख); बारिधर-धारा—बाँह धरि प्यारी (ख)।

२८२ इसके बाद 'ङ' ने यह दोहा दिया है—

जो कछु निरवधि प्रेम रस, गुणी गुणत जग मांहि।
सो परकिय तिय में वसे, विलसे सुकृती तांहि॥

२८३ पार्स्व—पास (क), पारिस (घ)।

२८६ कछु अति नहिं—नहिं अतिशय (क) (ख)।

२८७ गरिमता—गरमता (क), उरूजता (ख)।

२८८ नहिं चलनि—कछु भई (क) (ख) (घ); बक्रिमा—वक्रता (क) (ख)।

२९१ धरनी धसि परौं—वरणी खिस परे (क), धरनी पर परौं (ख)।

२९४ तौ—तू (क)।

२९५ अरग अरग इमि सखी सों कहै, मध्या स्वाधीन पतिका वहै (क)।

२९९ मोहीं....पीया—भरि भरि रही प्रेम रस हीया (क) (ख)।

३०० रैनी—वेनी (क), अैनी (ख)।

३१७ बियोग—विवोग (घ); की—कि (घ); इह बियोग....नहियाँ—यह वियोग ज्वर त्यजत स्वकीया (क), इहि वियोग जुर तजति न करिया (ख)।

३१८ चंपक कुसुम वन भोंर परे रे, देत जु गंध मरण कहुं ने रे (क) (ख)।

३१९ परलोकहु—परलोक हो (क)।

३२५ तपन जाचना—तपत यातना (क) (ख); तन कौं—तन के (क)।

३२७ जुगति—युवति (क); तोहि—जो ही (क)।

३३५ इस के बाद 'घ' ने यह पंक्ति दी है—जो पिय कनक कहु करुनावै, पाटी तरै परचो तिहि पावै।

३३७ वाल भाल में तिलक वनावे, गुहि गुहि फूल माल पहिरावे (क) (ख) (घ)।

३४० वल—मिस (क) (ख)।

३४५ भीतर....लहै—सव के मुख सुख अंतर लहे (क)।

३५२ रे नग! मग—रेन गमन (क)।

३५५ जोइ—आही (क), आई (घ); सोइ—ताही (क)।

३७४ तन....जनावै—ह्रिदय कंप बैबर्न जनावै (ग)।

३७५ इस के वाद 'ख' ने निम्नांकित पद्यांश दिया है—

दूती बरनी चारि प्रक़ारि, तिय पिय प्रेंम बढ़ावनि हारि।
प्रथमहि एकु निसृष्ट सु अरथा, पुनि बरनी तातैं अमितरथा।
तिसरी पत्र हारनी गुनीं, चौथी स्वयंदूतिका सुनीं।
प्रथमहि तन कों भाव विचारै, बुद्धि आपुनी पुनि अवधारै।
तव अति दुहुन भरोसों देइ, भार सबै अपने सिर लेइ।
जुलिहि जुलि जु आनि मिलावै, दूति निपृष्टि अर्थिन कहवावै।
जाहि अनेक फुरहि चातुरी, लखि पावहि पिय की आतुरी।
अगम ठौरि तैं नाहिंन डरै, लुकअंजन दै तहँ संचरै।
अस कछु बातैं कहै वनाई, पिय हि मैन-मय करै सुहाई।
तुरतहि आन मिलावै जोई, अमितार्थी कहावति सोई।
जो कछु पठिवै दै नँद-नंदन, माला फूल फुलेल, सु चंदन।
दै आवै, तहँ तैं लै आवै, पत्र हारिनी दूति कहावै।

दृष्टि परैं जब मोंहन लाल, उठति अनंग सु अंग विसाल।
धीरज गलित गलित पुनि बीरा, तनकहि में ह्वै जाति अधीरा।
पिय तन तनक कनखियन झंकै, नाभी कुच प्रगटै वरु ढंकै।
नैन सैन संकेत जनावै, स्वयंदूतिका सु तिय कहावै।
इतने लच्छिन तू सब जानि, तासों परम प्रेम पहिचानि।

मानमंजरी नाममाला

१ पद—श्री (अ)।
२ करुनार्नव—करुना रवन (आ); जिन—जा (अ) (च)।
३ समुझि—उचरि (अ) (ए)।
४ लगि—हित (अ) ; रची—रचत (अ)।
५ गुंथनि—ग्रंथन (अ) ; नाम—ग्रंथ (आ) ; की—के (अ) (ए)।
६ मिलैं—मिले (अ)।
८ करत—कर (अ), करै (आ), करौ (इ)।
१० बृषभान—नंदलाल (इ) (ए) (क) (ख) (घ) (च)।
१३ गिरा—इड़ा (आ) (इ)।
१५ सत्वर—सद्य (ए)।
२० महारजत—भर्म्मरजत (ए)।
२१ जातरूप....देत—हेम सु सौंने के सदन बनैं जहां छबि देत (ग)।
२२ तहां—निरखि (ए) ; निज—मिलि (आ), सब (इ)।
२३ रुक्म—सुकम (आ)।
२८ दुति—छबि (अ) ; दिखि—लखि (अ)।
३० रस्मि....होति—पादभांन दीधितिरस्मि रवि ससि जगमग होति (ए)।

३५ व्याघरु हरि जक्ष केसरी घेरी व्याघ्र गजारि (ए)।

३६ द्वीपी—हथी (अ); सेर सूर भनि सारदूल पलभक्ष सिंघ मृगारि (ए)।

४३ अनकप—अनगय (अ) (आ) (उ)।

४७ ये जु....करि—अष्टसिद्धि जो कष्ट करि (अ); लहै—लहत (आ)।

४८ सो—ते (आ) (ए)।

५१ या—जे (ए)।

५२ ते सव वल्लभराइ के—तेई श्री वृ भान के (ए)।

५३ मुक्ति—मोक्ष (अ)।

५४ पद—सुख (आ) (उ)।

५६ वृषभान की पौरि झुकि—वृषभान के पौरि पर (अ)।

५७ महीपति—परिव्रढी (आ) (उ); प्रभुपति—प्रजापति (ए)।

५८ बनि, वैठे—तहँ बैठी (अ)।

६६ तहँ, जहँ—जहँ तहँ (आ) (उ)।

६६ पुनि—जन (अ)।

८० विहँसत—विहसै (इ) (ए)।

८२ ठाँ ठाँ—ठाढ़े (अ) (आ) (इ) (उ)।

८३ होइ—नाम (इ)।

८४ बने जु गज मोती भवन मनहु सुक्र की दाम (इ)।

६१ करि—कहि (आ); वंदन अभिनव प्रनति पति अभिवंदन करि ताहि (इ)।

६२ आगे....अलि—सकुच अली आगे चली (अ); वर—बुधि (आ)।

६४ चली—सखी (अ) (आ) (उ)।

६६ कंदुक सोइ उछीर—कंडुक सोई छीर (आ) (उ)।

१०० उठँगि—उझकि (अ) ।

१०१ कुसुम, सु सुमन—सुमनस सुमन (अ) (ए) ।

१०२ कर वर—वर कर (अ) ; उदगम प्रसव लतांन की फूल गेंद कर भांम (ए) ।

१०५ सेखर अलिक रु गोधिका पट वैदीय जराइ (ए) ; पट—मधि (अ) (क) (च) ।

१०७ अक्षन—ईक्षण (ए) ।

११२ फूली—खुली न (अ), फूली न (ए) ।

११३ वनित–बिंबु (अ) (ऊ) ।

११४ जिनके—जिन कौ (आ) (उ) ; जिनके....ही—लिखत लिखक के हाथ की (इ), दसन वसन के लिखत ही (ए) ।

११५ रदन....रद—दसन दंत द्विज रदन रद (अ) ; रस—रँग (अ) (आ) (उ) ।

११६ नव....जमे—नव नीरज मधि जनु कमल (अ), ओपि धरे जनु कमल मो (इ) ; जमे—जमैं (आ) (उ) ; उज्जल—विज्जुल (अ) ।

११८ मुहकरि—मुहखर (इ), मुख कर (च), मुख पर (छ) ; की, मुहकरि—की कहु मुह (आ), की कहूं महूं (उ), महंमोंगहर (ख), के मुकुरित (घ) ।

१२३ कर—पुनि (ए) ; कबहूँ....कपोल—कर पर धरे कपोल (ए) ।

१२५ कैन—कून (उ) ; गल, नल....कैन—गल कंधर ग्रीवा पुनि गल कपोल कोयान (ऊ) ।

१२६ सो—सव (ए) ; सो छबि....ऐन —सब छबि कीनो पान (ऊ) ।

१२८ कंचन संपुट देवता पूजत पाये मैंन (आ) (उ) ।

१३३ वासन—वासस (ए)।

१३४ नील वस्त्र मैं दीप जनु दमकत गोर सरीर (अ)।

१३७ सु दर्पन—सुकर तिय (आ)।

१३८ पिय-मूरति....देति—नैननि में पिय झलकि लखि बहुर डारि तिहि देत (अ)।

१४० वहुरचौ—तरजति (अ)।

१४१ ताम्बूल अहिवेलिदल द्विज मुख मंडन पान (अ)।

१४२ नहिन खाति अनखाति अति भर जो रही मन मान (अ)।

१४३ सामय—साँमज (आ)।

१४४ वड़ी वेर सखि तन चितै रंचक बोली वाल (अ), वड़ी वेर लों सहचरीं देखी वाल रसाल (ख)।

१४५ अंबु—अंभ (अ)।

१४६ पापारि—वा पारि (अ)।

१४८ कपीट—कपीठ (अ), कुपीठ (आ)।

१४९ कै—मुख (आ) (उ)।

१५६ परत—मिलत (अ) (ए); यौं—त्यौं (अ); तिहिं दिखि—देखत तोहि (अ), तो दिखि (आ)।

१५८ छोभ....निरखि—छोभ भरी सुंदरि लखी (अ), छोभ भरी तिय कों निरखि (ए)।

१६१ तंद्रा—तन्द्री (ए)।

१६५ आह्वय—अहवय (आ), आहुव (ए); धाम—नाम (आ) (उ)।

१६६ या दरस जिहि—तुव दरस ते (अ); तैं—भे (अ)।

१७१ अज....पिता—पिता स्वयंभू आत्मभू (इ) (क); विधना—बेधा (आ)।

१७६ पुनि—उस (ए), ऊस (ङ)।

१७७ तैसैं—तैसी (अ) ; कुँवर—कुँवरि (अ) ।

१७८ बीय—होइ (अ) ।

१८२ तुव—तू (आ) (उ) ; रची....तीय—रची विरंच न कोइ (अ) ।

१८३ कुरुराउ—कुरुराइ (अ) ।

१८४ तेरे सौति अभाउ—सो तेरे अति भाइ (अ) ; नाम युधिष्ठिर जानिये भजि लीजै जदुराइ (ग) ।

१८५ निगम नदी—निगमपदी (आ) (उ) ।

१८६ ध्रुवनंदा—स्वर्गनदी (अ) ।

१८७ तिहुँ—इहिं (अ) इ) ; सुभकारि—सुखकारि (आ)(उ)।

१८८ सरित—सरति (ए) ; बिय—सम (ऊ) ।

१८९ तुंग—तुंद्र (इ), तंद्र (ए) ।

१९० कहि—हे (अ), यह (ऊ) ।

१९२ अपघन—उपघन (ए) (क) (ङ) (छ) ; संहनन—संग्रहन (अ) ।

२०० अंज—अंवुज (आ) (उ) ; ससिधर हिमकर निसाकर कुमुद-बंधु हिमरोम (अ) ।

२०२ कौं—वह (अ), लहि (इ) ।

२०३ मदन मनोभव पंचसर मथन कुसुमसर मार (अ) ; समर—अतन (ए) ।

२०४ अति सुकुमार—बिरह बिदार (अ) (उ) (ऊ) ।

२०५ मनमथ मनसिज आत्मभू संबर दलन अनंग (इ) ।

२०६ पुहुप चाप हु छय बितन दिन दूलह नव रंग (इ) ।

२१० भवँर नाम जुरि मौरवी होत काम सिरमौर (ए) ।

२१२ बनै—कछू (अ) ; बिद्युत संप विजाग विज्ज दामिनि घन बिन सोइ (ए) ।

२१६ प्रीतमा—प्रणयनी (इ) (च), प्राणपति (ए)।
२१७ विष्नी—वल्ली (अ)।
२२० पै—सौं (आ) (उ)।
२२३ पुनि—मृतु (ए)।
२३४ अति—थर (अ)।
२३८ सो तुव पिय पद—हरि पद पंकज (ए); नाहिं सु बेर—नाहिंन वेर (ए)।
२४६ तंत—तात (आ)।
२४९ बंचक—जिह्व (आ) (उ) (ए)।
२५१ सारँग—कुरंग (अ)।
२५२ मृग, कुरंग से—मृग सिसु कैसे (अ); इतराहि—अनखाहि (आ)।
२५३ मलीन, मसि—अमीव पुनि (ए)।
२५५ दहन-दव—दवन वद (अ) (उ)।
२६१ श्रोनित....पुनि—श्रोनित रक्तककौनि पुनि (आ) (ए), श्रोणित रक्त कोण्यप जु पुनि (ऊ)।
२६४ निसाचरा—निसाचर जु (आ), निसाचर रु (ए)।
२६८ रेनु कौं—रेनुका (अ)।
२७९ कहत....जाहि—खंडन तम संसार (अ)।
२८० सो कान्हर कपटी कियो जग जाके आधार (अ)।
२८४ हौइ जौ—होत है (अ) (उ)।
२८९ केत नाम जुरि मदन ह्वै सिंध चंद ढिग आइ (ए)।
२९२ कौस्तुभ-अवधि—कुस्तभ अब्धि (अ)।
२९३ सुंदर—मोहन (अ); पीय—लाल (अ)।
२९४ तिहिं—हिलि (अ); तीय—वल (अ)।
२९९ जमुना भेदी तालधुज प्रलंवघ्न जल वेत (ए)।

३०३ उरवरा—लोर्वरा (ए)।

३०७ सवधर जिहि—राखी धर (अ)।

३०८ आवै—आवत (अ), आंनहि (ए) ; कौ—के (ए)।

३१० सर—कण (आ) (उ) (ए)।

३१५ जलजोति—जलजोनि (अ), जल जोन्ह (ग) (घ)।

३१७ फूलत, फल—फल फूल न (ए)।

३१८ जिनके हिये—ते जीव बलि (ए)।

३३६ वस—रस (आ) (ए) ; हुती—हुते (अ)।

३४२ चलहु वलि—छैल अब (अ), छैल चलि (ए) ; जिनि करि इतनौ—छाँडि जीय को (अ), छांडि छिमा करि (ए)।

३४४ मैं इकले दई—माह अकेल है (अ)।

३४६ अबार—विचार (अ)।

३५२ अनखाति—इतराति (अ)।

३६१ संख्य—संक (आ), संग (ए)।

३६३ सुरति....सौं—कदन संकि जुध सुरत पिय (ए)।

३६६ माया—मया (ए) (च) (छ)।

३७२ जितौ तेतौ—जिते ताते (अ)।

३७४ चितवत ह्वै है पीय इमि जिमि ससि उदित चकोर (अ)।

३७६ स्रोतास्वती निम्नगा पगा द्विरेफा सोइ (ए)।

३८२ सांति....नहीं—सात परज जासों भयो (अ), संति पति जु भयो नहि (आ), सात फेरी तौ भइ नहि (घ) ; दुख....नाह —दुख न देत वह नाह (अ)।

३८३ सुरा, वारुनी होइ—मधुर मछनी हेय (आ), बहुरि मधुरनी होइ (उ)।

३८४ हलिप्रिया—मधुवारा (ए)।

३८६ कोउ—को (ए) ; कहति—वकति (अ) (आ) (ए)।

३८९ अंध तिमर अनकाव तम ध्वांत कुहर नीहार (ए) ।
३९० तिमिर मिटो मग माँझ को वदन चंद उजियार (अ) ।
३९३ तरे—तल (अ) ।
३९५ छदन—वर्ह (ए) ; तरु—सव (अ) ।
३९६ भ्रम—मैं (अ) ।
३९७ हरि—मरु (अ) ।
४०४ फिरि—बलि (अ) ; लोग—सोग (अ) ।
४०५ अनंत—नितंत (ए) ।
४१३ संकट तुदन दहन—अक दून तुद गहन (आ) (ए) ; पुनि—
अघ (अ) ।
४१६ क्यौ जैहै वलि सोइ रहु जैहै उठि परभात (अ) ।
४१७ वज्र सु तेरे—वज्र सु तुरे (अ) , उलका तेरी (ए) ।
४१८ परे—परचौ (ए) ; धाम—सीस (आ), वज्र (ए) ।
४२० पियहि मिलि—पीय पे (ए) ; न—कि (अ) ।
४२३ जु तिय—कुँवरि (अ) ।
४२४ सोभित. . . .तैं—उज्जल जलधर ते मनों (अ) , महल धौर-
हर तें मनों (ए) ।
४२६ जौन्ह. . . .तैं—जोन्ह तुल्ल परसत वदन (अ) ।
४२९ सोइ—सो (ए) , अरु (अ) ।
४३० दिखि—लखि (अ) ।
४३२ यातैं—दिन दिन (अ) ।
४३५ रँग—मद (अ) ।
४३६ तुव आगम आनंद जनु करत परसपर वात (आ) ।
४४० अंबुवास—अंबुवसा (आ) (ए) (ख) ।
४४५ गुडफूल—सुरफूल (आ) ।
४५० यह कदली बलि पाँ परै तुव जंघन उनहार (अ) ।

४५३ सहज—यह जु (श्र) ।
४५४ बैठे....कालिह—जा तर बैठे काल (श्र) ।
४५६ जिहि—जह (श्रा) ; चढ़ि—कलि (श्रा) ।
४५७ किंसुक—यह लखि (श्रा) ।
४५८ नहन—नहुर (श्र) ।
४६१ लांगूल पुनि—पुनि लागली (श्र) ।
४६२ श्रहो नारि वर—श्रायो फलपति (श्र) ; करत—करन (श्र) ।
४६४ वारी वारी—वार वार यह (श्र) ; इन—या (श्र) ।
४६६ कैंछ न छू—कौन छुश्रै (श्र) ।
४६६ तंदुला—तंडला (श्रा) (ए) ।
४७१ गहैं—गहत (श्र) ; कहति—भाखै (श्र) ।
४७४ पुनि पूतना—बिजया जया (ए) ।
४८१ स्वादी—माध्वी (ए) ।
४८२ प्रयाला—प्रवाला (श्र) ।
४८३ इहि—जिहि (श्र) ।
४८४ गसीली—गुसीली (ए) ।
४८६ केसरि दृग भरि पग धरति कहति कि बलि बलि जाँउ (श्र) ।
४६० तुमहिं देखि फूली जु श्रति, बलि रंचक इत चाहि (श्र) ।
४६४ मूरि बलि—पग परति (श्र) ।
४६६ दुपहरिया....बलि—दुपहर फूलत फूल जे (श्र) ।
४६६ ताली तृनद्रुम केतकी खर्जूरी यह श्राहि (श्र) ।
५०० बलि—तैं (श्र) ।
५०३ बालुका—पुलिकनि (ए) ।
५०४ इहिं....मेलि—रंचक मुख में मेलि (श्र) ।
५०६ इतहिं....परति—इत माध्वी की पा परति (श्र), इत माधविका पाँ परति (श्रा) ।

५१० सब....रोध—सब सुख को अवरोध (अ)।
५१६ जनु—बलि (अ); परमनि—पकरनि (ए)।
५१८ तीर तीर—ढिग ढिग (अ)।
५२० तर—बलि (अ), तहां (ए); जहँ बैठे—बैठे हैं (ए)।

अनेकार्थमंजरी

१ जु प्रभु....जगत-मय—जो प्रभु जोति सु जगत मय (इ) (उ)।
२ विघन—अशुभ (आ); सुभ—सुख (इ) (उ)।
४ तैं—की (अ)।
५ अरु....असमर्थ—समुझन कों असमर्थ (इ), अर्थ ग्यान असमर्थ (आ)।
६ भाख्यौ 'अनेका अर्थ'—भापानेकाअर्थ (इ), भाखि अनेक जु अर्थ (आ), रचत अनेका अर्थ (छ)।
८ तरु—तर (छ)।
१० सुरभी चारत—सुरभि चरावत (छ); सुरभी चंपक वन कहे जो जग करता कंत (उ)।
११ मधु चैत्र—तरु चैत्र (आ)।
१४ तहँ अवर—ते और (इ), निहि और (ग) (ङ), महि और (घ)।
१७ कहत कवि—कोस इक (आ)।
१८ अर्जुन....धनंजय—बहुरि धनंजय अर्जुनहि (ग)।
१९ अथ्थ—हथ्थ (अ) (ग)।
२० मद्धिम—केकी (आ)।
२१ रथ—सर (आ)।
२२ उड़ि....मित्त—उड़ि उड़ि मिलिते मित्त (आ)।
२४ पत्री सर....जिमि—पत्री सरवक चित्त जिय (अ)।

२८ घनीभूत—धनीभूत (अ) (च) (छ), घन मूरत (इ)।

३१ अरु वाम—कुच धनुष (आ); वाम काम—वाम जुवति (आ)।

३५ कं सुख पथ जल तन अनल, बिधि द्युति सिर सठ काँम (आ)।

३६ कं कंचन चित प्रीति ज्यौं यों भजिए रे हरि नाम (आ)।

३७ खं नभ पुर भू द्यौ नखत, ग्यान रंध्र सुख धाम (आ)।

३९ कोइ—होइ (इ)।

४२ कर....मन—करज बिखय सम तजि बिखय (अ)।

४३ कवि—दरि (आ)।

४४ कुँवरि—कुँवर (ग) (छ)।

४७ बृख सुरपति गो कर्म बर शूद्र बृखभ वल काँम (आ)।

५३ कौं कहत कबि—मूरख उडद (आ)।

५४ गोपिन—सो पल (अ)।

५५ बहुरि—धरम (आ) (ख) (ङ)।

६४ सरस—अमृत (आ) (इ) (उ)।

६५ सार वज्र....सार—थिर वल पवि घृतसार (आ)।

६६ सवन कौ—बित बर (आ); मही परचौ—जिनि मोह्यो (उ), सहीपरचो (क), मही धरचो (ख), महिवालो (ग), महिचाल्यौ (च)।

६७ सावकहि....उत्ताल—साव कों, कोडी ऊँट उत्ताल (आ)।

७० रमानिवास—राम निवास (इ) (उ)।

७१ वन्हि....नीर—बन्हि रवि प्रभा किरनि सिव नीर (आ)।

७२ वसु धन जग—बसु नृप धन (आ)।

७६ रस—रँग (अ) (आ) (ज)।

८१ हंस रबि—धर्म रबि (आ); हंस मराल—तपी मराल (आ)।

८२ हंस जीव....कबि—हंस गेह नृप जीव सिव (आ)।

८५ कहावै—सुष्क फल (आ) ; आहि पुनि —रु चलनो (आ) ।
९३ वाल चिहुर अहिकांस तुर जल सिसु मूक जु बाल (आ) ।
९५ जाल गन—नीप गण (आ) ।
९६ दिखि न....नँद-नंद—निरखि भूलि जनि नंद (इ) ।
१०४ जलज....फिरावते—जलज कमल कर फेरतै (इ) ।
१०८ उर धरि—उर धर (ख) (छ) (ग) ।
१११ जाल—नाम (आ) (घ) ।
११२ आवत मदन गुपाल—वनि आवत घन स्याम (आ) (च) ।
११७ कहावै—गेह अरु (आ) ; पोत जु पत्र—करट पात्र (आ) ।
११८ जग—जल (आ) ।
१२० भयौ—भए (इ) ।
१२१ कहंत कवि— पुनि सतत (आ) ।
१२३ कौं कहत कवि—उपसम कहत (अ) ।
१३८ उड़प चंद उड़परु गरुड़ श्री गरुड़ध्वज वाह (अ) ।
१३९ मंद सतत सनि अल्प खल रोगी पाप स्वछंद (आ) ।
१४३ स्यंदन....कवि—स्यंदन सुर जल तरु निगम (आ) ।
१४४ चढ़ि—जिहिं (इ) (छ) ।
१४५ मंथी मदन—मथिवौ मदन (आ) ; मंथी ग्राह—दिनकर ग्राह (आ) ।
१४६ जिहि....खंड—हरि कीने विवि खंड (आ), जो हरि कियो विखंड (इ) ।
१५३ संबर असुर—वातप असुर (आ) ।
१५५ गोगल—गौवल (अ) ; तर—तन (अ) (आ) (ग) (च) ।
१५७ नग....नग रतन—नग कहि अहि द्रुम रबि रतन (आ) ।
१५९ अरु नाग—जीमूत (आ) ; नाग दुष्ट—मखी दुष्ट (आ) ।
१६१ कहत—प्रसभ (आ) ।

१६३ कौं कहत कवि—तांबूल भय (आ)।
१६४ जानहिं भगवंत—जानै श्री कंत (आ)।
१६५ अज कहियै....ईस—अज विल्व रु अज ईस (आ)।
१६६ अज....नर कहत—अज जोवन भर कहत अज (अ), अज जोवन अज कहत नभ (उ), अज जोवन भरि नर कहत (ग)।
१६७ सिव सुख—शुक्र कील (आ); श्रेष्ठ—जेष्ट (आ)।
१६८ सलिल पुनि—वल लियौ (आ); कृष्न-दास—कृष्न-सदा (आ)।
१६९ गात—राति (आ)।
१७१ जूगरी—ऊगरी (क), वल्लरी (ख), ल्हंवरी (ङ), गूजरी (छ)।
१७४ सिव—सब (इ)।
१७८ जहाँ वसे बलबीर—वसे जाइ वलवीर (इ)।
१७९ औ कंबु—अरु बलय (अ); इष्ट—दृष्टि (आ), दुष्ट (ख) (छ)।
१८५ अन्न—अल्प (इ)।
१८९ कहियै—जननी (आ)।
१९३ कहत कबि—मेघ धुनि (आ)।
१९६ जिहिं—जिन (इ)।
१९९ तिय इला—तिय बचन (आ); इला उमा—गेऊ उमा (आ)।
२०२ अनंदहि—अलिंदहि (आ)।
२०५ इडा कहत....अभिराम—इडा वचन गो वर्ष जल सुरकाभू अभिराम (आ)।
२१० बिधि बिधि जोई—बिधि के विधि जो (इ)।
२१२ घट घट....गूढ़—घट परगट है गूढ़ (अ)।
२१४ नर हीरा—हरि हीरा (आ)।
२१५ कृतांत सिद्धांत—अदिष्ट सिद्धांत (आ)।
२१६ जम कृतांत की—पाप कर्म जम (अ)।

२२२ कुदंड—कुंडल (अ) ।
२३३ अरु—रस (आ) ; अरु रस नीर—रस अरु नीर (इ) ।
२३७ जो. . . .सदा—जो इहि अनेका अर्थ कौं (आ), जोइ अनेका अरथ को (इ) ।
२३८ मो. . . .लहै—ताकौं अनेक अर्थ वुधि (अ) ।

स्यामसगाई

१ नंद—स्याम (अ) ।
३ महरि—राय (ग) (ङ) (च) (छ) ; कह्यौ—चह्यौ (अ) (ख) ।
४ मो—मेरे (ग) (ङ) (च) (छ) (ज) ; गोविँद—श्री गोविंद (घ), जो गोविंद (ङ) ।
५ सोहनी—सोहती (अ) (ख) (ज) ।
६ एक—रहसि (छ) ; द्विज—व्रज (क) (ङ) (च) (छ) ।
७ मरम—प्रेम (च) ।
८ करियौ वहु—बहुत करो (क) (च) ।
१० सोहनी—अधिक है (ग) (ज) ।
११ बेगि—पौरि (अ), दौरि (ख), तुरत (छ) ।
१२ तहँ—के (ग) (घ) (च) (छ) ; बैठि. . . .चलाई—मरम की बात चलाई (क) ।
१३ जिन—हौं (अ) (क) (ख), हम (ग), उन (घ) (च), में (ज) ।
१४ वहुतहि करि अरदास—तुम सुनौ बीनती तास (च) ।
१६ मेरौ अति—इत मेरौ (अ) (ख) ।
२१ कीरति—रानी (अ) (क) ; सु हौं नहि करौं—नाहि ने हम करें (ग) । नाहि हम करत (च) ।

२४ कहत सुनत....और—राजनीति जानै नहि करत ओर सूं ओर (च) (छ)।

२६ फिरि—पुनि (अ) (ख) (ग) (ङ)।

३१ मैया लाल सौं कहै—जसुमति लालहिं कहति (अ)।

३२ जहँ करियत तो—जहँ कहीयत तेरी (ग) (ञ); जहाँ चलै तेरी (च) (ञ)।

३३ तोइ—तोहि (ग) (छ)।

३४ उनहूँ वहि—तिनहूँ बहि (अ), वह रानी (क), उन हमकु (च)।

३६ कहत यौं—कही तव (च)।

४५ मनहि—कुवर (ञ)।

४८ देखि सखी बुझन लगी मुखै चुचावत नीर (च) (ज)।

५४ स्याम स्याम कू कहि उठी कैइक वार अनेक (ज)।

५५ प्रेम की लहरि सों (ञ)।

५६ वतावैं—वताऊँ (अ) (ख)।

५८ पूँछै तो—पूछैगी (च)।

५९ मीत गुपाल की—मंत्री स्याम कौ (च)।

६१ कुँवरि—लई (अ) (क) (ख); पकरि....लाई—पकरि कें सुंदरि लाई (ग)।

६२ विवस दसा लखि—जब निरखी निज (ग) (च) (ञ)।

६५ कह्यौ—कुंवरि (ग)।

७१ समुझाइ—मुसिक्याय (ग)।

७३ जौ....माइ—पठबै बाकी माइ (अ), जौ पठवै वाकी माइ (ञ)।

७४ गारुड़ी—गारडु (ग) (झ), गाडरू (ञ)।

८६ रहसि—दौरि (अ) (ख) (ञ), हर्ष (क)।

८७ दौरि—चले (अ) (ख), तुरत (छ)।

८८ ग्वालिन....कै—लखि गुपाल झगरन लगे (अ) (ख), देखि सखी बूझन लगे (छ)।

८९ कह्यौ....आइ—कौंन गाँव सों आइ (ख), कौन गाम तै आय (क) (झ) ; ए तो नारि गँवारि है, मति बहिकैं तू माइ (अ)।

९० सोझ हमसों कहो (झ)।

९१ तेरी....वलाई—तेरी हौं लैंहु वलैया (अ) (ख), मै तेरी लैहु वलैया (ज)।

९२ ग्वालिनी तित तैं आई—ए तित तैं आई मैया (अ), ए तित तैं आई भैया (ख)।

९५ लाल जस लीजियै (झ)।

९६ सुनैं—कहन (झ), सुने (ञ) ; ताहि —कहो (झ) ; कौन वाइगी....वतायौ—मैया मैं गाररु किनि सुन्यौ कह्यौ कि मोहि सिखायौ (च), मैया सु मसिक्याय कह्यौ जव नंददुलारे (छ)।

९७ परपंचिनि तुम ग्वालि—तुम ग्वालिनि परपंच (च) (ञ) ; अरी कौने कीए गाररु कौने मंत्र सिखाए (छ)।

१०६ समौ मुकरन कौ नाहीं—साँवरे कुँवर कन्हाई (अ)।

१०७ कुँवरि जीवैगी नाहीं—कुँवरि जीवन की नाईं (अ), कुँवरि वचनै की नाहीं (च)।

१०८ सम—सौं (अ), सिर (च), सरि (छ)।

१०९ बृंदावन मैं साँवरे—तुम श्री वृंदावन मैं आगरे (च), मथुरा मै हरि अवतरे (ज)।

११२ मोहिं राधे—मोइ कुँवरि (अ)।

११८ लीने—लीये (च)।

११९ ततछन—पावन (झ)।

१२१ लाई—ल्याई (अ) (ख)।

१२३ फूँक—मंत्र (ख) (झ) (ञ) ; निज—हरि (ख) (झ)।

१२४ धन—विधि (अ) (ख) ; है—ए (अ) (क) (ख) (ग)।

१२८ सब अपने घर—सब अपने ढिग (अ) (ख), अंग अंग छवि (च) (छ) (ज)।

१२९ मन दीनौ मुसकाइ—मधुर मधुर मुसकाइ (अ) (ख), मन दीयो मुकलाय (च) (छ), मुख दीयौ मुकलाय (ञ)।

१३१ कौ प्रेम—की रीति (च) (छ) (ज) (झ) (ञ)।

१३४ छ्वाइ—छाइ (अ) (ख) (च) (ञ) ; गर—गहि (अ) (ख) (ञ)।

१३९ बटत—बजत (अ)। 'ज' ने अंतिम छंद इस प्रकार दिया है—

तबई लाल की भई सगाई, फूले ग्वाल अंगनहि माई।
गावत गीत राग रस भरे, सबै मैन से लागत खरे।
समचार जसुमत नै पाये, आंगन सुंदर चौक पुराये।
कुल की बधू बुलायकै, करत आरती माय।
श्री कृष्न चंद्र के चरन पर, तारपान बलि जाय॥

इसी प्रकार के पद्यांश 'च' तथा 'छ' में भी पाए जाते हैं किंतु उन में 'तारपान' की छाप नहीं है।

भँवरगीत

३ रसरूपिनी—सरूपनी (ख), रस रोपिनी (झ) ; उपजावनि—उपजावत (ग) ; सुख—रस (क)।

५ नागरी—बासिनी (ग) (ङ) (च)।

६ कह्यौ—कहौं (ग), कहन (घ) (च) (ज) (ट) (ठ); लायौ—आयौ (ख) (घ) (च) (ज) (ट) (ठ)।

१२ भरि—भरयौ (ग), भरे (झ) ; द्रुम—दृग (क) (ग) (घ) (ङ) (च) (छ) (ज)।

१६ और—बहुरि (ट) (ठ)।
१८ विहसित—विहसत (ख) (ग) (झ) (ट) (ठ)।
२३ आयौ—पठयौ (ख) (घ) (च)।
२४ जिनि जिय—तुम जिनि (क) (घ) (च)।
२७ अलक—कमल (ट) (ठ)।
२८ धरनी—धरती (झ)।
२९ प्रबोधहीं—प्रमोधियो (ख), प्रमोद की (छ) (झ) ; बात बनाइ—बैन सुनाय (छ) (ठ)।
३२ ब्रह्म सब रूप—रूप सब उनहिं (ट) (ठ); निर्विकार निज रूप आप अपने हृदै पेखौ (च)।
३३ माहिं—महि (ट) (ठ)।
३४ बरतत—पर्बत (क) (ग) (ङ) (छ) (ज) (झ)।
३८ श्रुति, नासिका—मन प्रान मै (ग) (छ) ; दिखाइ—लखाय (ट) (ठ)।
४१ यह सब सगुन—सरगुन सबे (ख) (घ) (च) (ज)।
४४ है—की (झ), हीं (ट) (ठ)।
४७ को बन बन —बन बन को (क) (च) (ज) (ट) (ठ)।
४९ ह्वै—है (क) (घ) (ङ) (च), हैं (ट) (ठ)।
५२ तैं—मै (क) (च) (छ) (ठ), सों (ट)।
५३ गुन—कौ (घ) (च) (ज) ; अवतारि कै—अवतार है (घ) (च) (ज) , अवतार ह्वै (ट) (ठ)।
५४ पुर—पर (क) (ख) (ङ), पद (घ) (ज) (झ)।
५६ पावौ—भावै (घ) (ठ), पावौं (ट)।
५७ गावौ—गामै (घ), गावौं (ट), गावै (ठ)।
६६ धर्म—धूरि (क) (ग) (छ) (ट) (ठ)।
६९ कर्म बंध—कर्म बद्ध (ट) (ठ)।

७१ कर्महि निंदौ कहा—तुम कर्म निंदौ कहा (क), तुम कर्महि कस निन्दत (ठ)।

७८ भोग—नर्क (ट)।

७९ रोग—गर्क (ट)।

८१ कोउ धारै—कौं धारैं (क) (ख) (ङ) (च)।

८२ द्वार—धारि (ख) (ग) (ठ)।

८३ सिद्धि—सुंन्य (घ)।

८४ जोतिहि—जोति में (क) (ग) (ध) (ङ)।

८८ यह—ये (छ)।

८९ आयौ—आये (ख) (ङ) (छ); पूजहीं—पूजियै (क) (ख) (ग) (घ) (च)।

९१ वतावैं—बखानैं (क) (ट) (ठ)।

९२ रचि—चारि (ख), रुचि (ग), रिचा (क) (घ) (छ) (ज), सव (ट); उपनिषद जु—ऊपर सुख (ठ); जु गावैं—वखानैं (ट); गावैं—सानैं (ठ)।

९३ नहिं पायौ गुन —पायो किनहूँ न (क) (ग) (झ)।

९४ कहौ—कहि (च), कहु (घ), कह (ट) (ठ); टेक—हेत (ख) (च)।

९९ न्यारे भये—न्यारो भयो (ख)।

१०२ वा—उन (ट) (ठ)।

१०४ कौं—कै (क) (ङ), कहि (छ)।

१०९ ही—हो (ट) (ठ)।

१११ प्रेमहि—प्रेम हु (क), ब्रह्म हू (ख) (च) (ज), प्रेम जो (ठ)।

११३ तरनि चंद्र—रतनचन्द्र (क), तरून चंद्र (ख) (घ) (ङ) (च) (झ), श्रीकृष्णचंद्र (ग)।

११६ तरनि—रतन (क); तरनि अकास प्रकास—तरुनाकार पर-

कास (ख) (घ) (च) (ज), तरुन अकार प्रकास (ग) (ढ) (ण) ; तेजमय—ते जामैं (क) (ग) (घ) (च) (ढ) (ण), मे जामैं (ख), ते जमपुर (ज)।

११७ दिव्य दृष्टि ही भलै रूप वह देखौ जाई (ग) (च) (छ) (ज) (झ)।

१२१ जव—जो (घ); हू—ह्वै (ग) (छ); तामैं—या मैं (ट), जामैं (ठ)।

१२२ तैं—कातैं (ट) (ठ)।

१२३ करम....किये—करम करम कर ही किये (झ), करम करम ही किये तै (ट), क्रम क्रम कर्म सवहि किये (ठ)।

१२४ ह्वै—करि (क) (ख) (ङ) (च) (ज) (झ)।

१२६ ह्वै—क्यों (ट) (ठ) ; कर्म....आवै—कर्म क्यों वंदन, आय वे ये (ख)।

१३१ आवैं—आवै (क) (ख) (घ) (ङ) ; नस्वर हैं—नहिं ईस्वर (ट) (ठ)।

१३४ तिन कौं—जिन को (ख)।

१४१ ऐसैं मैं—एक समें (ख), यते ही मै (ग)।

१४२ वने बीरे अरु—वनी वीरी अरु (ग), वन्यौ पियिरे अरु (घ), लसे उर पियरे (ट)।

१४३ कहैं—कहि (ग) (च) ; तिन....वात—कहत जु तासौं वात (घ), करत तिनहिं संग वात (ट), वैठि सकुच कह वात (ठ)।

१४४ चुचात—चुवात (ट) (ठ)।

१५४ बहुत पाइ—वौहौताइति (क) (ग) (झ), वहोत भांति (ख) (घ) (च) (ज) (ठ)।

१५८ सब रस—सब दरस (ग) (च) (छ) (झ), परबस (ट) (ठ)।

१५९ पराधीन जो मीन—प्रेमातुर जो मीन (ज), गहिरे जल की मीन (ट) (ठ)।

१६४ अबला-बध—अवला वधु (क), अवला वुद्धि (ठ) ; डरि गये—
दुरि गये (क) (ढ), डर गईं (ठ) ; बड़े....माहिं—वली बुरे जग माहि (ख), बली डरे जग्य माहि (च) (झ), बली डरैं जग माहिं (ट) (ठ) ।

१६८ लई—लीये (ख) (ग) (घ) (ङ), लये (ट) (ठ) ।

१६९ विरह....हौ—अव विरहानल दहेत हो (ख), विरह अनल अब दाह है (ग), विरह अनिल अब जारि हो (घ) विरह अनल तैं दहत हौ (ट) ।

१७४ पय पीवत ही पूतना मारी बाल चरित्र (ठ) ।

१८२ लच्छ....धरे—लघु लाघव संधान बान (घ) (च) ; सूरे —रूरे (ट) (ठ) ।

१८४ श्रवन नासिका काटि कै दीयो सुर्य वंश कुल लोप (ज) ।

२०३ ठाढ़ौ—ठाढ़े (ट) (ठ) ; हो—भयो (क) (च) (छ), है (झ), हैं (ठ) ।

२०६ इहि—यहि (ट) (ठ) ।

२०७ तहाँ कछु—विवस्था (घ) ; तहाँ....लागी—कछू सोचन मन लायो (च), तहाँ ते देखन लागी (ट) (ठ) ।

२११ नेम—भरम (ग) (ङ) (छ) (झ) ।

२२२ पुंज—बूंद (घ) (च) ।

२२४ मन....भयौ—मानहु मन ऊधव कौ भयौ (क), मनु मधुकर ऊधव कौं भयौ (ट) ।

२२६ उत्तर—उत्तम (क) (ख) (ग) ।

२२८ तुम....चोर—तुम मानत हम चोर (ट) (ठ) ।

२३२ मसिहारे—मति हारे (क), मुसन हारे (ख), मुसिहारे (ग) (ज), विष वारे (ट) ।

२५३ हरि भाँति कौं—सब भांति कै (ट) (ठ) ।

२५४ यह....वधू—हसि बोली व्रजवासनी (घ), ऐसै बोरी व्रज वासिनी (झ), यह बौरी व्रजवासिनी (ट) (ठ)।

२७४ निर्गुन भए अतीत के सगुन सकल जग माहिं (क) (ख) (ट) (ठ)।

२७७ कूवरीनाथ—कूवरीदास (ख) (छ) (झ)।

२८० जरत या बोल कौं (क) (ख) (ङ)।

२८५ कोटि जो ग्यान है (ग) (च) (ज)।

२८६ मोहन....होहि—मोहन निर्गुन होइ गहे (ट), मोहन निर्गुन को गहे (ठ)।

२९६ गीत—कहत (ख) (घ) (ट) (ठ)।

२९८ रोई—रुदित (ग), रोइँ (ट)।

३०१ नैंन....धारहि—अंस लै वन की धारनि (क), असु लोचन की धारनि (ख), सिंधु लै तन की धारनि (ट) (ठ)।

३०२ भुज बल अवला जाति कंचकी भूपन हारहि (ग) (च) (ज), वसननि उलटे गात कंचुकी भूपन धारन (घ) ; वहुगुन—भूषन (ट) (ठ)।

३०३ प्रेम-पयोधि—प्रेम औ वंध (क), अरु बिंद (ग) (घ) (ज) ; ऊधौ चले बहाइ—ओर न कछु सुहाय (ग) (ज)।

३१३ हौं कही—हौं तो कहि (ट) ; की—सौं (ठ) ; रोपि—रूप (क) (ख) (घ) (ङ)।

३१४ हैं—है (क) (ख) (ग) (च), ह्वै (ठ)।

३१७ प्रेम-पदवी—प्रेम पद पी (ठ)।

३१८ सब—सत (छ) (झ)।

३२३ उर....बाध—उर में धरी हो वाध (ख), उर मे रह्यो व्याधि (ट), उर मद रह्यो उपाध (ठ) ; बाध—वाढ़ि (ग) (ज) (झ)।

३२७ लौह-मात्र—लोह तुरत (घ) (ट) (ठ)।

३३३ मारग....धूरि—ह्वै पग मारग धूरि (ठ)।
३४४ का करै—कहा करै (क), कहा करौं (छ), का करौं (ट) (ठ)।
३५२ तव—जव (ट) (ठ); लहै लाख—कहौं लाख (क), नहिं लखौ (ट) (ठ)।
३५६ चलौ—स्याम (ट) (ठ)।
३७४ 'नंददास'—जन मुकुंद (क) (ख) (ङ) (छ) (ढ) (ण)।

रुक्मिनी मंगल

२ कथा कहूँ—यथा कहूँ (ख), कहों यथा (घ); पावत—पावन (ख)।
३ चित्त—जो चित (घ); सुनै-सुनावै—सुनैं-सुनावैं (ख) (घ)।
४ मिटैं—मिटै (ख) (घ); पावै—पावैं (ख) (घ)।
७ बिछुरि—छुटी (ग)।
८ नाल तैं—माल तै (ग)।
१० अलिन-दल—अलिंदनि (ग)।
११ पूछति—पूछैं (ग), बूझे (घ); बात—बाल (ग)।
१४ पूछें सुंदर मुख मूंदें तिहि उत्तर देई (ग)।
१५ बदन तैं लहिहै—बदन में लहई (ग)।
१६ बिरहिनि—कन्या (क) (ख); कन्या बिरहनि तासों कासों वा तव कहई (ग)।
१७ के हार, उदार—की माल जोरि (क), की माल सखी (ख); सखी—जब जव (ख)।
१८ सौं—कर (ग); अर सौं—अर सैं (ख) (घ)।
१९ जुर—जरैं (ख)।
२२ भरै—भरैं (ख)।
२३ दुरी....आरति—दुरी रहत क्यौं पिय रत (ग)।

५ चितत—झंपत (क) (ख), जपत ही (ग)।

७ छाजत—राजत (घ) ; ह्वै गई कछुक विवरन छीन तन यों छवि छायौ (ग)।

० कर-कंकन....आहीं—कर कँगना द्रग जलकन ह्वै जाही (ग)।

१ टप टप....तैं—टपक टपक छबी नेनेन सों (क) टप टप, टप टप टपकि नैन सों (ख)।

१२ दल तैं भल—दल पर ते (क), दल तिन तें (घ)।

१३ कवहुँक—कवहू (ग)।

१४ पीय—कंत (ग)।

१५ अवा-उर—अवा तन (ख), अवा जिम (घ)।

१६ लाल—लाज (ग), लाच (घ)।

१७ अव धौं—दई अब (घ)।

१६ हठ—हट (ख)।

४० भठ—भट (क)।

४५ तिन—जिन (क) (ख); अज से—अजहूँ (क)।

४६ सिव—सुक (घ)।

४८ नाना—रुकमनि (क) (ख)।

४९ वात—लाज (ग) (घ)।

५० पिया—पीय (ग)।

५१ नाथ-हाथ....तुम—नाथ हाथ लै तुम ही (क)।

५२ एती—इतनी (ग) (घ)।

५५ माधुरी—छबि ढुरी (ग), छबि धुरी (घ) ; चाहि कै.... चित—बिप्र है रह्यौ चकित चित (क)।

५६ छवि—जिन (क)।

५८ अमृत फलन सौं फूले फूलैं सुर मुन लेखैं (क), अमृत फलन सों फले फरे सुर वर मन लेखैं (ख)।

६० तिन—जिन (क) ; रव—वर (क) ।
६१ शुक सारिक पिक चातिक मीठी धुनि सों रटई (ग) ।
६२ सुढार—सुधार (ग) ।
६६ सरोवर. . . .तैसें—सरोवर मिरा जु क जैसो (क) ; प्रफुलित . . . .तैसें—प्रफुलित चंद त व र इंद्री जीव कू तैसें (ग) ।
६८ मनो रवि डर तम तजि भज्यौ रोवत ये वारे (ग) ।
७० जोति होति—होति जोति (ग) ।
७१ फरकैं, अरकैं—फरकत झलकत (ग) ; जहँ—जहाँ (क) (ग) ।
७२ घाम न परसत क कवहू नित ही छांह तिनहि तहां (ग) ।
७३ मग—मुख (ग) ।
७५ उड़ी—बनी (ग) ।
७७ जैसैई देव बिमान द्वारका देखन आये (क) ।
७६ हरष भयौ—भयौ हरषि (ग) ।
८६ जदुपति कों लखि द्विजपति मन में अति सचु पायो (क) जदु परखद मध जदुपत कों लख द्विज सचु पायो (घ) ।
६१ किधौं. . . .मैं—किधो मणि मंडल मैं (क), किधौ कि मनि मंडल मैं (ख) ।
६२ किरन—करण (क), करनन (ख) ; महा—अति (ख) ।
६६ लै. . . .कौं—ल्याय चले गृह द्विज बर कौं (ग) ।
६७ मन—मनौं (ग) ; ऐन—औन (घ) ।
१०६ प्रेम-रस—प्रीति के (ग) ।
११० पुनि—अब (ग) ।
११३ श्रुति-बास—सुख हास (क), सुखदास (ख), श्रुति हास (घ) ।
११४ सुंदर मुनिवर श्री गोबिंद तुम सब वरदाइक (क) ।
११७ विलग. . . .जनियै—बिलगु मानियैं नाहि जानियैं (ख), अलग नाहिन मनियें गनियें (ग) ।

१२० भाये—भाय (ख) ; अमृत—अमी (ग) ।

१२२ हौं—हम (क) ; नाथ तुम भये—नाथ भये नाथ (ग) (घ) ।

१२३ अब अनहित नाहिन करयौ वरयौ त्रिभुवन मन सुंदर (ग) ।

१२४ नित्य परम अभिराम स्याम सुख धाम पुरंदर (ग) ।

१२५ भरे, वरे—भरै वरै (क), भरे सरे (ग) ।

१२६ कौल—कूटि (क), कूट (ख) ; परे—धरे (ग), मरे (घ) ; छिन ही. . . .तंतर—छिन छिन परतंतर (ग), छिन छिनही निरंतर (घ) ।

१२७ पानिप—पानिय (ख) ; धोरे—ढोरे (ग) (घ) ।

१२८ हार—हरिहि (ख) ।

१२९ सठ—सट (ख) ।

१३० चट तैं मठ—चठ ते मठ (क), चट तैं मट (ख) ।

१३१ करत. . . .मरियै—मरियै लाज यहै तो (ग) ।

१३२ वारत वृंदा विदारन बल गोमाय यहै तो (ग) ।

१३३ जू बलहि—निज मनस (ग), निज संस (घ); विचारौ—विचारै (ग) (घ) ।

१३४ विडारौ—जुठारै (ग) (घ) ।

१३५ देखत याकौं—देखि तिया कौं (ख), निरखत याको (ग) (घ) ।

१३६ तुम सव विधि लायक अछित छिपे सिसुपाल छिपा कौ (ख), तुम तौ सव विधि लाइक अछित छुवौ न छिया कौ (ग) ।

१३७ नागर नगधर नंद कुवर मोहि करिहौ न दासी (क) ।

१३८ परि—घर (क) ; तन की—तन तिन (क), तन तृन (घ) ; तौ पर हरि पावक जरहों करहों तन तिन कासी (ग) ।

१४० स्याल. . . .कर—छुये सिसुपाल स्याल कर (क) ।

१४२ तैं—पै (ख) ।

१४५ करत—कहत (क) (ख) ; वात—हसत (क) (ख) ।

१४७ लाऊँ रुकमिनि—दुलहिन लाऊँ (क) (ख)।

१४८ सार, अगिनि-कन—अगिनि सार किनि (क)।

१४९ आरति, हरि अरबर सौं—अरबर दरवर दै इम (ग) (घ)।

१५० मन. . . .करे—मन की सी गति तन की करि हरि (ग)।

१५२ कर तपत करी—के तेज दुखित (क), कर दुखित भई (घ)।

१५४ उदै ज्यौं—उदै विनु (ख), उदित जैसें (घ)।

१५५ वाम भुजा लगी—बायें अंग लगे (ग) ; फरकन लागी भुजा-वाम कंचुकि-बँध तरकन (ख)।

१५६ हिय सों दुख लाग्यो सरकन उरवर लाग्यो भरकन (ग)।

१५७ ताही. . . .चलि—तिह छिन द्विज बर चल्यौ चल्यौ (क)।

१५९ पूँछि न सकै—पूछ न सकत (क), पुँछ न सकत (ख)।

१६६ ताकी कहा कहियै—ताकी का कहियें (ख), तिहि कू कहा चहियैं (ग)।

१६९ अँग. . . .के—अंग सुख दैन जु हिंत के (ख)।

१७२ ललित. . . .पगिया—ललित लसैं सिर पागें (क); तकि तकि—तकैं तक (ख)।

१७३ कोउ घुघरारी निरखत भौहन भेट भए है (क)।

१७४ दोऊ दृगन छवि गिनत गिनावत ही जुर रहे है (ख)।

१८३ कोऊ. . . .अंग के—कोई यक नेननि अटक गए ते (क), कोऊ इक नैननि अटकि गयं ह्वै (ख)।

१८६ चित्र. . . .अलि—चंप माल स स्याम परस अलि (क), चंप-माल सिसुपाल परस अलि (ख), जंत्र कमल संसार नीर पर (घ) ; अलि—डिरि (ग)।

१८७ बर—यह (ग) ; बर नाइक—बड़ नाथ (ख)।

१८८ संठ—सुनहु (क) (ख) ; संठ रुक्मी—सठ जु रुकमि (ग), संठ रुक्मिन (घ)।

१८६ याही वरैहै—आई वरहै (क), ये ही वरिहैं (ख)।

१६० परैहै—परी है (क), जु परि है (ख)।

१६२ परे—कर (ग); ओज उवारे—ओज उचारे (ख), ज्यों अंगारे (ग)।

१६३ उन—इन (क) (ख); वतायौ—वुलायौ (क)।

१६५ ऊजन—उज्जल (क)।

१६७ मंदर—मंदिर (ख), मंडल (घ); कंदर घन ज्यौं—कंकन नव घन (क), गगन मैं नभ घन (ख), किंकिनी नव घन (घ)।

१६८ सव—सो (क) (ख), सुर (घ)।

२१२ चलै तिन सौं—झक तिन सों (ग), झखे तीन सौं (घ)।

२१४ वीन—वैन (क) (ख)।

२१५ अवनि....उनमानी—अव परें यों अनुमाने (ग)।

२१६ अपनी—अवनी (ग); जानी—जाने (ग)।

२१७ देखति छवि सौं छली अपन-वर आरत उलही (ख), ये सव छवि छल अपनी हरि को अर्पन उलही (घ)।

२२१ छवि राजत—झिलमिलत (ग), अक्षत छवि (घ)।

२२२ वदल—वदरि (ख); दमकत दामिनि अंकुर अरुन कमल में जैसें (ग)।

२२३ श्रवननि—छुटकी (क) (ख)।

२२५ दिये—लिये (क), लियैं (ख)।

२२७ मुरझि—भुरसि (ख); उरझि उरेझा—उरसि उरेसा (ख)।

२२८ वेझा—वेसा (ख)।

२३३ छवि सों रथहि चलाइ आंन रुकमिन जव आई (ग)।

२३५ कछु—इम (ख)।

२४४ जूप—पूप (ख), लूप (घ); लागे वज मारे—लारे वज-मारे (ग)।

२४५ दै—तैं (ख) ।
२४६ मागध....पायौ—मग अति दुख पाये (ग) ।
२५० आयौ—आये (ग) ।
२५१ कर कंगना दुख दूनौ दुख करि रोय जु दीनौ (ग) ।
२५२ पुनि—वहि (ख), तिन (घ) ।
२६३ चित—हित (क) ।
२६५ सो....भावै—सो सब मंगल पावै (क) ।

रासपंचाध्यायी

१ करौं—करौ (क) (घ) ।
४ नग—मग (छ) (ज) (ञ) ।
७ ललित, बिसाल सुभाल—सुंदर भाल विसाल (छ) (ज) (ञ) ।
८ प्रतिबिंब—प्रतिबंध (ख) (ञ) (ठ) ।
१० रसासव—रसामृत (ज) ।
११ भवन—भरन (छ) (ज) (झ) (ञ) ।
१२ मिली सु मंद—मिलि तासु मंद (छ) (ज) (ञ) ; मिली—मिलै (झ) ।
१४ बिच—मधि (ङ) (ञ) ; भाँति—भाति (ठ) ।
१५ प्रकासै—प्रकासें (ग) (घ) (छ) (ज) (झ) ।
२० हियौ—हिय (छ) (ज) (ञ) ; भरि—भरी (च) (छ) (ज), पूरि (ञ) ।
२१ अस सोभित—सोभित अति (घ) (झ) ।
२२ भाति—भाँति (छ) (ज) (ञ) (ठ) ।
२७ मुक्ति—मुक्त (ख) (छ) (ज) (झ) ।
३६ सुकुमार—सुक-सार (ञ) ।

३९ जिन—तिन (ख) (ग) (छ) (ज) (ञ), यह (क) (च)।
४० तातैं मैं—ताही ते (ख) (छ) (ज) (ञ)।
४५ वीरुध—विरुधी (छ) (ज) (झ) ; तून—तन (ख) (छ) (ज) (झ) (ञ)।
४६ प्रभाउ—प्रभा (क) (ख) (घ) (च) ; परत न काल प्रभाव सदा सोभित हैं ते ते (ञ)।
४९ संत वसंत—संतत वसत (क) (च)।
५१ ज्यौं—जो (छ) (ज) (ञ)।
५२ भू—भ्रू (छ) (ज) (ञ) ; जगत—ज्योति (घ) ; तित—कित (ड)।
६५ अति सुही—सुही ज्यौं (छ) (ञ)।
७० धर—घर (छ) (ज) (ञ) (ड)।
७३ तट—नित (ख) (ङ) (ज)।
७४ दौरि जनु—दूरि लौं (छ) (ञ) ; मनि मंडित दोऊ तीर उठै छवि भरि अति लहरी (ङ), मणि मंदिर दोउ तीर उठत छवि अद्भुत भारी (ज)।
७५ तहाँ इक मणिमय सिंह पीठ सोभित सुन्दर अति (छ) (ज)।
८० रुचिर....जस—रुचिर निबिड़ मध्य लागत उड़पति जस (छ), रुचिर निबिड़ उर लागत पति जस (ज)।
८५ आक्रांत—रुचि लिए (ज)।
९० मधुर हँसि—मरुत वस (छ) (ञ), मधुर हरि (ज)।
१०० बिहँसति—विलसति (छ) (ञ), बहसन (ज)।
१०३ अरुनिमा, बन मैं—अरुन वा वन मे (घ) (झ), अरुन नभ वन मैं (छ) (ञ); अरुन मनो वन ब्याप (ज)।
११० चतुर—सु घट (च) ; अधरासव—अधरा सुर (ङ), अधरा रस (ठ)।

११३ अस—जित (क) (च)।
११४ मनहरन हौइ जस—के मन मोहन हित (क) (च)।
११५ जु सुन्यौ—कीनौं (छ) (ज) (ञ); हीं—हूँ (छ) (ज) (ञ)।
११६ हीं—हूँ (छ) (ज) (ञ)।
१२१ नाद—अमृत-नाद-ब्रह्म (ञ)।
१२३ पंचभौतिक—पंच-भूतन (छ) (ञ), पंचभूत तिन (ज)।
१२६ तिन—तन (छ) (ज) (ञ)।
१२७ जिन—तन (क) (च) (ञ)।
१३० छीन—छिनक (ङ) (ञ), छिनहिं (ज); कीने मंगल—मंगल कीनो (ज), मंगल भुगते (ञ)।
१३१ पितल-पात्र—धातु पात्र (ख) (ज), लोह-पात्र (ञ)।
१३५ तिन संग-रति सहित (ख) (ज)।
१४० छबि—जुत (ख) (ज़), जहां (घ), नव (ञ)।
१४८ करी—कीयो (ख), कर्‍यो (ग) (घ) (ञ), कियो (छ) (ज)।
१६३ छविली भाँति सव—भली भाँति सौं (छ) (ज) (ञ)।
१६४ मिले....तव—रंगीले नयन मिले तव (ङ), मिले हैं रसिक नैन तव (छ) (ज) (ञ)।
१६६ तम....निकरि—तम के कोन मधि ते निकरि (ख), तमकि कुटिन के मांझ (ङ)।
१६८ वहुत सरद—स्वच्छ सुन्दर (छ) (ज), सुचि सुन्दर (ञ); द्वै—ह्वै (क) (ख) (च)।
१६९ अनु—अस (घ)।
१७१ बर—गुर (ङ) (ठ)।
१७३ बंकहि—बाँके (क) (च), बाँकी (छ) (ज) (ञ)।
१७८ माटी—मिथ्या (ख) (ग) (ञ)।

१८७ दुख के बोझ—दुख माँ दबि (छ) (ज) (ञ); नै—लै (छ) (ज) (ञ)।

१९९ कितहि—कत कौं (क), केतीक (ख), कतक (च) (छ) (ज)।

२०० धरमन कौ तुम धर्म भर्म फिर आगे को है (छ), घर मैं को तिय भरमैं, धरमैं या आगै कोहै (ञ)।

२०३ नग खग और मृगन को कैसो धर्म्म रह्यो है (ज), नग, खग और मृगन हूँ नाहिन धरम रह्यौ है (ञ)।

२०४ छाने ह्वै रहौ पिया अब न कछु जात कह्यो है (छ) (ज) (ञ)।

२०५ अस—के (ख) (ज)।

२०८ लाल, नैंन चंचल जु—चपल नेन मानो मीन (ख), नेंन चपल मनु मधुप (घ), चपल नयन पिया मीन (ज), चपल-नैंन ह्वै मींन (ञ)।

२१४ कुदि परि—गिरि परि (ज), परि-परि (ञ)।

२१७ प्रेम-पगे सुनि बचन, आँच-सी लगी आइ जिय (ञ); लागी जिय—लगी तबहि हिय (ड)।

२१८ नव-नीत मीत नवनीत-सदृस—नवनीत मीत सुन्दर मौंहन (छ) (ज) (ञ)।

२२२ तन—नव (ख), है (छ) (ज), चित (झ) (ञ)।

२२६ पुनि—छवि (ञ); लुठति—गिरत (छ) (ज)।

२२७ गन—मन (ख) (छ) (ज) (ञ)।

२२८ घन—संग (क) (ङ)।

२३३ कुंज, छवि पुंजन—कुंज पुंजनि छवि (च)।

२३६ उत— त (क) (ख) (ग) (घ) (ङ) (च)।

२३९ लपटैं—पूटैं (ञ)।

२४० गोद. . . .दपटैं—गोद भरि-भरि सुख लूटैं (छ) (ज) (ञ)।

२४२ सुँघावत—सुधा बर (छ) (ज) (ञ)।

२४३ मृदु—मृदुल (ख) (घ) (च) (छ) (ज)।

२५३ पुनि—पुनि पुनि (क) (घ) (छ) (ज) (ञ); पीयहि—पीय हीय (ग); पीयहि आलिंगति—पियहि अलिंगति (ज), पिय-अवलोकति (ञ)।

२५८ भगवान—मोहन (ख)।

२६३ जो—जैसें (क) (ग), जौ (घ) (झ), ज्यौं (च), जे (ञ)।

२७० तबहिं....त्यौं—ज्युं जात भयों त्युं (ग), ज्यौं जात भयौ यौं (ङ), बहुरि फिरि जाय भयो त्यों (ज), बहुरि फिरि जाइ खोइ त्यौं (ञ)।

२७६ किधौं—कै (ञ)।

२८१ कंदन—दन्दन (छ) (ज) (ञ)।

२८७ अहो पवन सुभ गवन दें सुख रह्यौ अचल अलि (घ), अहो पवन! सुभ-गमन, सुगँध सँग थिर जु रही चलि (ञ)।

२९० तुंग—उतंग (ख) (ग) (ज) (ठ)।

२९८ बताइ धौं—बताइ देहु (ख), बता देउ (ज), बतावहु (ञ)।

३०० कहति तू—कहो सखी (ख)।

३०२ तिहि—तिन (क) (च), ता (ग), बन (छ) (ज) (ञ)।

३०५ न हीं— न भल (च), इन ही कौ (ठ)।

३०७ हरि की सी चलनि—पिय हरि की सी चलनि (ङ), हरि की सब चलनि (छ) (ज), हरि की सी सब चलनि (ञ); हरि की सी हेरनि—हरि की हेरनि (छ) (ज), बोलनि हेरनि (ञ),

३०८ वह—× (छ) (ज) (ञ)।

३१६ कुलिस, कमल—कलस कमल (ख) (ङ); अति—धुज (ञ)।

३१८ सिर—उर (क) (च)।

३२४ लै....बैनी—सु हाथ लै गूंथी ैनी (क), सु हथ गुही है बैंनी (ठ); जहँ पिय निज कर कुसुम सुसुम लै गूँथी बेनी (छ) (ज) (ञ)।

३२६ भरयौ—वस (ङ) (ञ) ।

३२७ कहौ—अहो (ख) (घ), कहु (छ) ।

३२८ तिन मैं तिन के हिय की जानत ऊन उत्तर दीनो (ख), तिन मैं कोऊ तिनके हित की जिनि उत्तर दीनौ (घ), तिन मधि हिय की जानि, कोऊ यह उत्तर दीन्हौ (ञ) ।

३४१ मानिनि-तन—मानो नौतन (ख) ।

३४८ ज्यौं, अति—तौ कछु (ग) (घ) (ञ) ।

३५९ निहारी—द्रटारी (ख), विहारी (छ) (ज) (ञ) ।

३६० ये—यह (ख) ।

३६१ अस्त्र—शास्त्र (क) (ख) (च) ; हाँसी-फाँसी—हाँसी हाँसी (क) (ख) (च) (झ) (ठ) (ड) ।

३६२ मोल—मान (ड) ।

३६३ विष....अनल तैं—विष तैं, जल तैं, व्याल-अनल तैं (ञ) ।

३६५ जव....सुवन—जनु जसुवा सुत न (क) (च), जनु तुम जसोदा सुवन (ख) (ग), जसुदा सुत जनु तुम न (ज), जनु जसुधा तैं प्रगट (ञ) ।

३६६ विधि नैं—बिवुध (ङ), विधना (छ) (ज) (ञ), विधिहि (ठ) ।

३६८ जौ—को (ख) (घ) (ङ) (छ) (ज) ; मरिहौ—मारिहौ (क), मारि (छ) (ज) (ञ) ; करिहौ—करहु (ञ) ।

३७४ खचै—खैंचि (घ) (ङ) ।

३८३ जिहि यह प्रेम सुधाधर मोहन मुख देख्यो पिय (ज), जिन यह प्रैम-सुधाधर-तुम्हरो-मुख निरख्यौ पिय (ञ) ।

३८९ तौ—को (ख) ।

३९० कूर्प—कूप (ङ), कर्म (ड) ।

३९८ उझकत—जागहिं (क) (च), जगति (ञ), उजगहि (ठ) ।

४०३ चटपटी—करपट (ङ) ; कोउ चटपट सों झपटि कोउ पुनि उर वर लपटी (ज), कोऊ चटपट झपटि जाइ, उर-वर सौं लपटी (ञ) ।

४०५ गहि रही....पटकी—गहि रही करि पर पटकी (क) (च), गर पर कर पटकी (ग) ; गहि रही पियरे पटकी (घ) (ङ) ।

४०६ दामिनि दामिनि—दामिनि दामुन (ज), दामिनी दाँमन (ञ) ।

४०७ लपटी....नवेली—लटकि मटकि रही नारि नवेली (छ) (ज) (ञ) ।

४११ कोऊ पीवत निज रूप नेंन मैं धरि धरि आवत (ङ), कोऊ पिय को रूप नैन भरि, उर धरि आवत (ज) , कोऊ पिय कौ रूप, नैंन-मग उर-धरि ध्यावत (ञ) ।

४१६ एव—एक (च) (छ) (ज) (ञ) ।

४२२ इकहि....मूरति—एक ही बेर एम मूरति (ङ), एक बेर ही एक रूप ह्वै (ञ) ; सब कौं—××(ञ) ।

४२५ कहूँ छिनक—कछूक छिन तहां (ख), तौऊ तहँ (ञ) ।

४३३ विन-भजते—अन-भजते (घ) (ङ) ।

४३६ तदपि—ते (ञ) ; विबस—विबल (ख), बस (ग), अग्र (क) (च) ।

४३८ यह—किन (ख) (छ) (ज) ।

४३९ प्रति-उपकार—हों उपगार (घ) ।

४४५ सवन रिस—क्रोध सब (छ) (ज) (ञ) ; रिस—गुसौ (क) (ख) (च), गस (ठ) ।

४४८ सबहि—सखे (ख) ।

४५१ तूल....अव—तूल कोउ भयौ न ह्वै अब (ग) , तूल कोउ भयौ न है अब (ठ) ।

४५५ मनि—पुनि (ख) (ग), मनु (ञ) ।

४६० प्रतिबिंब चंद्र जस—वहू प्रतिबिंब वधु जस (ख), वहु प्रतिबिंब वधू जस (छ) (ज), वहु प्रतिबिंब होइ जस (ञ)।

४६७ तार—ताल (ग) (छ) (ज) (ञ)।

४६८ की—के (ञ)।

४७३ छबिली—चपल (ञ)।

४७७ तिरप—तिर्प (क) (च), निरपि (ख), चख (ङ); कोउ सखि.... बाँधि—कोउ सखी उरप तिरप बाँधति (घ), कोऊ सखी उरप तिरप करि (ङ), कोउ सखी कर पकरत (ज), कोऊ सखि कर-पकर जु (ञ); छबिली—यों छबिली (ज), या छबि सौं (ञ)।

४७८ मानों करतल फिरत देखि नट लटू होत पिय (छ) (ज)।

४८० गावति....जस—अरु गावति पिय के जस (छ) (ज) (ञ)।

४८१ तव—नव (क) (घ) (च)।

४८२ विलास—विसाल (क) (च)।

४८४ अवर....रहत—अवर तिहि वन रहत (ग), अंवर तिहि छन वनत (छ) (ज), जहँ के तहँ वनि रहत (ञ)।

४८५ सुर-रली—संग जुरली (ख), सुर लीन (घ), रस वली (ज), सुर जुरली (ञ)।

४८८ दै तँवोल—देत बोर (क) (च), देत बौल (ख), बोर देत (ङ)।

४८९ नृत्य—रीत (ख) (छ) (ज) (ञ)।

४९० निगम—गवन (ख), रमण (घ), गमन (छ) (ज), गान (ञ)।

४९६ वह निर्त्तनि—बर निरतत (ग), मुरि निरतत (छ) (ज) (ञ), कापै....गति—कहि आवै कापै गति (च)।

४९८ मँजुलता....बोलनि—ता ता थेई थेई बोलनि (ङ), मंजुल ता थेई बोलनि (छ) (ज) (ञ)।

४९९ कोउ उत ते अति गावत सुर लय लेत तान नइ (ज), कोउ गावत सुर-लै-सौं लै करि तान नई नई (ञ)।

५०१ जति-गति—जित गाति (ग), जाति पांति (ङ), निज गति (छ) (ज)।

५०३ गंडनि सौ मिलि ललित गंड मंडल मंडित छबि (ङ)।

५०६ रस—जस (घ)।

५०७ सु सुंदर—सु देसनि (ङ), सु देस जु (छ) (ज) (ञ)।

५०९ कहुँ कहुँ—कछू कछू (ख), अति छबि (छ) (ज) (ञ)।

५११ मधि—को (ख) (ग) (छ) (ज) (ञ)।

५१३ उड़त अरुन-अति बसन, सु-मंडल मंडित ऐसैं (ञ)।

५१७ कुसुम धूरि धूमरी कुंज मधुकरन पुंज जहां (ग) (छ) (ज)।

५२२ छतियाँ—छाति (ज), छाती (ञ) ; अजहुँ—अज हूँ (ञ) ; जिहि के डर—जिन के डर (ग) (ज), धरि–धरि (ञ)।

५२३ जु सुरत—सुस्तर (ख), सुरतै (ञ)।

५२७ मिलत—चलत (घ) (ञ)।

५२८ लियैं—बर (घ), लटकि (ञ)।

५३० मानौं सुंदर गिरिबर तें सुरसुरी धार धसी धर (घ), मानौ सिंगार बहर तैं सुंदर धारा गंगाधर (ङ), गिरि तें जिमि सुरसरी, गिरी द्वै धार धारि धर (छ) (ज) (ञ)।

५३५ न जनी केतिक—न जनी कितीक (क), सजनी केतिक (ज)।

५३७ सुख—नव (ड)।

५६१ भीजे बसननि तन लपटनि सोभित सोभा अस (घ), तन लपटनि वसननि अद्भुत सोभा सोभित सब (ङ), भींजि बसन तन-असन, निपट-छबि अंकित ह्वै अस (ञ)।

५६२ है—जस (घ) (ञ), तब (ङ)।

५६३ रुचिर निचोलनि चुवत नीर दिखि भये अधीर मनु (घ), रुचि रुचि अंबर चुवत नीर बसि परत भयौ मनु (ङ)।

५६८ जग में जे मोंहनी तिनकी मोंहनी व्रज वहूं (घ), जगत-मौंहिनी जिती तिती ब्रज-तिय मौंहनि सब (ञ)।

५७२ मानी—जानी (छ) (ज) (ञ)।

५८२ सो तनकहु नहिं—सो न नेंक हू (ङ)।

सिद्धांत पंचाध्यायी

४ प्रभु की—प्रभुक (क) (ख), प्रभुहि (ग)।

१३ पट....धरन—निर्गुन अर अवतार धर्म (घ)।

१७ कहैं—कहै (क), कहे (ग); रहैं—रहै (क), रहे (ग)।

१८ अपन निज—आप निज (घ)।

१९ मोहिनी....मोहे—मोहनी मोह रूप धरि मोह्यौ (घ)।

२२ गिरि तैं गिरि—गिरि तौ (घ); मूरि—पूरि (घ)।

२४ करचौ—कियौ (ग) (घ)।

२६ निरतास—निर्तास (ख), निर्जास (घ)।

२८ रखवारा—रस रीति (घ)।

३० तिन मैं—तिन तन (घ)।

३४ कीटांत—की जंत (ग), कीटादि (घ); सर्वांतरजामी—सव अन्तर जामी (ग) (घ)।

३६ करुना....नंदन—करुनानिधान प्रगट नंदनंदन (घ)।

४० स्मृति—गन (ख) (घ)।

४२ सव....भ्राजै—सब रजनी भ्राजै (घ)।

५५ इक पैहिलैंई गमन मन सुन्दरि घन मूरति हरि (क), इक पहली जू मग्न मनहिं सुंदर धन मूरति हरि (घ)।

६१ ये—इह (ख) (घ)।

६३ वाढ़त—वाढ़ै (ख) (ग)।

६४ छाँडत—छाड़ै (ख), छाँढै (ग)।

६६ जव—सब (क) (ख) (ग)।

७० तव—सब (क) (ख) (ग)।

७५ यहै....गायौ—मिलै यै पंडित गुन गायौ (क), मिलै इह जु पंडित गण गायौ (ख)।

८३ बांछै—छिछै (क), छाहें (ख), मिंछै (ग)।

८८ छन छन—ता छिन (घ); छबि—बृद्धि (क)।

९९ अनाकृष्ट—अनाकृष्ण (क)।

१०५ सुंदर—तुम (क), अत (ग)।

१०८ समल—समझ (क), समझि (ग)।

१११ रति....आवै—रहि सोई आवै (क), रहि होइ आवै (ख), रति सेवन आवै (ग)।

१२२ यह—यै (क) (ग), ये (ख)।

१२८ सौभग—सौभाग (क)।

१३६ कोट—कछू (घ)।

१४२ प्रयाल—प्रबाल (घ)।

१५० कै—किधों (ख), किन (ग)।

१५३ बलित—चरित (घ)।

१५८ इह—ए (ग)।

१५९ ताते जगत गोपी पुनि पुनि शुक मुनि गावै (ख)।

१७९ ताते नि मैं तनक दुरे पुनि दुरचो न भावे (घ)।

१८३ मग—मधु (क) (ख) (ग)

१८८ किन—जनु (घ); चंद तैं—चंदहिं ते (ग)।

१९२ लाल—बाल (क) (ग)।

२०८ सक्ति अनेक—अनेक शक्ति (ख)।

२१३ करि—कर (ग)।

२२६ बहुरि का....ते—बहुरि का बहु कानन ते (ग), फिरि बहुरि कहा करते ते (घ)।

दशम स्कंध

प्रथम अध्याय

१ जो—ज्यों (क) (ख) (ग)।
४ कही—कहि (क) (ख), कह्यौ (ग)।
१२ हौं को— को हे (क)।
२५ कार्ज—कारन (ङ)।
२६ कवि जान—जंजांन (क) (ग)।
२७ भक्त—भक्ति (क) (ख)।
३० नृपन—तपनि (क); सो ईसान....जथा—मोई सात कथा हे जथा (क)।
३४ सो आश्रय हि दशम स्कंध, प्रगटित मोचन लोचन अंध (ख)।
४३ ईस्वरता....ताके—सो ईस्वरता फुरे न ताके (क)।
५१ परीच्छत लह्यौ—परीक्षक लह्यो (क)।
७५ हमरे....देव—हमरे तो हें हरि कुल देव (ख)।
११९ इहि....कही—इहि विधि विविध बुधन सों कही (क)।
१२२ इस के स्थान पर 'ख' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—
सम्यक शास्त्र दिष्ट जे लहें, आतम द्वे प्रकार ते कहें।
एक जीव एक भक्त आतमा, जों नित पाइ पलोटत रमा।
१३० सव....गुन भरी—सर्व देव मय सव गुन भरी (ख)।
१३१ दुति—छबि (ख) (ग)।
१३७ किंक्यान—कैंकांन (क)।

१४६ बिमन—विमल (क)।
१४९ अमैं—अनें (क)।

द्वितीय अध्याय

१-२ अब दुतिये अध्याय सुनि, जहां ब्रह्मादि के बेन।
करि स्तुति महा गर्भ की, जहां भक्ति बैभव कौं ऐंन ॥ (क)।
७ अरगाने—उरगाने (क) (ङ)।
१४ महिम—महिमा (क)।
४० तेजरासि—ते राजसि (क); राजति....बैसी—महा निधूम अग्नि होइ जैसी (ख)।
५५ क्रीटनु के जु—क्रीटनि जु अग्र (ख), क्रीडनि केतु (ग)।
६६ जौ....उवाइ—जो दिन दिनमनि दिन न उवाई (ग)।
६७ करि—ही (क) (ग)।
६९ नाउ—नाम (ग); पार—मार (ग)।
८० तुम्हरे—सुंदर (ख)।

तृतीय अध्याय

१-३ अब सुनि मित्र तृतीय अध्याय,, प्रगट हें हरि पूरण भाय।
तात मात सौं बात बनाय, वर्ष हें सुष ब्रज मे आय। (ख)
५ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
जो ग्रह मित्र न ताके रहें, जगत मध्य तब काके कहें।
२३ इस के पश्चात् 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
वड्डे लोयन अस कछु लोने, पाछे भए न आगे होने।
४५ कीनी....बनाइ—देवकी बोली अति सुख पाइ (क), कीनी थोरी स्तुति बनाई (ख)।
५३ भागि-जोग—भक्ति जोग (ख)।

५६ जानै—जांनौ (क)।
६० जथा....तितौ—जथा बकासुर हत है तितौ (क)।
६७ लै लटि—लै मुत (ग)।
७४-७७ इन पंक्तियों के स्थान पर 'ख' में केवल दो पंक्तियाँ हैं—
आनंद भरि अंवुद घिरि आए, फुई फूल वरपते सुहाए।
ते सहि सक्यो न मेवक सेस, करि लियो फननि को छत्र सुदेस।
७८ जल—सव (क), छवि (ग)।

चतुर्थ अध्याय

२ चंडिका—चंडिवे (घ)। इस दोहे के स्थान पर 'ख' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—
अब चतुर्थ अध्याय सुनि मित्र, जामें चंडी वचन विचित्रि।
सुनि के कंस महा डर डरिहै, उठि कै प्रात बात विस्तरिहै।
७ उखटत—अखुटत (क), अपुरत (ख)।
८ छविमई—सुभ मई (क)।
१२ नीचन....सुभाउ—नीचनि के कंसों हृदभाव (क), नीचनि के कासों हृदभाव (ख)।
१७ इस के स्थान पर 'ख' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—
रे रे मंद कछू न विचारत, हम सी कृपननि कत कहु मारत।
उपजो है तुव मारन हारो, अरे निष्ट जिन करि जिय गारो।
२५ सौनक—सूनक (क)।
२६ जिनि....अनुराग—सोच न करो सिसुन के राग (ख)।
३१ इस के पश्चात् 'ख' ने यह अतिरिक्त सोरठा दिया है—
वुरो करे जो कोइ, साध न तऊ मानें बुरो।
खरो उजेरो हो, छार लगायें मुकुर जिम॥
३२ परी संस—परी बंस (घ)।

३५ ताहि—काहि (क)।
३८ वल्गन करैं—कबहु न करैं (ग)।
५२ ज्यौं—जो (क) (ख)।

पंचम अध्याय

२ इस दोहे के स्थान में 'ख' ने यह चौपई दी है—
अब सुनि लै पंचम अध्याय, सब प्रपंच वंचत ह्वै जाय।
५ यौं....पेखि—पूत उदय ज्यौं पेनिधि पेखि (क)।
७ स्वच्छ....अन्हवाये—आपुन सुचि सुगंध जल न्हाए (क)।
११ बड़्डी—बडवडी (ख)।
१२ बहुरो तेल अरु मुक्ता मिलाय, कीने सप्त शयल वनाय (ख)।
१३ इस के पश्चात् 'ख' ने यह चौपाई दी है—
जाचक जन परिपूरन भये, दारिद हू के दारिद गये।
१७ इत मागध—इक मागध (क)।
२० चले महरि-घर—चले सु बनि बनि (क)।
२४ मुदित वचन चलीं भातिन भली, फूली जनु नव कंजन कली (ख)।
इस पंक्ति के बाद 'ख' ने यह अतिरिक्त पंक्ति दी है—ता पाछें गोपांगन चलीं, आनंद रली सु लागत भली।
२७-२८ अंजन जुत लोचन छबि बढ़े, खंजन जनु कुमुदनि पर चढ़े।
चंचल गति उपजत रसमूल, खसत जु लसत सिरन ते फूल। (ख)।
३५ चूमे....पाइ—भुमेसकनि सासु के पाइ (क), चूबे सबनि सासु के पाइ (घ)।
३९-४० इन के स्थान पर 'ख' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—
नाचत ग्वाल अनंदनि वोरे, हरद दही माखन तन खोरे।
अंवर वारत कंवर वारत, वहु धन डारत कछ न विचारत।
कही न परत अति मंगल भीर, निकसि न जाइ फटत तन चीर।

इन ए राग रागिनी गावत, नृत्तत नटी जटी छवि पावत ।
इत मागध वंदी जन रढ़ै, इन ए सूत पुराननि पढ़ै ।
तेसेई सुरवर वरपति फूलनि, डारत दिव्य दुकूल अमूलनि ।
उपर्युक्त पद्यांश के वाद 'ख' ने पंक्ति ४४, ४५ देकर इस प्रकार पाठ रक्खा है—
ता दिन व्रज छवि कहें वनें न, सबनि के ह्वै गए कंचन अंन ।
पंक्ति ४१, ४२, तथा ४३
तिन पर चपल पताका चमकैं, विनु घन जनु कि दामिनी दमकैं ।
जितीक व्रज वछ वाछि गांईं, कंचन माल सवनि पहिराईं ।
पंक्ति ५२

जदपि नित्य किशोर व्रज, राजत अंवुज नेंन ।
प्रगट भये पुनि नंद घर, सवै वयस सुप दैंन ॥

पंक्ति ५४, ५६

सोवत रेंन नंद अकुलाई, उठि कें प्रात पूत ढिग जाई ।
वदन उघारे छविहि निहारै, वार वार आपुनपौ वारै ।

पंक्ति ५५, ५३

जसुमति के सुष की को कहे, वार ही वार वदन छवि चहे ।
दुतिया तिथि भई देवकी, विधु दिपियै जिमि नंद ।
पून्यौ सी जसुमति लसी, पूरन जहां व्रजचंद ॥

श्री नंदजू के प्रेम की उपमा कहत है—

रंक महानिधि पाइ, ज्यौं रहै छतीपर लाय ।
तैसें नंद महर अहिर, सुंदर सुत कों पाय ॥
ज्यौं मणि उजियारें मणी, विहरत करत अनंद ।
त्यौं सुत सुष कंदहि निरषि, विचरत व्रज में चंद ॥

पंक्ति ५७ (इस के वाद 'ख' का पाठ मूल पाठ से मिलता जुलता है।)

६४ अस—सब (क) (ख) ।

६७ सौ—मे (क) ।

६९ मिलहिं जे—मिलहिगे (क)

८९-९० 'ख' ने इन का पाठ इस प्रकार दिया है—

कहत कि हो हरि सरन तुम्हारी, वा सिसु की कीजो रषवारी।

नंद कृपन धन लों सचौ, यह पंचम अध्याय।
जहां धरे तहां नेंन मन, प्रान रहें सब जाय ॥
मंगल गोकुल नंद के, नंद जथा मति पाय।
वरन्यो नित मंगल करन, इम पंचम अध्याय ॥

षष्ठ अध्याय

२ इस दोहे के स्थान पर 'ख' ने यह पंक्ति दी है—अब सुनि छठौं अध्याय विचित्र, जामे बकी चरित्र पवित्र ।

१६ तब—सु (ख) ।

१७ डुरावति—दुरावति (ख) (घ) ।

१८ गोप....जोहें—गोप सवै इहि विधि करि (ख) ।

३४ है—ही (क) ।

३७ इकलौ—अकिलौ (क) ; ताके—तातें (ग) ।

३८ मंद छबि-कंद—मंद ही मंद (ख) ।

४१ जनु कि—जननि (ग) (ङ) ।

४३ कलमल्यौ, हलमल्यौ—हलहल्यौ षलभल्यौ (ख) ।

४९ त्रासहि—विस्मय (ख) ।

५५ सुंदर बाल—मोहन लाल (ख) ।

६२ रच्छा....डरि कै—रक्षा करी व्रजति अरि डरि के (क) ; गोपी सवै नेह रस भीनी, द्वादश नामनि रक्षा कीनी (ख) ।

६३ प्यायौ—पायो (क) ।

सप्तम अध्याय

२ अव सप्तम अध्याय सुनि मित्र, जामें अद्भुत वाल चरित्र (ख)।
३ इसके स्थान पर 'ख' ने दो पंक्तियाँ दी हैं—
सकट विकट उच्चाटन करिहै, तृणावर्त अघ डारिन दरिहै।
सुनि कै यह पूतना चरित्र, वाल भाव रस सिंधु पवित्र।
४ काजा—साजा (ग) ; मगन भयो नृप गदगद गरैं, पुन शुक मुनि सों विनती करैं (ख)।
१४ चावल—चावरी (ख), चर्वार (ग)।
१६ जव—तव (क) ; तव—कछु (क)।
२१ अभिचार—अविचार (ग)।
२३ तनक चरन ऊँचे उचकाई, उड गयो उड़नि में दयो रराई (ख)।
३० कूट—कूल (ङ)।
३७ तव....धरयौ—तव घरनी धरनी पर धरयो (ख)।
४२ कित—किन (ख)।
५० डरपि घुरि—डरयो लपटि (ख)।
७२ इस के स्थान पर 'ख' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—
माया किधों किधों यह सपनों, किधों वुद्धि भ्रम है यह अपनों।
बहुरि कहत यह सपना न होइ, नहि माया नहि छाया कोइ।
७३ इस के वाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
विश्वहि करे हरे संहरे, ऊर्न नाभ लों पुनि विस्तरे।

अष्टम अध्याय

११ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
अपनो कछू प्रयोजन आहि, श्री व्रजराज कहति हैं ताहि।
२५ अद्भुत....धाम—पूरनकाम सकल गुनधाम (ख)।
३० बहुत कहा कहियै हो नंद, दै है तुम को परमानंद (ख)।

३६ डोलनि—डोलत (क) ।

३७ को हे—को हैं (ग) ।

४० नाक—नाथ (ख) ।

४३ चकि रहै—बहु भूलनि (ख) ; पकरचौ चहै....लहै—सुष दिप दिष मैयनि की फूलनि (ख), फवि रहे हार कनक छबि लहे (घ) ।

५० व्रजवधू आवति ललहि षिलावति, अंगुरी गहाइ के पगनि चलावति (ख) । इस पंक्ति के बाद निम्नांकित चौपाई देकर 'ख' ने पंक्ति ५२ दी है—

कवहूं नचावति अति गति नई, दोधक दोधक धोदक थेई ।

५७ अरग अरग आवहि दुरि जाहि, दूध दह्यो माषन लै खाहि (ख) ।

६१ खोरि—पोरि (ख) ।

६२-६७ 'ख' ने इन पंक्तियों का पाठ इस प्रकार दिया है—

ओर सुनहु लरिकनि की बात, कित सीषो चोरी की घाते ।
किंकिनी पट में लेइ छिपाइ, दुकत दुकत घर भीतर जाइ ।
दह्यो मह्यो माषन जो पावै, आपन षाइ लरिकनिहि पवावै ।
चोरी को दध हित सों षाइ, जौ हम देहि तौ देइ बगाइ ।
जसुमति सुंदर सुत तन चहै, हसि हसि गोप वधुनि सों कहै ।

६६ मसिहि—मखिहि (क), मखनि (घ), मिषिहि (ङ) ।

६९ ही—हूं (क) ।

७६ मुख...भरि—मुख के (क) ।

७७ जनु—मनो (ख) ।

८० जिनहि क्रिया—जिनहु कृपा (क) ।

८६ ढुकत ढुकत—अरग अरग (ख) ।

८९ अवर लरिक—अरु बालक (ख) ।

९२ चूमति....बानी—इतनी जन्म सुफलता मानी (ख) (ग) ।

९३ इस के बाद 'ख' ने दो अतिरिक्त पंक्तियाँ दी हैं—
अरे पूत पूतना निपातनि, तो मों इक कहि सकन न वातनि।
रहत जु निपट धूरि में सन्यो, पूरब जनम सूकर में मन्यो।

१०३ हित....मात—आन्यौं पकरि आपनौं तात (क), हित सो पिजी जसोमति मात (ख)।

१०५ अनियाई—अनुपाई (ख)।

१०६ यह....मेरौ—यह न झूठ बोलै वलि मेरौ (ख)।

१११ कहति तौ इतै लाइ धौं, देषौं रदन वदन वाइ धौं (ख)।

११२-१२० 'ख' ने इन पंक्तियों का पाठ इस प्रकार दिया है—
जगत मथन मधु मथन मुरारि, डारि कैं दीनों वदन पसारि।
जसुमति जहां चितै चकि रही, थिर चर डंवर अंवर मही।
पावक पवन चंद रवि तारक, सत रज तम गुन तिन के धारक।
ज्योति चक्र जल तेज अनंत, इंद्रियगन मन मूरतिवंत।
शव्द स्पर्श रूप रस गंध, काल स्वभाव कर्म जिय वंधु।
जीव वुद्धि अरु लिंग शरीर, महदादिक तत्वनि की भीर।
पुनि तहां व्रज अपनपे समेति, सांट लियो सिसु कहु सिषि देति।
चाहि चकित भई सव सुधि गई, कहति कि कहा आहि यह दई।
सुपन किधों हरि देव की माया, मो मति भ्रमी किधों कछु छाया।

११३ सरित—सहित (क)।

११६ तब—जब (क)।

१२४ इसके वाद 'ख' में ये दो पंक्तियाँ हैं—
जाकी माया करि सव नचे, दरप अहं ममता मद मचे।
अैसी कुमति परी पग वेरी, सो श्री कृष्ण होहु गति मेरी।

१२६ इस के वाद 'ग' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—
कहत कि हम ईश्वर जाँनवै, सुलभ है श्रुति मग पहिचांवै।
अै परि हम सुत करि पाइवै, अति दुरभल हसि हियैं लाइवै।

१३५ इसके पश्चात् 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
वसुदेव वरन्यो निगम सरूप, विद्या ब्रह्म देवकी रूप।
१३७ राख्यौ—माख्यौ (ग)।
१२२-१३८ इन के स्थान पर 'क' ने निम्नलिखित पंक्तियाँ दी हैं—
तौ दर्पन मुख दिखियत जेसें, ह्वेहे कछु इहां यह भ्रम ग्रेसे।
सो पुनि बने न यों मन गुन्यो, प्रतिबिंब में बिंव नहि सुन्यौ।
हे यह मो सुत को परिभाव, और न कछू भाव अनुभाव।
बहुरचौ हरें हरे पहिचानें, अपनौ सुत परमेसुर जानें।
वहुरि सनेहमई रसमई, माया जननि उपर फिरि गई।
'घ' तथा 'ङ' ने भी साधारण पाठांतरों के साथ इसी प्रकार का पाठ दिया है।
१३९-१४२ बाल चरित मधुधार, ताके पीवनहार जे।
मुकति जु चारि प्रकार, छुवै न षारे वारि जिमि।
इहि अष्टम अध्याइ रस, नंद पिवहि जो कोइ।
मात पयोधर रसहि पुनि, नेकु पिवै न सोइ ॥ (ख)

नवम अध्याय

११ बिपुल नितंब ललित गति मलकनि, नगनि जरी कबरी की ढरकनि (ख)।
१२ नेत—नेत्र (क), नेन (ङ)।
१३ आनन....बनी—श्रम बन कन सु बदन पर परी (ख), आनन पर श्रम बन कन बनी (घ) (ङ); अस—अति (ग)।
१४ आपनौ—आपने (ख) (घ)। इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—रज की राजनि भुजनि की भ्राजनि, कंकन किंकिनी की कल बाजनि (ख)।
१७ मीड़त—मीजत (क) (ङ)।

१८ नेत....वढ़ाइ—गही मथुमथन मथानी ग्राइ (क)।

४० बिललाहीं—विलखाही (ग)।

४२ सु—सोउ (क)।

४८ नोई—डोरी (ख)।

५१ उहै....ग्राई—सोई जव पूरन नहि भई (क) (ङ)।

५४ वस्तु—वसन (क)।

५७ ग्रवसि—ग्रव (क)।

५८ ग्रावैं—पावे (क)।

६० ग्रस—ग्रवसि (ख) (ग)।

६१ रसना....नई—वत्सल रस रसनादिक नई (ख)।

६२ इस के वाद 'ख' ने यह दोहा दिया है—

ज्ञान ग्रगम निगमहि ग्रगम, निपट ग्रगम जम नेम।
सव विधि दुरगम व्रजेस सुत, सुगम एक ही प्रेम॥

६४-६५

जदपि विधि शिव सब ही ग्रात्मा, ग्रवरु वहै घर घरनी रमा।
तिनहू कवहूं नाहिन चह्यो, जु सुष नंद की ललना लह्यो।
(ख)।

६७ कहँ सुखद हैं—कहूं सुख लहे (क), कह सुखदै (ग)।

७० गत—गति (ख) ; माया—माइक (क)।

७५ छीजत इम देषहु तजि मौंन, मृदुल मुकुर पर जिमि मुप पौंन (ख)।

७८ श्रापे—सपे (क), सापे (घ), साप (ङ) ; जु—सु (ग)।

८१ 'ख' ने इस ग्रध्याय के ग्रंत का दूसरा दोहा पहले दिया है तथा पहले के स्थान पर यह दोहा दिया है—

नंद नवम ग्रध्याय को, उर धरि राषो पेलु।
सहजहि उत्तम होइहै, ज्यों तिल तेल फुलेल॥

दशम अध्याय

१ सुत....पाइ—पूछे सुक जु परीछत राइ (क)।

२-३ 'क' ने दूसरी पंक्ति छोड़ दी है और तीसरी का पाठ यों दिया है—हो प्रभु परम भागवत नारद, जाकौ परस सहज भव पारद।

४ जिनहि—मुनि मन (ख)।

१३ निर्दय महा विरथ–निर्दई महा अव्रत (ख)।

१५ कौं—करि (क) ; समैं—सवै (क)।

२० हौइ—द्रोह (ख) (ग)।

२२ निर्बल—दुर्बल (ख) (ग)।

२६ तुम—पुनि (ग)।

३६-३६ इन के स्थान पर 'ख' में केवल यह पंक्ति दी है—

अहो हो कृष्ण अमित अनुभाव, नहि कहि परत अचिंत्य प्रभाव।

४२ तुम ही काल विसाल सु वसुकर, विष्णु व्यापी तुम अव्यय ईसुर (ख)।

४३ तुमही प्रकृति सकति सब तुमही, सत रज तम जे लै लै उमही (क) (घ)।

४५ घट....सब हीं—तौ घट पट ज्ञान विषै सव ही (क) ; घट—तौ धर (ग)।

४५-५१ इन का पाठ 'ख' में इस प्रकार है—

जो कहोहु कि असें हम सव ही, घट पट ज्ञान भये ते तब ही।
हमरो ज्ञान सवनि किन बनैं, तहां कहत कुबेर के तनैं।
प्रभु तुम ग्राम वस्तु ते परें, इंद्रिय वाद डरें अरवरें।
जैसें चषि फल रूप ही गहैं, फल के रसहि नाहिनें लहैं।
निज महिमा मधि छपि रहे असें, अभ्र में रवि दवि रहत है जैसें।
तैसें तुम अग्राह्य स्वच्छंद, ताते नमो नमो ब्रजचंद।

नारद परम अनुग्रह कर्‌यौं, पायो दुर्लभ दरस रस भर्‌यौ।
बोले नलकूवर मणिग्रीव, अंजुलि जोरि नमित करि ग्रीव।

५३ वाणी तुव गुन कथन में रहो, श्रवन कथा रस में निरवहौं (क)।

५४-५५ इन के स्थान पर 'क' में यह पंक्ति है—
चरन कमल रस बस मन भौंर, सपने हूं जिन सूझै और।

५६ प्रीतम—प्रिय तुम (ग); हमारौ—हमारे (ख)।

६३ डर—जग (ख)।

६४ पुनि....पाइ—चले नाथ को माथ नवाइ (ख)।

६७ नभ....चले—गवने रगमगे (ख)।

७१ कथित यह—यह कथा (ग)।

एकादश अध्याय

१-२ अब सुनि एकादश अध्याय, जामें श्री वृंदावन आय।
अवर जु अद्भुत अद्भुत केलि, भक्तनि परम अमी रस वेलि (ख)।

४ अति—तहां (ख) (ग)।

५ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
बड़े अकाय दोऊ रूपरे, धरनि ते जरनि सहित ऊपरे।

१८ सहज—सबै (ग); नाचि—नाच (ख) (ग)।

२१ कबहुँक बहुरि—कबहूँ कहू (क); कहैं—करे (क)।

२२ गुहि दै—गुहियै (क)।

२४ कोउ....वे—अहो कान्ह वे (ख); मोहिं—नेकु (ख)।

२५ ब्रज तिय—निज ब्रज (क) (ग)।

२६ सिव कौ सर्बस—सिसु सर्वस सव (क)।

५१ कहन लग्यो हित की सब बात, अब लौं परी आहि कुसरात (ख)।
इसे तथा पंक्ति ५० को 'ख' ने पंक्ति ४६ के पहले दिया है।

५६ करे—करैं (ग); भुवि—गिरि (ग)।

६१ गाइ-वछ—गाइ की (क)।

६२ सुठे—गुठे (ख); इसे तथा पंक्ति ६३ को 'क' 'घ' तथा 'ङ' ने छोड़ दिया है और यह पंक्ति दी है—

सुनतहि सव आनंद हिलोरे, अपने सकट तुरत ही जोरे।

६६-७२

वाल चरित लालनु के गावति, राग भरी सव राग रिझावति।
रोहनी सहित नंद की घरनी, वैठी सकट परत नहि वरनी।
रमा उमा सी दासी जाकी, सुरपति रवनी कवन वराकी।
ललित ललाहि गोद में किये, चंद जननी जनु चंदहि लिये।
(ख)।

७० सीतल कंठ—रूप अनूप (ग)।

८१ पिक—कपि (क)।

८१-८२ इन के स्थान पर 'ख' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—

औरें भंवर मधुर रव राजैं, परम प्रवीन बीन जनु वाजैं।
जहां तहां नृतत मत्त जु मोर, रीझे हरि लषि उनकी वोर।
वोलत पिक कल कंट सुहाये, जनु मधु वधु मिलि मंगल गाये।

८२ निकसी....गोभा—देखत मन अति उपजति लोभा (घ)।

८७ सव रस—रस में (ख); जगमगें—जगमगै (ख)।

१०१ इस के वाद 'ख' ने यह दोहा दिया है—

कलई के से अंभ जिम, दंभ करो जिन कोइ।
दिन दश की रस की चसक, अति ही विगूचन होइ॥

१०७ गिरि....जैसौ—वज्र हत्यो गिरि श्रृंग है जैसो (ख) (ग)।

११५-११८ इन के स्थान पर 'ख' ने तीन पंक्तियाँ दी हैं—

अैसे कहि वक उगलन लग्यौ, तिहि छिन अद्भुत कौतुक जग्यौ।
मुष ते निकसत मधुर मुरारि, पकरि कै चोंच फारि दियो डारि।
कट को करन हार नर जैसें, डारत फारि पटेरहि जैसें।

१२० घिरि—घुरि (क)।

द्वादश स्कंध

२-४

गिलि जैहै वछ वालक कोटि, हरिहैं हरि ताकौ गल घोटि।
इक दिन पुनि आनी हरि मन में, करिहैं काल्ह कलेऊ वन में।
प्रात काल उठि मोहन लाल, वेनु वजाइ वुलाए ग्लाव (ख)।

७ कनक....नीके—कांधन धरि लए लागति नीके (क)।

८ इस के वाद 'ख' ने ये अतिरिक्त पंक्तियाँ दी हैं—

उज्जल उज्जल वछ सुहाए, मृदुल फटक के मनों वनाए।
जिनके तन में वालक जिते, निज प्रतिविंव विलोकत तिते।

९ नंद....चले—वेनु वजावत गावत चले (ख)।

१० नग....नाइक—जैसे नगनि के मधि मधि नाइक (ख)।

११ इत—तहाँ (ग)।

१५-२८ 'ख' ने इन का पाठ इस प्रकार दिया है—

कैईक ग्वाल ताल ढिग जाइ, आवत वैठे वगन खिजाइ।

पंक्ति १६ [केई मिलि—कैइ शिसु ; कुहुकावत—पिजावत]।

केइ मिलि कल कोकिल कुहूकावत, केइ खगनि छाया गहि धावत।
पुनि पुनि तिनको चोंप दिवावति, हसति हसति वहुर्‍यौं फिरि आवति।

पंक्ति १८

कहूं दिषि नृत्तत मोर किशोर, तैसें ही नृत्तत ए चित चोर।

पंक्ति २२, २१

छवि पुंजा गुंजा अति सोहे, ललित लालरी दुति तहाँ को है।
तिनके रुचिर हार गुहि लावै, आनि नंद लालहि पहिरावै।

पंक्ति २४, २५

इहि विधि विहरत भरि अनुराग, श्री सुक वरनत तिनको भाग।
इहि सुष पंडित नहिं अनुसरे, रहत है जदपि व्रह्म सुप ररे।

सेवक पुनि यह सुष नहि लहै, ईश्वर जानि डरत नित रहै।

२९ संबंधी जिते—जु बंधु जन आहि (ख), संबंधी जन जे (घ) (ङ) ; समझत तिते—मानति ताहि (ख), समझत जे (घ), समझत ते (ङ)।

३० देत....ठौर—विहरत वन माही गर वांही (ख) ; नहिं और —कोउ नाहीं (ख)।

३१ जाके....कै—दुष भरि चपल चित्त कहु धरें (ख) ; दुख भरि के—तप करें (ख)।

३२ ता करि जा प्रभु की पद धूरि, ढूढत फिरत तदपि हूं दूरि (ख)।

३३-३४ 'ख' ने इन के स्थान पर ये पंक्तियाँ दी हैं—

सो हरि जिन के नेंननि आगें, निसि दिन रहत प्रेम रस पागें।
तिन लोगन की भाग वडाई, कहा कहिये कछू बरनी न जाई।
तिहि छिन अघ आयो तकतक्यौ, बाल केलि सुष देषि न सक्यौ।

'ग' ने पंक्ति ३३ के बाद उपर्युक्त पहली दो पंक्तियाँ दी हैं, तीसरी छोड़ दी है।

४५-४६ सो अघ अजगर वपु धर नीच, परचौ आनि मारग कैं बीच।
इक जोजन विस्तरि मुष बाइ, रह्यो ग्रसन आसा लव लाइ।
(ख)।

५१ शृंग जु बनैं मनहु अहि दंत, निविर तिमिर सु वदन कौ अंत।
(क)।

५२ तामें वह मारग की लीह, लपकति जनु अजगर की जीह (ख)।

५७ केवल—सति ही (क)।

६० नंद सुवन असे कछु करिहै, वक लौ यहौ नीच कोऊ मरिहै (क)।

६१ सुंदर....भरे—नाहिन डरे अतिशय मुद भरे (ख) (ग)।

६६ अब ह्यां बने कवन विधि कियें, अजगर मरे वाल-वछ जियें (ख)।

८० इस के स्थान पर 'ख' ने दो पंक्तियाँ दी हैं—

मुनि हरष स्तुति रस जगमगे, गंधर्वौ गुन गावन लगे।

नित्तंत अपछरा को छवि गनो, लटकति फिरति दामिनी मनो।

८१-८४ कोलाहल सुनि के सुर ओक तें, अज आए जु अपने लोक तें।

नंद नंदन महिमा अवलोकि, विस्मय करि हिय लीनों रोकि।

अजगरु चरम करम शुभ भरचो, सूक्यो बृंदावन में परचो।

ब्रज के जिते ग्वाल वछ वाल, षेलत रहे तहां वहु काल।

८४ गह्वर—हुंकरत (क)।

८६ सो पौगंड वयस कौं पाइ, कह्यौ तिन लरकनि ब्रज आइ (ख)।

८६-६४ 'ख' ने इन के स्थान पर ये पंक्तियाँ ही दी हैं—

अरु यह जोति परम दुति सानी, हम देखी इन मांझ समानी।

अहो मित्र कछू चित्र न आहि, श्री हरि की महिमा तन चाहि।

मनो मई मूरति जौ करै, रंचक आनि हिय में धरे।

६२ सुनि....रह्यौ—किन हूं गह्यौ किन हू नहि गह्यौ (ग)।

६३ चित्र—चित्त (ग), चिंत (ङ)।

६६ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—

अचरज नयो जु श्री शुक गावै, हरि सारूप्य अघासुर पावै।

६७ हरि—कै (ग) ; सूत कहत द्विज सों रस ढरचो, राजा सुनि अति अचरज भरचौ (ख)।

६६-१०० यह कौमार वयस को करम, कीनों कमल नयन निज धरम।

पुनि पौगंड वयस में आइ, कह्यो लरिकनि यह वन को भाइ (ख)।

१०५-१०७ इन के स्थान पर 'ख' ने दो पंक्तियाँ दी हैं—

असें जब पूछे मुनि सत्तम, परम भागवत उत्तम उत्तम।

सुमिरि हरि चरित रस रगमगे, हिय डगमगे दृगनि जगमगे।

१०६ नंद....भरि—नंद नेह भरि हेत करि (ग)।

११२ ज्यौं—लौं (ग)।

त्रयोदश अध्याय

४ हौ—हौं (ग)।

५ जिन के—जिन कौ (क) (ग)।

६-७ छिन छिन प्रति नौतन सी सुनैं, सुनि सुनि पुनि पुनि मन में गुनैं।
सुनत नृपति मानत नहिं अैसें, पर तिय बातनि लंपट जैसें (ख)।

१२ की—× (क) (ख)।

१३ कहत....ठौर—अहो मित्र देषहु यह ठौर (ख); पाइहौ—पाइये (ख)।

१४ सीतल मृदुल वालुका सच्यो, जमुना सु कर तरंगनि रच्यो (ख)।

२० तैं—के (ख)।

२८ बने—ठने (क) (ख) (ङ); घने—वने (क) (ख) (ङ)।

३१ काख....रेनु—वेत विषान काष में लिये (ख)।

३२ हरि—परि (ख)।

३५ केवल—मनुज (ख)।

३७ सौं—कौ (ग)।

४० तहँ—जहा (ख)।

४२ तदनंतर कमलज तहां आयो, अघ कोतुक दिषि विस्मय पायो (ख)।

४३ इमि कहै—हम कहैं (ग); चहै—चहैं (ग)।

४४ 'ख' ने पंक्ति ४५ को न देकर इस का पाठ यों दिया है—
ले गयो कछ ते वछ चुराइ, इत ते लीने बालक आइ।

५२ बाल—ग्वाल (क); याते नंदलाल तिहि काल, आप भये वछ वाछी वाल (ख)।

५६ कंकन किंकिनी नूपुर जितौ, सर्व विष्णुमय है यह तितौ (ख)।

५७ बिदित—बदत (ग)।

५८ अैसे नहिन परत हो पायौ, सो यह अर्थ प्रगट दिखरायौ (क)।

६० 'ख' ने इस के बाद यह पंक्ति दी है—

आप ही अपने वछ निवेरि, लै गए अपने पग्कनि घेरि।

६८ बार....हूँसनि—परति न कही नेह की घूंमनि (क)।

७० कोई—जोई (ग)।

७६ बखरें—बखरैं (क), बछरी (ख)।

८३ बल—वर (ख)।

८५ हलधर सौं—बलधर सौं (क)।

८६-८७ संकर्षन तब नीकें जान्यो, जब हसि हरि सब भेदु बषान्यो।

बीत्यो बरष हरष भरि धायो, समाचार विधि लैन ही आयो। (ख)।

९० इस के स्थान पर 'ख' में दो पंक्तियाँ हैं—

इत आवे पुनि उत कौं धावै, पचै विरंचि मरम नही पावै।

पुनि अपने विधि देषनि गयो, पाछें अद्भुत कौतुक भयो।

९४ निरखे चारु—चहे विरंचि (ख)।

९५ सीसनि ललित किरीट सु लोलें, कुंडल कलित कपोल विलोलें (ख)।

९७ धरे—लसे (ख); आयुध....करे—निकर विभाकर दुति कहु हसे (ख)।

१०० पुनि इक इक ब्रह्मांड के नाइक, सब लाइक सुभकरन सुभाइक (ख)।

१०१-१०३ 'क' ने १०१ को छोड़ दिया है और अवशिष्ट पंक्तियों का पाठ यों रक्खा है—

ब्रह्मादिक बिभूति जग जिती, अंड अंड प्रति दिखियत तिती।

काल कर्म महदादिक जिते, मूरति धरै उपासत तिते।

१०४-१०५ 'ख' ने इन्हें इस प्रकार दिया है—

अति अचिरज दिषि विधि सुधि गई, इक तौ हुती और भई नई।

चकित भयो सु थकित अस भयो, हंस कौ अंस पकरि रहि गयो।

१११ दृग....चहै—दुष भरि दृग उघारि जो चहै (ख)।

११२-११३ सुरतरु से सव तरुवर जहां, सव रस भरे अमी रस जहां।
मृग अरु मनुज मृगाधिप जिते, जहां निर्वैर विराजत तिते (ख)।
११५ निरखे—निरखे श्री (क)।
११६ ढूँढ़त—तन धरि (क) (ङ)।
११८ उर फुरै—सुधि करै (ख); सो—सिर (ङ); पद-पंकज सो घुरै—पद कमलनि पर परै (ख)।
१२२ कमल....वलबीर—सव नेंननि ते वरषत नीर (ख)।

चतुर्दश अध्याय

२-३ पाछै अद्भुत निरखि विधात, चक्यौ थक्यौ कछु फुरति न बात।
सापराध अति थर थर डरै, हरि महिमा अवगाहन करै।
सुधि न परै तब जैसें चहै, तैसें नमस्कार करि कहै।
(क) (ङ)।
५ नैंन....बनमाल—बिलुलित उर बनमाल रसाल (क)।
६ रस—छवि (ख); कवल....बेत्र—वेत्र विषान कंवल (ख)।
७ इस के बाद 'पूर्व पक्ष' लिखकर केवल 'ग' ने यह पंक्ति दी है—
जो कहहु कि याकौ कहा कह्यौ, वरन्यों रूप जु तैं कछु चह्यौ।
११ इक—तुम (ख); ताहि—जाहि (ख)।
१३ पायौ....भेय—जानि परे न रूप रस भेय (ख)।
१४ तौ पै—तौप (क), तो ए (ख)।
१७ संत—संतत (क)।
१६ ठौर—इक ठौर (क); जे....जीवै—जग में इहि जीवनि ते जीवें (ख)।
२१ अब—सब (ख)।
२६ फल....बिरथ—फल तहां इहि वृथा (ख)।
३१ मर्म—नर्म (ग)।

३५ नित्य—निन के (ख) ; तनक—नाकौं (ग) ।

३६ तिहि—जिहि (क) ।

४५ तातें तुम्हरी कृपा जु आहि, वंछ्यो करित रयन दिन ताहि (ख) ।

४७ नैंक न ललचाइ—चितु अनत न जाइ (ख) ।

५६ रज—जो (ख), जन (ग) ; अग्यानी—अज्ञान (ख) ; अभिमानी—अभिमान (ख) ।

६२ कहत....की—तह हौं जैसें चिटी हाथ की (ग) ।

६४ हौं—है (क) ।

७२ अब विशेष करि जन्म जु अपनो, कहत विरंचि नयो करि थपनो (ख) ।

७६-७७ 'ख' ने इन के स्थान पर यह पंक्ति दी है—

तौ तू नारायण सुत आहि, जल में जाहि चाहि लै ताहि ।

७७ तहां कहत बिधि वुधि अवगाहि, मंदस्मित जुत आनन चाहि (क) ।

८० बहुरि नार—बहुरि नारि (क) ।

८२ जल में तुम्हरी यों मूरति आहि, हसत कहा हरि मो तन चाहि (क) ।

८३-८४ ताते हम ऐसे करि पाये, पानी में परिछिन्न बताये ।

तहां कहत अंबुज को तात, अहो तात अब सुनिये बात ।

८६ जल—रज (ग) ; कितक....ते—कहाँ ते मो ते (ख) ।

८८ तुम—मो (ख) ।

८९ की गुरझैं—कर उरझें (ग) ; यह सब तुम्हरी माया नाथ, बहुत अरुझ मुरझे इहि साथ (ख) ।

९१-९२ 'ख' ने पंक्ति ९२ को नहीं दिया है और ९१ का पाठ यों रक्खा है—

जननी हू कौं नहि दिषरायौ, हों तुम हीं अब हीं वोरायो ।

९९ इस के बाद 'ख' में यह अतिरिक्त पंक्ति है—

पीत वसन नव घन तन स्याम, सवनि कैं उलसी तुलसी दाम ।

१०८ इहि—इही (ग); और—अमर (क) (घ); नर—नार (ख)।
१०९ मैं—कौ (क)।
११३ वार वार—पार वार (क)।
११६ इस के वाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
सर्व व्यापी व्रह्म जु आहि, प्रभु की प्रभा कहत कवि ताहि।
११७ परम—सकल (क)।
१२०-१२८ इन का पाठ 'ख' ने इस प्रकार दिया है—
पान पत्र ते भये हमारे, पियत सुधासव अंग तुम्हारे।
हम करि ये कछु नाहिन रचै, पै अभिमान मात्र ही मथै।
पुनि इक इक इंद्रिय रस रसे, भये कृतार्थ सव दुष नसे।
जे सब ही विधि तुम ही लागे, डोलत प्रेम पगे रग मगे।
१३१-१३२ इन के स्थान पर 'क' में यह पंक्ति है—
मनुज लोक मैं जनमु हमारौ, दीजे देव दया विस्तारौ।
१५१ जव लगि जन नहि भये तुम्हारे, हे ईश्वर व्रजराज दुलारे (क)।
१५३ जानहु....चर—ते जानहु ग्यानहु जग गोचर (ख)।
१५९-१६० तव श्री हरि वे बालक वक्ष, वैठे सव पाए उहि कछ (क)।
१६५ आये—पाए (क)।
१७५ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—
बिच बिच सुसम कुसम की डार, जिन पर भंवर करत गुंजार।
१७७ घेरत—टेरत (ख)।

पंचदश अध्याय

२ धेनुक मारि ताल फल खाइ, सबनि कौं सुख दैहै ब्रज आइ (क)।
३ सुदेस—सु बेस (क); बढ़त सु बेस—चढ़त सुदेश (क)।
४-७ 'ख' ने इन के स्थान में यह पंक्ति दी है—
प्रथम चले वन चारन गाइ, वा छवि की मुहि लगौ वलाइ।

७ लगी—सुभ (ङ) ; बन—उत (क) (घ) ; अवरावन—आवरहन (घ), अवराहन (ङ) ।

८-२४ इन पंक्तियों को 'क' ने छोड़ दिया है ।

९ बीच....कवन—तंडुल बीच सु कौ (ख) ।

१० दये—दै (ग) (ङ) ; ब्रज—घर (ख) ।

११ रूप—परम (ख) ; सब के—रूप (ख) ।

१२ घनन....करै—इहि विधि गोचारन पर वरैं (ङ) ।

१३ बरन—अंग (ग) (ङ) ।

१४ सम—से (ग) (ङ) ।

२१ रंगन भरे—इम मन हरै (ख) ; बात....ढरे—जनु द्रुम आप में बातैं करै (ख) ।

२८ सु रस—सुरसुति (ग) ।

३६ निकरि—निकसि (ङ) ; तुव—भुव (ङ); कौ—के (ग) ।

४० जदपि....पाये—छिपे मनुज गति तुम लहि पाए (ग) ।

४४ कबहूं निरखि मराल सु चाल, तिन संग खेलत लाल गुपाल (क) ।

४५ नंदकिसोर—चित के चोर (क) ।

५३ सघन—जघन (क) ।

६२ जाइ—जान (क) ।

६६ भैया—मईया (क) ।

६८ तछिन—ता छिन (क) ।

७१ कानन—पैठत (क) ।

७२ लिये—जिये (क) ।

७७ ऊँचे—उचै (क), ऊंचो (ख) ; भारयो—भारौ (ग) ।

८७ गंडनि—मंडित (ग) ।

९१ दृगन....सिराने—वासर विरह सु ताप सिराने (ख) ।

९२ हँसनि—हसित (ख) ।

षोडश अध्याय

१ कीनी—कीनौ (ग) ।

६ इस के वाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—

बहुरचौं तुमरे मुष ते झरे, अमृत ते अमृत सुष करे ।

१७ कान्ह. . . .हमारी—हमरे वृंदावन की (ख) ; क्यौं. . . .भरी —क्यों विष भरी पूछियै (ख) ।

२६ सुभै—सुरे (ङ) ; मोर मुकट सिर कुंचित केस, मंदस्मित जुत वदन सुवेस (ख) ।

२७ विभु—हरि (ख) ।

३६ इस के बाद 'ख' ने निम्नांकित पंक्तियाँ दी हैं—

जो जन चरन सरन अनुसरे, तिनके हित ए लच्छिन धरे ।
चक्र चिह्न चरननि झलमले, कामादिक रिपु दल दलमले ।
सोहत सुंदर दरवर लच्छनि, अर्ज्ञहिं तच्छिन करत विचछिन ।
मीन चिह्न छिन छिन छवि धरैं, जन के मन ही मीन लों करैं ।
रस भरचौ कमल चिह्न इहिभाइ, जन कौ मन अलि अनत न जाइ ।
जव चिह्न सों मन लागै जाकौ, अमल सुजसु जग प्रगटै ताकौ ।
चरन में अंकुस लच्छिन याते, मन मद गज विचले न ताते ।
कुलिस चिह्न जु चरन राजित नित, पातक पर्वत चूर्न करन हित ।
धुजा चिह्न जिहि हिय जगमगै, ताके सकल अमंगल भगै ।

५१ पकनें—पकनैं (क), सेकनि (ख) ।

५४ उर—डर (क) ।

५६ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—

यों हरि जब दरसे सब सरसे, सुर मुनि सुंदर सुमननि बरसे ।

५८ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—

ते सब तहां आये रस लीन, लै लै ताल पषावज वीन ।

६४ पद कूटिनि में अहिफन जिते, भगन भए मणि डारत निते (ख)।
७४ भार—साज (ख), भांड़ (क)।
७५ जु दंड—निदंड (क)।
७८ अमित अंडमय वेप तुम्हारौ, ताकौ भयौ यह धारन हारौ (ख)।
८३-८४ तव तासों वोले वनमाली, रे रे विप जाली अहि काली।
तू अव रमनक दीपहि जाहि, गरुड के डर ते कौन डराहि (ख)।

सप्तदश अध्याय

५ कहा—कौन (ख)।
६ पर्वनि पर्बनि—सर्पनि पर्वनि (क)।
१३ वल—पग (ख)।
१५ तातौ—सातौ (क), सांतौ (ख)।
२३ राउ—नाथ (क)।
३०-३१ अद्भुत अद्भुत नव मनिमाल, अहि जुवतिन पूजे नंदलाल।
बने जो तिहि छिन को छवि गनौं, चंदहि ओप दई हैं मनौं (ख)।
४१ तिहि—तिन (क), तन (ग)।

अष्टादश अध्याय

१ अष्टादश अध्याय की कथा, बरनि सुनाऊँ मो मति जथा (क) (ङ)।
१० घूमरे—धूमरे (ङ)।
१३ जैसी—ऐसी (ख) (ङ)।
१४ सर—सब (ग) (घ) (ङ)।
१४-१६ सरनि में सरसीरुह रस भरे, मधुकर निकरनि चंचल करे।
कदिलन ते घन सार तुसार, ह्वै रह्यो दुर्दिन आकार।
सीतल मंद सुगंध समीर, कही न परति अति परिमल भीर।
केकी कोकिल करि जु गावत, सुरपुर के गंधर्व रिझावत।
(ख)।

२० खेलत वेलन—मेलत षेलनि (ग)।

२८ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—श्री हरि करि तब ही वह पायो, तजि वह षेल अवर उपजायो।

३१ अवर....बीरी—आवहु षेलहिं वटि वटि वीरी (ख); बीरी —भीरी (क)।

३२ इस के बाद 'ख' ने यह पंक्ति दी है—चढ़ा चढ़ी षेलहि वदि ठांव, धरि धरि आवहु अपने नाँव (ख)।

३४ ललित....कसे—ललित करनि झपटैं पद कसे (ग)।

४१ ओर—आर (ङ); अपनी—अप घनी (क), अप पनी (ङ)।

४३ हरि पर वन्यो श्री दामा अैसे, सरद चंद ऊपर गुरु जैसे (ख)।

४६ चढ़ि—बढ़ि (क)।

५१ बमंत—वगंत (ग)।

एकोनविंश अध्याय

७ कुंज पुंज—मंजु कुंज (ग)।

१६ जनु....पग्यौ—जनु सब सुषत निफल रस पग्यौ (ग)।

२५ उमहि—उतहि (ग); नार—भार (ग)।

३५-३६ सुनतही नंद सुवन के बैन, झट दै सबहिन मूंदे नैन।
जौ देखौ तौ बट भंडीर, ठाढ़े हें सब ताके तीर (क)।

३९ इस के बाद 'ख' ने ये पंक्तियाँ दी हैं—
अैसे कहत सषा मुद भरे, तिन तन दिषि मोहन हसि परे।
नंद सुवन कौ हसिवो जु है, जगत मोहनी माया सु है।

विंश अध्याय

३ प्रावृट—पावस (ख)।

६ यह—अरु (क)।

१० तपे—तये (ग) ।
१६ सुकी—शुष्क (ख), मुद्ध (ग) ।
२१ वुढ़ी—मुढ़ी ; लुढ़ी—ढूरी (ग) ।
३० परसे पै निरमै—सरसे पै निरमै (क) ।
३२ विप्र सु—विद्विप (ग) ।
३५ घुमड़नि—मंडल (ख) ।
४३ घरनि—घरनी (क) (ग) ; वित्रस—विखइ (क) ।
४५ दंत—दंभ (ख) ।
५३ ऐनन—औहनि (क) ।
६६ नहिं निज—नाहिन (ख), नयन जु (ग) ।
७७ ह्वै—कौ (क) ।
८५ गगन—अगन (क) ।
८६ मन—यौ (क) ।

एकविंश अध्याय

८ तरवर....जिते—तरवर सर के खग गन जिते (क) ।
१० सुर—धुनि (ख) ; वजवत—वाजत (क) (ख) ।
२१ सु—सौं (क) ।
२४ तिन....फरै—तिन फल प्रियतम दरसत फरे (ङ) ।
२७ रागिनि—रागनी (ग) ।
४२ मधुन—मधुर (ग) ।
४३ निरखि निरखि—हरखि हरखि (ग) ।
५७ चित्र—चरित (ख) ।
६१ कवरि—कवर (क) ।
७३ उमगत—घूँमत (क), रूपत (ग) ; घूमत—ऊँघत (क) ।
७५ मुनि पुनि—पुनि पुनि (ख) ।

८३ स्याम—राम (क) ।
८६ दामिनि—नीबी (ग) ।
८७ सखा....कौ—सखा भयौ घन घन सु स्यांम कौ (ग) ।
८६ हे सखि....रह्यौ—हे सखि मौंहन हूं की रह्यौ (ग) ।
६२ पये—लए (क) ।
६५ हसनि—हम न (क) ।

द्वाविंश अध्याय

५ जु—निज (ग) ।
१५ सरैं—अनुसरै (क) ।
२० देवि—भरे (क) ।
२६ कै—चख (क) ।
३६ ऐड़ सौं—ऐसौं (ख), और सौं (ग) ।
४३ भाइ—सुभाइ (ख) ; नंदराइ—कंसराइ (क) (ग) ।
४६ हो—है (ग) ; सब रस—सरबस (क), रस वस (ख) ।
५४ व्रज—करि (ग) ।

त्रयोविंश अध्याय

८ प्रहारनि—पहारिनि (क) ; पापिनि—पावन (घ) ।
४० कछु—कहूं (ख) ।
४१ अँगन—अवनि (ख) ।
४८ चुस, लिह—लिह चोष्य (ख) ।
५६ अवस्था—अवस्थ (ख) ।
६१ प्रतिबंधक—पत बंधक (क) ।
६६ जजन—गृहन (क) ।
७६ तुम—गहि (ख) (घ) ।

८६ वृद्धि—विरध (ग) (घ) ।
६६ जाहि—जाइ (क) जैय (ख), जेंइ (घ) ।
१०४ खोहनी—पोहनी (ग) ।
१०६ सेव न तत्त्व—वासन आत्म (ख) ।
११५ भरी—रीभि (घ) ।

चतुर्विंश अध्याय

१ अब सुनि चतुरविंस अध्याइ, चतुर सिरोमनि हरि के भाइ (ख) ।
३ निर्मद—निर्मल (क) (ग) ।
८ चाइ—जाय (ग), आनि (घ) ।
२० सब के—केशव (ख) ।
२२ डारचौ—मारचो (क) ।
४२ सबै विधि—सब छवि (ख) ।

पंचविंश अध्याय

४ घाती—खाती (क) (ख) ।
१२ सब—अब (क) ।
२१ इस के बाद 'ग' ने यह दोहा दिया है—
गाइनि की उह आवनी वनी वनिक इकहि ढार ।
जनु हरिसागर मिलनहित गंग भई सत धार ॥
५५ ओप की—प्रेम की (ख) ।
५६ लोकन लै—ओकन चले (ख) ।

षड्विंश अध्याय

११ ऐन लै जाइ—आयु पी जाइ (ज) ।
२६ निर्मल—निर्विष (ख) ।

३० पंछी—अनपसु (क) (ग) ।

३८ रीत—पीत (क) (ख) ।

४५ अति परिभव करि सकै न ऐसे, हरि अनुसरि सुर निर्भय जैसे (ख) ।

सप्तविंश अध्याय

९ गर्ब—गरभ (ग); जु लोक तिहू कौ—तिलोकी विभु कौ (ख) ।

२० गुरु-गुरु—के गुरु (ख) ।

२६ मनु अंजन रंजन—मनरंजन अंजन (ख) ।

६० बूड़ि गई—बढ़ी गाइ (ख) ।

अष्टविंश अध्याय

३ सुख—फल (घ) (ङ) ।

३० स्वच्छ मुक्ति जो—सूक्ष्म गति जो (ख) ।

३१ बिस्मय—निश्चै (ख) ।

३५ बैठे—पठए (ख); पूरन—परम (क) (ख) (घ); किरनमय —करुनामय (ख), कीरतिमय (घ) ।

३६ बिषै—वेषे (क) ; इहि. . . .अरे—अहं ब्रह्म करि तामें ररे (ख) ।

४० अरु कौतुक—और कीरति (क) ; गिरिबर. . . .भरे—गिरि उधरन आदि रंग भरे (ख) ।

४७ जाकी धूप—जाकौ रूप (घ) ।

५० मुक्ति न मन-मानी—मुक्तिहि मन मानी (क), मुक्ति न अन-माँनी (घ) ।

एकोनत्रिंश अध्याय

२२ दलमली—हलमली (क) ।

२५ मन—मत (क) ।

२७ धरे—धारें (ग)।
३२ ध्यान....तैसैं—धरत भई निज हिय मैं तैंसे (ग)।
३५ कहत—कहति (क) (ग)।
३८ घाटि—निकट (क); कव—अव (क)।
४६ ऊपर—उप रस (ग)।
५२ ते ही—देही (क)।
५३ हृद—दूरि (क)।
५६ भरे, रहे—ररे भरे (क)।
५९ समकंध—सम सरस (ग)।
६७ यह सजनी—आये सजनी (क)।
७९ वहुतै विप्रिय—वहुत विंग्य प्रिय (ग)।
८२ ढार—दार (ग); सुत धार—सुति धार (ग)।
९१ मुमुखन—मनुषन (ग)।
९२ सुश्रूषन—स्वभूषन (क)।
९६ च्याये—च्याने (क)।
१०५ हियौ—हाथौ (क)।
१०६ महा....अनिवारौ—दयौ जुद्ध छय अनल हमारौ (क)।
१४३ भृंगन....घरनी—भृंगनि तहां भृंगनि की घरनी (ग); बीन सी—बंसी (ग)।
१४५ कल—फल (ग)।
१५० अंग—रंग (क)।

पदावली

५ डोलै—लोले (क); बाँधति लोलै—बांधती डोले (क)।
६ सथिया—सतिए (ऊ)।
१४ गृह—जे (ऊ)।

१६ अंजनजुत—अंजन द्विति (ए)।
२२ कौंन—कहा (क)।
२८ ठाँ. . . .भूल्यौ—निरखि निरखि मन भूल्यौ (ऊ)।
२९ आगम—आँगन (ए) ; सुवन फूल—ठौर ठौर (ऊ)।
३६ तरनि तेज—अरुन उदय (उ) (क)।
४५ जैसें—अति (ए)।
४६ आई—ओंई (उ)।
६६ पहिरे—लिये (ख)।
८० कानि—काज (क)।
९२ चढ़ि. . . .उचकैयाँ—धाय चढ़त लीनी उचकैया (ई), चढ़ि लई कुलांच कीनी उझकहियां (ए), चढ़ि कुलांचल उचकैयाँ (क)।
९६ तेज सदन—श्वेत दशन (क)।
१०९ निकट—निटक (ख)।
१२५ खेलि—फैल (क) ; नग रंगन—नगन रंग (क)।
१२६ भुज या—भुव यह (क)।
१२९ सैनन मैं—सेनमेन (ई)।
१३० रहे—रहसि (ई) ; धगुरनि—गुनन (क)।
१३४ बिबिध. . . .भूषन—शोभित सवें श्रृंगार बनावत (क)।
१४४ ब्रजजन—ब्रजकुल (ई)।
१४६ अपनौ—थांभ्यो (ई)।
१६७ मनिमाला—उरमाला (क)।
१६९ रिझवति—रिझये (ई)।
१७० जाइ—फाग (ए)।
१७५ उत तैं. . . .आई—आई उत तें जुरि सुंदरि सब (आ)।
१७७ उठि—उठीयै (आ)।
१८० बर—नर (आ)।

१८३ परम अनंद—प्रेमानंद (ई)।
२०२ भरि लालै—भरि लाजे (ई); नहिं—तव (ई)।
२२४ मूरति धरे अनंग—सुरत धरे राग रंग (ई)।
२३४ गति—गहि (क)।
२३६ घिरि—जुरि (अ)।
२३७ छेके हैं मदनगोपाल—रोके हैं सांवरे लाल (क)।
२४२ रस—रंग (अ) (आ)।
२४३ मति—गति (अ)।
२४४ साँवरे—माधुरी (अ), सांवरी (ई)।
२५४ लिये—ले (ई) (क)।
२५५ अंबुद—अंबर (ई) (क)।
२५७ प्रेम—लाल (ई)।
२५६ धनुधर—धुरंधर (अ), धनुर्द्धर (ई)।
२७० चित हू न परै चैन—चित हूं न परे चेन मुख हूं न आवे बेन (क)।
२७३ श्रवनमई री—स्रमित मई री (ऊ)।
२८१ उपमा को—उपमा नांहि (ऊ), उपमा काहि (क)।

---

४ पदों की प्रथम पंक्ति की अकारादि-क्रम-सूची

प्रथम पंक्ति	पृष्ठ संख्या
आज मेरे धाम आए री नागर नंदकिशोर	४२८
आज सिँगार स्यामसुंदर कौ देखे ही वनि आवै	३३१
आज हरी खेलन फाग बनी	३६४
आजु झूली सुरंग हिंडोरे प्यारी पिय के संग	४४०
आपन चलिये लालन कीजिये न लाज	४१६
आय क्यों न देखो लाल अपनी प्यारी की छबि	३७०
आयो आगम नरेश देश देश में आनंद भयो	३८२
आलस उनीदे नयन लाल तिहारे कहां तुम रैन बिताए ..	४३१
आली तेरौ बदन चंद देखत, बस भए कुंजबिहारी ..	४४६
आली री मंद मंद मुरली धुनि बाजत नृत्यत कुंवर कन्हैया ..	४३४
आली री सघन कुंज पुहुप पुंज उसीर की रावटी	४४७
आली री सामरी मूरति तेंरें जीय में वसति	४५१
आली श्रावन की पून्यो हरि हरियारी भूमि सोहत पिया संग ..	३८८
आवत ही यमुना भर पानी	४०८
आवरी बावरी उजरी पाग में मेल कें बांध्यो मंजुल चोटा ..	४१४
उँनींदी आँखें लागत प्यारी, कजरारी कोर बारी	४४२
उपरना वाही के जु रह्यो	४०२
उसीर महल में विराजे मंडल मध्य मोहन छाक खात ..	४०७
ऊसीर के मैहैल ब्यारू करत दोऊ भैया	४४६
ए आज अरुन अरुन डोरे दृगन लाल के लागत हैं अति भले ..	४०२
एक दिस वर व्रज बाला एक दिस मोहन मदन गोपाला ..	३६६
ए बाल आवत डगर डगरी	४०५
एरी इन बांसुरिया माई मेरो सरवस चोरायो	४२८
एरी तेरी सेज की मुसक्यान मोहन मोह लीनो	४२८
ए री सखी निकसे मोहनलाल, खेलन ब्रज मैं फाग री ..	३३६

प्रथम पंक्ति	पृष्ठ संख्या

प्रथम पंक्ति	पृष्ठ संख्या

५ शब्दार्थ-कोष

रूपमंजरी

८ छिल्लर—छोटा तालाब ।

४६ अमराइ—आम का बाग़; बरारी—बलिष्ठ, घनी; ती—थी ।

४६ चटसार—पाठशाला ।

५१ कासार—छोटा तालाब ।

५६ ननकारति—अस्वीकार करती है ।

६० पनच—प्रत्यंचा ।

६३ अहेर—शिकार ।

६६ हिमवत—हिमालय; बारी—कन्या ।

६७ लटकि लटकि—बल खाते हुए ।

६६ गोहन—साथ ।

१२७ पासी—पाश, बंधन ।

१५८ सुठौन—सुंदर ।

१७१ ओरे—ओले ।

१६६ मनू—रुद्र ।

२१४ गहबर—दुर्गम ।

२१५ चखौंडे—दिठौने ।

२१६ पेसल—कोमल; आलबाल—थाला ।

२५७ टटावक—कदाचित् टुटका ।

३०१ हाउ—"संयोग समय में नायिका की स्वाभाविक चेष्टाएँ जो पुरुष को आकर्षित करती हैं" (हिंदी-शब्द-सागर) ।

३०५ हेला—"नायक से मिलने के समय नायिका की विविध विलास या विनोद-सूचक मुद्रा" (हिंदी-शब्दसागर); रेला—अधिकता ।

३१२ डभकि दै—डबडबा कर ।

३४१ घन हर घोरै—बादल मंद-गति से गरज रहा है ।

३४२ पटबिजना—जुगनू ।

३६८ परव—परेवा, कबूतर ।

३७२ उखी—देग, बटलोई ।

३७६ चीत्यौ—चैतन्य, बुद्धिमान ।

३७८ बगावै—वेग से जाता है ।

३७६ फरी—एक प्रकार की छोटी चमड़े की ढाल ।

३८५ जरा—मगध देश के किसी श्मशान में रहने वाली एक राक्षसी। ऐसा प्रसिद्ध है कि मगध के वृहद्रथ राजा को भगवान् चंडकौशिक ने प्रसन्न हो कर एक फल दिया था और उस का यह प्रभाव बतलाया था कि जो स्त्री इसे खाएगी उस के केवल एक पुत्र होगा। राजा वृहद्रथ के दो स्त्रियाँ थीं अतएव उन्हों ने उस फल के दो समान भाग कर के अपनी दोनों स्त्रियों को खिला दिया। कालांतर में दोनों स्त्रियों के आधे आधे शरीर वाला एक मृत बालक उत्पन्न हुआ। विवश हो कर इस बालक को श्मशान में फेंक दिया गया। जरा राक्षसी ने बालक के शरीर के दोनों भागों को जोड़ कर उसे जिलाया था इसी से उस का नाम जरासंध पड़ा।

जरा...जुराई—रूपमंजरी इंदुमती से कहती है कि जरा राक्षसी को बुला कर राहु के शरीर के दोनों भागों को क्यों नहीं जुड़वा लेती क्योंकि शरीर जुड़ जाने पर जब राहु चंद्रमा को ग्रसेगा तब वह उसे बिलकुल पचा देगा। चंद्रमा उस के उदर से निकल कर पुनः विरहीजनों को कष्ट न दे सकेगा।

३८६ अहरनि—निहाई।

३८७ जब हीं..तहाँ—जब चंद्रमा का प्रतिबिंब शीशे पर पड़े।

३९९ बितन—कामदेव।

४०० नाट—स्वाँग, तमाशा।

४०६ मुलकि—प्रसन्न हो कर।

४१४ चाचर—होली का स्वाँग और हुल्लड़।

४१५ पटतारनि—पटताल, मृदंग में बजाई जाने वाली एक ताल; पहपटिया—शोर-गुल करने वाला।

४१७ बोलन—बुलाने।

४३१ चपरि कै—शीघ्रतापूर्वक।

४४३ कुंभ—घट, शरीर।

४५७ घैर—अपयश।

४६१ रिसिआई—कुपित हो कर।

४६७ मिरा-मत्त—मदिरा पी कर मतवाला व्यक्ति।

४६८ निवारि सी लई—समाप्त सी कर ली गई, मृत सी जान पड़ने लगी।

५४० कन्याइ—गोद में बिठलावे, आदर-सत्कार करे।

५४१ थलराये पै—स्थिर अथवा शांत होने पर; निरपीड़े—कष्ट पहुँचाने पर; निरसाइ—म्लान हो जाती है।

५५३ बिवधान—विच्छेद।

५६१ करौत—आरा; चीरि... गात—सूर्योदय ने दोनों को एक दूसरे से पृथक् होने पर विवश किया।

बिरहमंजरी

१६ रस-बलिता—रस-युक्त।

६७ परौरत—मंत्र पढ़ कर फूँकता है, मंत्र बल से पीड़ित करता है।

१०२ धुरवा—बादल; पटे—किरच के आकार की लोहे की फट्टी।

१५१ बिधुंतुद—राहु।

रसमंजरी

२३ नक्र-मुख—घड़ियाल का मुख।

२५ धानी—धान्य, किसी प्रकार का अन्न। (विशेष—कदाचित् इस शब्द के स्थान पर मूल पाठ में 'घानी' रहा होगा क्योंकि अर्थ की दृष्टि से वह बहुत संगत प्रतीत होता है)।

३५ संकुरै—संकुचित होती है।

६४ चंदचूड़—शिव।

७३ गहगहि—प्रफुल्लित।

७६ चुरकुट—चूर चूर, पूर्णतया शिथिल।

६३ सागस—द्वेषयुक्त, सापराध।

६४ चुचात है—टपक रहा है।

१०४ अवधारै—विचारपूर्वक निश्चित करती है।

१२३ पेट...सर—पेट गिराने पर भी सिर न बचेगा।

१६७ आरति करि—विरक्ति दिखला कर।

२०० मूझै—मुरझाती है, उदास होती है।

२०५ घूम परयौ—चक्कर आ गया।

२२६ मृड—शिव; त्राता—रक्षक।

२३६ गैवर—श्रेष्ठ हाथी (गज वर)।

२७७ भंगुर गति—बल खाती हुई चाल; लटी—क्षीण, पतली।

२७६ धमिल—बँधी चोटी।

३१४ धोरै—निकट; टकटोरै—टटोलती है।

३१७ जारत की नहियाँ—जलाता है कि नहीं।

३२५ कुंभीपाक—एक नरक विशेष।

३७६ चोप—उत्साह।

मानमंजरी नाममाला

२ करुनार्नव—दया के सागर।

७६ लुकअंजन—"वह कल्पित अंजन जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इसके लगाने से लगानेवाला अदृश्य हो जाता है" (हिंदी-शब्दसागर)।

१०० उसीसे सौं उठँगि—तकिया की टेक लगा कर।

११८ मुहकरि—कदाचित् आम की चोपी।

१४६ हाँतौ कीय—दूर किया, मिटाया।

३८२ सांति परी...नाह—यह अच्छा ही हुआ कि तेरा विवाह नहीं हुआ, नहीं तो तू अपने पति को दुःख देती।

३६३ तल्प—शय्या।

४६६ कंडु—खुजली।

५२३ असु—प्राण।

अनेकार्थमंजरी

४१ गज-पुष्कर—हाथी की सूँड़।

६० बहिक्रम—आयु।

६६ भगर-विद्या—हाथ की सफ़ाई, जादू।

६६ द्विभुजस्फालन—दोनों हाथों का संघर्ष, ताली।

स्यामसगाई

१४ अरदास—प्रार्थना।

२२ चरबाई—चतुर, चालाक।

२३ लंगर—नटखट।

२५ अचपलौ—अत्यंत चंचल।

४४ अरस-परस—दर्शन।

५४ ब्हैंक—बहँक कर, बेसुध हो कर।

६४ ही—थी।

७४ गारुड़ी—मंत्र द्वारा सर्प का विष उतारने वाला व्यक्ति।

९६ बाइगी—कहने वाला (विशेष—कदाचित् इस शब्द का संबंध हिंदी 'बायक' तथा सं० 'वाचक' से है[1])।

१११ डोल—झूला।

११२ झोंटा—झोंका।

भँवरगीत

४१ उपाधि—छल, भ्रम।

५३ अवतारि कै—उत्पन्न कर।

५६ जोग ऊधौ जेहि पावौ—जिसे (योग का) अधिकारी समझो।

८४ सायुज्य—एक प्रकार की मुक्ति जिस में जीवात्मा परमात्मा में लीन हो जाती है।

१२३ करम...किये—क्रम क्रम से अथवा क्रमपूर्वक कर्म करने से।

१२६ कर्म बंधन ह्वै आवै—अवतार धारण करने के कारण हरि को कर्म करने पड़ते हैं।

१३१ नस्वर—नाशवान।

१३३ अधोक्षज—विष्णु।

१४२ वीरे—कान का एक आभूषण; बागे—अंगे की तरह का एक पहनावा, जामा।

१४७ बिडराति फिरति—व्याकुल हो कर इधर उधर भागती फिरती हैं।

१८२ संधान—निशाना; आयुध—अस्त्र।

१९९ नाहिन कोऊ चित्र—कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है अर्थात् ये (कृष्ण) चाहे जैसा विचित्र कार्य करें उसे साधारण ही समझना चाहिए।

---

[1] श्री विश्वम्भर नाथ मेहरोत्रा इस शब्द का संबंध 'बाई' से जोड़ते हुए लिखते हैं—"बाई वह रोग है जिसके प्रकोप से मनुष्य अपने होश में न रहकर ऊटपटांग बातें बकने लगता है। संभवतः 'ऊटपटांग' बातों के अर्थ में ही 'बाइगी' शब्द का यहाँ प्रयोग हुआ है" ('स्याम-सगाई, और रुकमिनी-मंगल,' टिप्पणी, पृ० ५)।

२२७ घातैं—प्रहार, आक्षेप ।
२३२ मसिहारे—काले ।
२५३ हरि भाँति कौं—कृष्ण की रीति अथवा युक्तियों को ।
२६५ वादि—व्यर्थ, निष्प्रयोजन ।
२६९ संथा—शिक्षा, पाठ ।
३२३ बाध—बाधा, रुकावट ।
३२८ अवसेसहि—शेष भाग को ।
३५२ जबहिं. . .मूठी—जब तक मनुष्य की मूठ बँधी रहती है अर्थात् जब तक वह वास्तविकता से अनभिज्ञ रहता है ।

रुक्मिनी मंगल

१८ अर सौं—हठपूर्वक ।
५२ काहू नाहिं पतीजौ—किसी का विश्वास न करना ।
६२ सुढार—सुंदर; चटा-गन—विद्यार्थियों के समूह ।
६७ अनुहारे—समान रंग-रूप वाले ।
६८ रोवत हैं बारे—सूर्य के डर से अंधकार भाग जाता है, भ्रमर उसी के छोटे छोटे बालक हैं जो उस के चले जाने के कारण रो रहे हैं ।
७१ अरकैं—टकराती हैं; अरक-किरन—सूर्य की किरणें ।
७३ जाल-रंध्र-मग. . .धुरवा—अट्टालिकाओं के झरोखों की जालियों के मार्ग से निकलता हुआ अगर लकड़ी का धुआँ जलपूर्ण मेघ के समान प्रतीत होता है ।
७५ बगर बगर—प्रत्येक महल के ऊपर; गुड़ी—पतंग ।
८७ छिप्र गति—शीघ्रतापूर्वक ।
१०९ सचु—सुख ।
१२६ कौल—कौर, ग्रास; तंतर—लाचार, विवश (विशेष—कदाचित् इस शब्द का संबंध सं० 'तंत्र' से है) ।
१२७ पानिप—ओप, कांति; धोरे—श्वेत, उज्वल ।
१२८ ओरे—ओले ।
१३२ गोमाय—शृगाल ।
१३५ परेवा—कबूतर ।
१३६ छिया—छोकरी, लड़की ।
१४४ अरबर में—अत्यंत शीघ्रता करने के कारण, हड़बड़ी में ।
१४८ दारु. . .जैसैं—अरणी नामक काठ के बने हुए एक यंत्र

को तेज़ी से मथने से अग्नि उत्पन्न होती है।

१७८ चहले दहले—थाले के कीचड़ में।

१८१ श्रीबत्स-बच्छ—विष्णु का वक्षस्थल।

१९२ ओज उबारे—शक्ति का उबाल अथवा जोश, पराक्रम की लंबी चौड़ी बातें।

१९५ ऊजन—सुदृढ़।

२१९ डहडह्यौ—आनंदित।

२२० गहगह्यौ—कांतियुक्त।

२२३ खुभी—कान का एक आभूषण।

२२५ अंस—कंधा।

२२८ बेझा—निशाना, लक्ष्य।

२३३ हरै हरै—धीरे धीरे।

२३८ मधुहा—शहद निकालने वाला व्यक्ति।

२४४ जूप—यज्ञ का वह खंभा जिस में बलि का पशु बाँधा जाता है। जूप लागें—यूप से बँधे हुए बलि-पशु के समान विवश; बजमारे—वज्र से मारे (एक प्रकार की गाली)।

२५३ कुलही—टोपी।

रासपंचाध्यायी

५ नीलोत्पल-दल—नीले कमल का पत्र।

२१ कुंडिका—कूँड़ी, पथरी।

२३ सिघ...अस—गरदन पर घने बाल (अयाल) वाले सिंह के समान शोभित।

३३ गार—गहरा गड्ढा।

३८ पंचप्रान—पाँच वायु (प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान)।

४५ बीरुध—बेल।

७० धर मैं—पृथ्वी के भीतर।

७५ इक बितस्ति कौ—एक बालिश्त का; संकु—खंभा।

७७ करनिका—कमल का छत्ता।

७९ कौस्तुभ मनि—समुद्र से निकला हुआ एक रत्न जिसे विष्णु अपने वक्षस्थल पर धारण करते हैं।

८० उड़—नक्षत्र।

१०० छपा—रात्रि।

१०५ कुंज-रंध्रनि—कुंजों के छिद्रों के बीच से (कुंजों की

पत्तियों के बीच के रिक्त स्थान से)।

१०६ वितन—फैला हुआ, विस्तृत; वितान—शामियाना; तनाव—शामियाने को खींचे रहने वाली रस्सियाँ।

१२३ पंचभौतिक तें न्यारी—पंच भूत (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश) द्वारा बने हुए मनुष्यों के साधारण शरीर से भिन्न।

१२६ सच्यौ—एकत्रित।

१३५ चलीं ढुकि—शीघ्रतापूर्वक चलीं।

१४० छबि-बिलुलित—सुंदरता से हिलती हुई।

१५० उदर-दरी. . रखवारी—जब परीक्षित अपनी मा उत्तरा के गर्भ में थे तभी द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने उन पर ब्रह्मास्त्र का प्रहार किया था। उस समय गर्भ के भीतर प्रवेश कर के कृष्ण ने उन की रक्षा की थी[1]।

१६६ राका-मयंक—पूर्णिमा का चंद्रमा।

१६६ अनु—समीप।

२०० घर. . .है—स्त्रियों का गृहस्थ धर्म भ्रम है (असत् ज्ञान है), तुम्हारे रूप के सामने उस का कोई महत्त्व नहीं है।

२०४ ते रहे कौर तें—वे एक पंक्ति से (मंत्रमुग्ध की भाँति) खड़े हुए हैं।

२१८ नव-नीत. . हिय—नए प्राप्त किए हुए मित्र का मक्खन के तुल्य (कोमल) हृदय।

२२६ भीर—समूह।

२३३ धूँधरी—धुँधली।

२६० छिलछिल—छिछला।

२६५ पुट—हलका रंग।

२७३ जाति—चमेली की जाति का एक पुष्प। जूथिका—जूही का पुष्प।

---

[1] **दे० 'दशम स्कंध', अध्याय १, पंक्ति ८३-८८ तथा 'श्रीमद्भागवत', स्कंध १, अध्याय ८**

२७६ करबीर—कनेर ।

२८१ दुख-कंदन—दुःख को नष्ट करने वाले ।

२८७ नैसुक—थोड़ा ।

२६२ पनस—कटहल ।

३०२ मुख-चाँदने—मुख के प्रकाश में, मुखचंद्रिका में ।

३१३ भृंगी—बिलनी नामक कीड़ा। इस के विषय में यह प्रसिद्ध है कि यह किसी कीड़े को पकड़ कर मिट्टी से ढक देता है और स्वयं उस पर बैठ कर भिन्न भिन्न शब्द करता है। भृंगी के भय से वह कीड़ा भी उसी का सा हो जाता है।

३४१ मानिनि-तन-काछे—मानिनी का शरीर धारण किए हुए ।

३४५ क्वासि—कहाँ हो ।

३५३ दृगंचल—पलक ।

३५५ अहुरि-बहुरि—लौट कर ।

३५८ अवधि-भूत इंदिरा—अपने चरम उत्कर्ष को प्राप्त लक्ष्मी ।

३७१ प्रनत-मनोरथ-करन—प्रणाम करते हुए अर्थात् शरणागत की इच्छाओं को पूर्ण करने वाले ।

३८६ सनै सनै—धीरे धीरे ।

३६० अटवी मैं अटत—वन में घूमते फिरते हो; कूर्प—कटीली घास; अन्यारे—नुकीले ।

३६२ अलबल बोलैं—ऊटपटाँग बातचीत करती हैं ।

३६४ दृष्टिबंध करि—(इंद्रजाल अथवा जादू के प्रभाव से दर्शकों की) नज़र बाँध कर; नटवर—श्रेष्ठ नट या मदारी ।

४०५ पटकी—कमर में बाँधा जाने वाला दुपट्टा ।

४१६ एव—ही ।

४५१ तूल—झगड़ा ।

४५२ निरवधि—असीम; सूल—पीड़ा, दुःख ।

४७७ तिरप—"नृत्य में एक प्रकार का ताल जिसे त्रिसम या तिहाई कहते हैं" (हिंदी-शब्दसागर) । त्रिसम अथवा तिहाई के ताल में नृत्य करने वाला तीन बार तेज़ी से एक ही स्थान पर चक्कर खाता है । अंतिम बार

जिस समय वह रुकता है उसे त्रिसम का मुख्य ताल (सम) कहते हैं।

४७७-७८ कोई सुंदर स्त्री किसी सखी के हाथ (हथेली) पर त्रिसम का ताल बाँध कर अथवा त्रिसम की गति से नाचती है। उसे नाचता देख कर ऐसा प्रतीत होता है मानों हथेली पर लट्टू नाच रहा हो; इस दृश्य को देख कर कृष्ण लट्टू (मुग्ध) हो जाते हैं।

४६६ सुलफ—कदाचित् यह शब्द 'सुलप' (=सुंदर आलाप) का विकृत रूप है।

५१६ गोलक—आँख की पुतली।

५३४ दगरौ—मार्ग।

५३८ व्रीड़न—लज्जित करने वाले।

५३६ मरगजी-माल—मींजी अथवा मली हुई माला।

५५६ भाँति—रीति।

५८३ अधिकारी—उपयुक्त पात्र।

५८६ हरि-धर्म-बहिर्मुख—वैष्णव-धर्म-विरोधी।

सिद्धांत पंचाध्यायी

६ महाभूत—पंचतत्त्व (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश)।

७ महतत्व—जीवात्मा।

१० बिस्व-प्रभव—विश्व की उत्पत्ति का कारण।

१४ आश्रय—अवलंब, आधार; अवधि-भूत—चरम उत्कर्ष को प्राप्त।

१८ निरोध—प्रतिबंध अथवा नियंत्रण।

२६ निरतास—इस शब्द का भावार्थ सार या निचोड़ जान पड़ता है।

२७ ननु—निश्चयपूर्वक।

६० खेवा—संभवत: इस शब्द का प्रयोग यहाँ 'समूह' के अर्थ में हुआ है।

६१ निदेसा—निर्देश, आज्ञा।

७७ आत्मा-निष्ठ—आत्मा में स्थित; आतम-गामी—आत्मा को जानने वाला।

७८ अनावृत—जो ढँका न हो, प्रत्यक्ष।

८० निरबृत्ति-परा तैं—मुक्ति-

दायिनी होने के कारण ।

८४ इंछै—इच्छा करते हैं ।

१५८ ऊती—क्रीड़ा, खेल ।

२१६ काम्य—"वह यज्ञ वा कार्य जो किसी कामना की सिद्धि के लिए किया जाय" (हिंदी-शब्दसागर) ।

२२० अनाकर्न—न सुनने वाला ।

२२३ अविसेखै—समान रूप से ।

२२५ अष्टांग-साधना—आठ प्रकार की योग की क्रियाएँ (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, और समाधि) ।

२३३ आलात—जलती हुई लकड़ी ।

२३४ अंसनि—कंधों पर ।

२४० अनागत—अकस्मात ।

२७४ छिया करि—घृणित वस्तु मान कर ।

दशम स्कंध

प्रथम अध्याय

१ लच्छन—श्रीमद्भागवत पुराण के वर्ण्य विषय जो सृष्टि की उत्पत्ति और लय आदि से संबंध रखते हैं । इन की संख्या दस है—सर्ग, विसर्ग, स्थान, पोषण, ऊति, मन्वन्तर, ईशानुकथा, निरोध, मुक्ति, और आश्रय । इन में प्रथम नौ का वर्णन दसवें विषय 'आश्रय' (परब्रह्म श्री कृष्ण का चरित्र) को भलीभाँति मनोगत करने के लिए है । फलतः 'आश्रय' को नौ लक्षणों का लक्ष्य कहा गया है[१] ।

१२ रेनुकनूका—धूल का कण ।

१७ दया दरेर—दया के 'प्रवाह' का 'धक्का' अर्थात् असीम दया ।

२४ महदादिक—'महत्' अथवा महत्तत्व (तथा पंच महाभूत, शब्दादि, तन्मात्रा व इंद्रिय) आदि प्रकृति में होने वाले विकार । महर्षि कपिल के सांख्य मत में इन्हें सृष्टि का

---

[१] **दे० 'श्रीमद्भागवतभाषा', स्कंध २, अध्याय १० तथा स्कंध १२, अध्याय ७**

कारण माना गया है और 'कारणसृष्टि' की संज्ञा दी गई है।

२५ बिसर्ग—महत्तत्व आदि कारणों द्वारा उत्पन्न समस्त चराचर के स्थूल शरीर। इन्हें 'स्थूलसृष्टि' अथवा 'कार्यसृष्टि' कहा गया है।

२६ मर्जाद बितान—मर्यादा का विस्तार अथवा उत्कर्ष; 'थान'—अपनी अपनी मर्यादा का पालन करते हुए सूर्यादिक जिस उत्कर्ष अथवा श्रेष्ठता को प्राप्त करते हैं उस का नाम 'स्थान' है।

२६ समीचीन—यथार्थ; 'मन्वंतर' बृत्ति—मनु आदि के धर्माचरण में संलग्न होने का नाम।

३० 'ईसान कथा'—राजाओं का जीवनचरित।

३१ निरोध—दुष्ट राजाओं को परास्त कर के अपने वश में करना (विशेष—श्री कर्मचंद गुग्गलानी के अनुसार 'निरोध' शब्द का यह अर्थ श्रीधर स्वामी कृत है)।

३६ अवर निरोध भेद—उपर्युक्त गुग्गलानी जी के अनुसार वल्लभाचार्य ने 'निरोध' शब्द का अर्थ दो प्रकार से किया है-(१) प्रपंच विस्मृतिपूर्वक भगवान् में भक्त की आसक्ति (२) आत्मविस्मृतिपूर्वक भगवान् की अपने भक्त में आसक्ति। आगे की पंक्तियों में कवि ने दोनों प्रकार के 'निरोध' का वर्णन किया है।

६४ पितहि न...दियौ—यदु ययाति राजा के पुत्र थे। एक समय ययाति के पापाचरण से क्रुद्ध हो कर शुक्राचार्य ने उन्हें श्राप दे कर तुरंत वृद्ध कर दिया किंतु क्रोध शांत होने पर बाद में उन्हों ने यह भी कहा कि तुम किसी पुरुष की युवावस्था के साथ अपनी वृद्धावस्था बदल सकोगे। कामुक ययाति ने अपने पुत्र यदु से अपनी युवावस्था देने के लिए आग्रह किया किंतु उस ने ऐसा

करना अस्वीकार किया[१]।

६६ बिभावन—उत्पन्न करने वाले।

६६ इषै—इच्छानुसार।

७१ मुमुषन कौं—मुमुक्षुओं को, मुक्ति पाने के इच्छुक व्यक्तियों को; संसृति—आवागमन।

७७ अतिरथि—वह व्यक्ति जो बहुत योद्धाओं के साथ अकेले ही लड़ सकता हो।

८० गिलत—निगलते हुए।

८१ दुरत्यय—अपार।

८६ उदर-दरी मैं पैसे—देखिए पृष्ठ ५८१।

६० अर्भ—बालक।

६४ धर्म के बर्म—धर्म के रक्षक।

१०१ बैयासिक—व्यास के पुत्र।

११० कलमल्यौ—आकुल हुए।

११६ बिबुधन सौं—देवताओं से।

१२४ परिकर—अनुचरों का समूह।

१३७ किंक्यान—केकान देश के घोड़े; पलान—चारजामा।

१४४ जंता—सारथी।

१४७ आनकदुंदुभि—वसुदेव।

१४६ अमै—क्षति, अनिष्ट[१]।

१६१ सुरापी—शराबी।

१७४ औन—कदाचित् इस शब्द का संबंध सं० 'अवन' (= सुख) से है।

१६७ कर्म-कषाय—कर्म रूपी कसैलापन।

द्वितीय अध्याय

२६ बिसंसृत भयौ—गिर गया।

४१ सुसा—बहिन; गुर्बिनी—गर्भिणी।

५६ प्रपन्न—आश्रित।

६३ ऊर्ननाभि—मकड़ी।

६४ बिस्फुलिंग—चिनगारी।

७० वार—इस पार अर्थात् संसार में।

७७ उखटि कै परे—लड़खड़ा कर गिरे।

---

[१] दे० श्रीमद्भागवत, स्कंध ६, अध्याय १८

[१] श्री कर्मचन्द गुग्गलानी ने इस का अर्थ "इस तरह" दिया है।

तृतीय अध्याय

५७ उपसंहरौ—परित्याग करो।
६७ लटि रही—लुभा रही।
७० घूमि—चक्कर खा कर, व्याकुल हो कर।

चतुर्थ अध्याय

३ रौर—कोलाहल।
१७ गारौ—गर्व।
२३ ब्रम्हहा—ब्रह्महत्या करने वाला।
२५ सौनक—कसाई।
३८ बल्गन करैं—बक बक करते हैं, बातें मारते हैं।
५२ बृकन—भेड़ियों को; अजन प्रति—बकरियों के समीप।

सप्तम अध्याय

२० बरहे—खेत सींचने वाली छोटी नाली।
२१ अभिचार—मंत्र आदि के प्रयोग द्वारा प्रेरित।
३० कूट—पर्वत की चोटी।
३९ साँकरी—संकट, कष्ट।
४३ परी...धुकि—पृथ्वी पर गिर पड़ी।
५० घुरि गयौ—लिपट गया।
५३ किरच किरच—टुकड़े टुकड़े होकर।

अष्टम अध्याय

१२ अतींद्रिय—इंद्रियों के अनुभव के परे, अगोचर।
४० नाक-नथूली—नाक की छोटी नथ; झगूली—बच्चों के पहनने का ढीला कुरता।
४१ जटित वघूली—सोने अथवा चाँदी में जड़ा हुआ छोटा वाघ का नाखून।
६१ खरिक—पशुओं के रहने का स्थान, वाड़ा; खोरि—गली।
६४ अरग अरग—चुपके चुपके।
८९ लिलाई—लीला अथवा क्रीड़ा करता है।
१०१ माखन मो हारे—यह पाठ चिंत्य है।
१०३ हित-ईषनी—हित की प्रबल इच्छा रखने वाली।

नवम अध्याय

११ पृथु—चौड़ी; बिलुलित—हिलती हुई; कबरी—चोटी।

१२ नेत—मथानी की रस्सी।
४८ नोई—दूध दुहते समय गाय के पैर बाँधने की रस्सी।
४९ अवर . . . साँठि — और (रस्सी) जोड़ ली।
८२ दरबी—दाल आदि चलाने का पात्र, चमचा।

दशम अध्याय

४२ अव्यय—सदा एक से रहने वाले।
५४ परिचर्या—सेवा।
६८ ऊक—अंगार; बिभाकर. . टूक—दो सूर्यों के टुकड़े।
७० गुह्यक—कुबेर के यक्ष।

एकादश अध्याय

२४ पाँवरि—खड़ाऊँ।
५५ नाख्यौ—पटका, फेंका।
६२ सुठे—सुंदर।
१११ बिचेतन—मूर्च्छित।
१३७ अगदराज—औषधियों के राजा।

द्वादश अध्याय

२९ नर-दारक—मनुष्य का बेटा।
४३ तिलोदक—"मृतक संस्कार की एक क्रिया जिस में जल और तिल लेकर मृतक के नाम से छोड़ते हैं" (हिंदी-शब्दसागर)।
५४ तरहर—नीचे।
८४ गह्वर—अंधकारमय, गूढ़ स्थान।
९७ सूत—पुराणवक्ता।
११२ अनघ—पाप से मुक्त।

त्रयोदश अध्याय

२१ बिसाखा—सत्ताइस नक्षत्रों के समूह में सोलहवाँ नक्षत्र।
१०७ अजा जवनिका—माया का पर्दा।

चतुर्दश अध्याय

४ ईड्य—प्रशंसनीय, स्तुत्य; तड़िदिव—बिजली की भाँति।
६ अवतंस—श्रेष्ठ।
४७ अनासक्त—लोभ रहित।
६७ त्रिसरैन—"वह चमकता हुआ कण जो छेद में से आती हुई धूप में चलता या

घूमता दिखाई देता है" (हिंदी-शब्दसागर)।

षोडश अध्याय

८ ह्रद—झील।
१७ अमुना—इस से।
४८ बरियारौ—बलवान।
५१ माड़े—मैदे की बनी हुई एक प्रकार की बहुत पतली रोटी;[1] भाँड़े—बरतन।

सप्तदश अध्याय

६ दौर—धावा।
१४ भिहरानौ—टूट पड़ा; मधु-रिपु-आसन—गरुड़।
२६ लेलिह—सर्प।

अष्टादश अध्याय

३१ बीरी—समूह, दल।
४० टोल—मंडली।

एकोनविंश अध्याय

२० बगर्दा—लुढ़क चली।

विंश अध्याय

३ प्रावृट—पावस, वर्षा।
१९ उत्पथ—कुमार्ग।
२१ बुढ़ी—राम की बुढ़िया, बीर-बहूटी; लुर्ढ़ी—लुढ़क चली; उछलींध्र—कुकुरमुत्ता।
२७ ऊर्म्मी—तरंग, लहर।
५४ बनौकस—वनवासी।
५९ कचोर—कटोरा।
६८ गतकल्मष—पाप रहित।
८७ पुहुपवर्ती—रजस्वला।

एकविंश अध्याय

४५ भई...ईरति—मुनियों (के हृदय) को आंदोलित अथवा चंचल किया।

द्वाविंश अध्याय

२ दारिका—कन्याएँ।
६ हविषा—साकल्य, जौ तिल आदि मिली हुई हवन की सामग्री।

---

[1] **दे० श्रीमद्भागवत, १०—१६—२४ पर श्रीधर स्वामी की टीका—"मंडकपाकभाजनंतद्वत्"।**

१३ अमुना—इस।
३५ बेपंत—काँपती हैं।
४६ आत्यंतिक—बहुत काल तक ठहरने वाला।

त्रयोविंश अध्याय

११ जाचंग्या तैं—माँगने से।
२० ओदन—भात।
२१ मचिबौ—उत्तेजित होना।
३० अरथी—ग़रज़ वाला।
६७ अध्यास—मिथ्याज्ञान, भ्रम।
६६ जजन—यज्ञ का स्थान।
७० सन्न—समीप [संभवतः इस शब्द के स्थान पर 'सत्र' (=यज्ञ) पाठ रहा होगा[1]]।
७७ रलक—चोटी।
८२ असूया—ईर्षा।

पंचविंश अध्याय

१ पंचबिंस—पंच तत्त्व तथा उन की पाँच प्रकृतियाँ।
४ घाती—छल, चालबाज़ी।
५ उरन पूँछि—भेड़ की पूँछ।

[1] दे० श्रीमद्भागवत, १०-२३-

२६ साँप बैठना—कदाचित् य. कुकुरमुत्ता का प्रादेशिक नाम है। श्रीमद्भागवत में इस के लिए 'छत्राक' शब्द प्रयुक्त हुआ है[1]।

सप्तविंश अध्याय

२१ दुरासद—कठिन।

एकोनत्रिंश अध्याय

१६ खर्जादिक—संगीत के षडज आदि सात स्वर।
४६ पारषद—पास रहने वाला, मुसाहब।
१२० कलगी—पक्षियों के पंख जिन्हें मुकुट आदि पर लगाया जाता है।
१२१ आरज-पथ—उच्च कुल की मर्यादा।
१२२ कौर तैं—पंक्ति से, क़तार में।

पदावली

६ कोरन सथिया चीतति—कोनों में स्वस्तिक चिह्न

[1] दे० १०-२५-१६

चित्रित करती है।

४ गौरी—एक राग।

१०७ उरप तिरप—नृत्य का एक भेद।

१२० हस्तक—ताली।

१२८ मड़हन—मुँडेरियों पर।

१३२ हटरी—दिवाली के अवसर पर मिट्टी का बनाया हुआ एक छोटा सा मकान जो विशेष रूप से सजाया जाता है।

१५१ रमकि रमकि—पेंग मार कर।

१८४ भुरकौ—छिड़का हुआ।

२३४ अनाघात—"संगीत के अंतर्गत ताल विशेष। वह विराम जो गायन में चार मात्राओं के वाद आता है और कभी कभी सम का काम देता है" (हिंदी-शब्द-सागर)।

२८५ निस्तम—अंधकार रहित, उज्वल।